आदिकालीन काव्यों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन

शोध-प्रबन्ध

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

डॉ० राम किशोर शर्मा

रीडर, हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद

— शोधकर्त्री —

सविता यादव

1996

प्राक्कथन

आदिकाल का समय 1000 से 1400 शताब्दी (कबीर से पूर्व) माना जा सकता है । आलोच्य युग में किस रचना को स्थान दिया जाय किनको नहीं इसका निर्धारण करना कठिन है फिर भी भाषा की दृष्टि से जो रचनाएं आदिकाल की सीमा के अन्तर्गत आती है और जिनका वैज्ञानिक रूप से संपादन हो चुका है, उन्हीं काव्यों का ही विशद् विश्लेषण शोध प्रबन्ध में किया गया है । प्रबन्ध के आधार ग्रंथ गोरखबानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो, नामदेव की हिन्दी पदावली, बाबा फरीद की बानियां हैं । इनके अतिरिक्त अन्य रचनाओं का भी परिचय प्रबन्ध में दिया गया है ।

प्रस्तुत अध्ययन प्रारम्भ करने से पूर्व वर्णनात्मक भाषा विज्ञान के आधार पर सर्वप्रथम कार्डों पर ध्वन्यात्मक सामग्री ली गई जिनकी संख्या बहुत अधिक हो गई उनमें से कुछ प्रमुख सामग्री लेकर लिखने का प्रयत्न किया गया है । इस प्रकार संकलित सामग्री को शोध प्रबन्ध में ग्यारह अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

प्रथम अध्याय के अन्तर्गत आदिकालीन कवि और उनकी काव्य रचनाओं एवं भाषा का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है ।

दूसरे अध्याय में आधार ग्रंथ गोरखबानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराजरासो आदि से प्राप्त सामग्री के आधार पर ध्वनिग्रामिक अनुशीलन प्रस्तुत है ।

तीसरे अध्याय में पदग्रामिक अनुशीलन के अन्तर्गत प्रत्यय प्रक्रिया पर विचार किया गया है, जिसमे व्युत्पादक पूर्व प्रत्यय या उपसर्ग तथा परप्रत्यय या परसर्ग की विवेचना की गई है ।

चौथे अध्याय संज्ञा में अन्त्य ध्वनिग्राम के अनुसार मूल तथा व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिक पुलिंग, स्त्रीलिंग, बहुवचन बोधक प्रत्यय, कारक विभक्ति, कारक रचना आदि प्रत्ययों की विवेचना की गई है ।

पांचवें अध्याय के अन्तर्गत विभिन्न सार्वनामिक रूपों, सार्वनिक विशेषण एवं सार्वनामिक क्रिया विशेषणों की चर्चा की गई है ।

छठे अध्याय के अन्तर्गत विशेषण पदों का उल्लेख किया गया है । गुणवाचक विशेषण एवं संख्यावाचक विशेषणों का प्रयोगाधिक्य होने के कारण उनके कुछ विशिष्ट अर्थ सूचक विशेषणों को ही प्रबन्ध में प्रस्तुत किया गया है ।

सातवें अध्याय में क्रिया विधान पर विचार किया गया है । इसके अन्तर्गत सहायक क्रिया, कृदन्तों, काल ़ मूल काल, संयुक्त काल ़ संयुक्त क्रियाएं, प्रेरणार्थक क्रिया, वाच्य प्रयोग आदि के दृष्टान्त प्रस्तुत किये गये है ।

आठवें अध्याय अव्यय में क्रिया विशेषण संबंध सूचक, समुच्चय बोधक, विस्मयादि बोधक अव्ययों के प्रयुक्त रूपों का उल्लेख किया गया है ।

नवें अध्याय के अन्तर्गत सामासिक पदावली के उदाहरण प्रस्तुत किये गये है ।

दसवें अध्याय में पुनरूक्त शब्दों के उदाहरण प्रस्तुत किये गये है ।

ग्यारह अध्याय - उपसंहार ।

शोध कार्य स्वयं में गहन अध्ययन एवं सतत प्रयास का कार्य है । वस्तुत: मन में हिन्दी साहित्य के किसी पक्ष के अनुशीलन की अभिलाषा अध्ययन काल से

ही थी जिसके फलस्वरूप मैंने गुरुदेव माताबदल जायसवाल से अपनी आकांक्षा व्यक्त की । यह उनकी उदारता थी कि उनके निर्देशन में मुझे शोध - कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । भाषा विज्ञान की वैज्ञानिकता के कारण शोध कार्य कुछ जटिल एवं नीरस हो जाता है लेकिन गुरु जी के उचित निर्देशन एवं उत्साहपूर्ण सहयोग से यह दुरूह कार्य सरल होता गया । उनके आशिर्वचन एवं स्नेहयुक्त प्रोत्साहन की प्रेरणा से ही मैं इस कार्य का निर्वाह कर सकी, और मेरा यह शोध - प्रबन्ध उन्हीं के विद्वतापूर्ण सहयोग का परिणाम है । सहृदयता एवं सहायता के स्रोत अपने शोध निर्देशक के प्रति अपनी कृतज्ञता किन शब्दों में ज्ञापित करूँ मै स्वयं नहीं जानती । समय - समय पर अध्ययन की दिशा को आत्मीयता के साथ स्पष्ट एवं प्रखर करने की जो प्रेरणा उन्होंने दी उसे आजीवन विस्मृत नहीं किया जा सकता । लेकिन दुर्भाग्यवश शोध - प्रबन्ध पूर्ण होने से पूर्व ही उनका आकस्मिक निधन हो गया, जो मेरे लिए बहुत बड़ी क्षति थी । तदुपरान्त सहृदय डा0 राम किशोर शर्मा ने इस कार्य को पूरा करने में जो सहायता की वह अविस्मरणीय है । आज शोध - प्रबन्ध के समाप्त होने पर मै स्व0 डा0 जायसवाल की दिव्य आत्मा को हृदय से श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ ।

हिन्दी साहित्य के अनेक विद्वानों की रचनाओं जिनसे मैंने अमिट लाभ उठाया, डा0 गणपति चन्द्र गुप्त, डा0 सुमन राजे, स्व0 कामता प्रसाद गुरु, डा0 राम चन्द्र शुक्ल , डा0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, डा0 भोला नाथ तिवारी, डा0 उदय नारायण तिवारी, डा0 माता प्रसाद गुप्त, डा0 कमल सिंह डा0 राम कुमार वर्मा आदि । इन सबके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ ।

इनके अतिरिक्त मै अपने उन सहपाठी मित्रों एवं बन्धुजनों की उपकृत हूँ जिन्होंने शोध कार्य के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी अमूल्य सहायता प्रदान की ।

शोध कार्य में आधार सामग्री के लिए इलाहाबाद विश्वविद्यालय पुस्तकालय, हिन्दी विभागीय पुस्तकालय, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग संग्रहालय एवं पुस्तकालय प्रयाग से मुझे जो सहायता मिली उसके लिये मै उन संस्थाओं के पदाधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ

टंकण सम्बन्धी कार्यों के लिये मै मदन गोपाल कुशवाहा का आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने सतर्कता पूर्वक यह कार्य सम्पन्न किया ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को परिमार्जित किये जाने के पश्चात् यदि कुछ त्रुटियाँ रह गई हो तो उसके लिये क्षमा प्रार्थिनी हूँ । टंकण सम्बन्धी भूलों को सुधारने का प्रयत्न किया गया है ।

अन्ततः डा० राम किशोर शर्मा के प्रति सादर आभार व्यक्त करती हूँ ।

सविता यादव
सविता यादव

संकेतिका

	संकेत चिन्ह
गोरखबानी	गो०
बीसल देव रास	बी० रा०
पृथ्वी राज रासो	पृ० रा०
नामदेव	ना०
फरीद	फ०
एक वचन	ए०व०
बहु वचन	ब० व०
पुलिंग	पु०
स्त्रीलिंग	स्त्री०
पद	प०
सबदी	स०
आसा महला	आ० म०
राग सूही	रा० सू०

विषयानुक्रमाणिका

विषय	पृष्ठ संख्या

विषय | पृष्ठ संख्या

- - - - - - - - - - - -

अध्याय - 1

आदिकालीन काव्य

आदिकालीन काव्य

हिन्दी साहित्य के विभिन्न इतिहासकारों ने प्रारंभिक काल या आदिकाल (1000 - 1400 ई0) के अन्तर्गत विभिन्न रचनाओं का उल्लेख किया हैं। जहाँ जार्ज ग्रियर्सन ने इस काल के अन्तर्गत नौ रचनाओं का उल्लेख किया है वहीं "मिश्र-बन्धुओं" ने 19 कवियों की विभिन्न रचनाओं को स्थान दिया है। किन्तु आगे चलकर रामचन्द्र शुक्ल ने केवल 12 रचनाओं को ही इस काल में स्थान देना योग्य समझा। जिनमें से चार उनकी ही मान्यता के अनुसार अपभ्रंश में रचित हैं। डॉ0 रामकुमार वर्मा ने शताधिक रचनाओं को स्थान दिया है, तो हजारी प्रसाद द्विवेदी ने पुन: शुक्ल जी की परम्परा के अनुसार केवल आठ- नौं कवियों की ही चर्चा इस काल में की। इतना ही नहीं इसमें से अनेक को उन्होंने अस्तित्वहीन, संदिग्ध और अप्रामाणिक माना है।

इस प्रकार आदिकाल की स्थिति विविधतापूर्ण है यदि एक इतिहास - ग्रंथ में देखें तो यह शताधिक रचनाओं से भरा - पूरा दिखाई पड़ता है, तो दूसरे के अनुसार वह प्रामाणिक रचनाओं से सर्वथा शून्य प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति में आदिकाल के सीमानिर्धारण, नामकरण व साहित्यिक प्रवृत्तियों आदि का निर्णय करना कठिन है, फिर भी हमारे इतिहासकारों व इतिहास प्राध्यापकों का उत्साह एवं साहस प्रशंसनीय है, कि वे बिना इस बात की परवाह किये कि वास्तविकता क्या है? इस काल की वीरगाथात्मकता, चारण प्रवृत्ति एवं ओजपूर्ण शैली का बखान इस आत्म विश्वास के साथ किये जा रहे हैं कि जिससे विद्यार्थियों के मन में इस काल का एक ऐसा काल्पनिक चित्र अंकित हो गया जो वास्तविकता से बहुत भिन्न है।

पर यदि हम इतिहास के नाम पर कोरी कल्पना एवं भ्रामक धारणाओं से

संतुष्ट न होकर वास्तविकता का साक्षात्कार करना चाहते हैं, तो हमें आदिकाल की तथोक्त शताधिक रचनाओं पर पुनर्विचार करके यह देखना होगा कि इनमें से कौन सी हिन्दी की है तथा कौन सी रचना - काल की दृष्टि से आदिकाल की सीमा मे आती है, या नही । अतः इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिये आगे प्रमुख इतिहासकारों द्वारा उल्लिखित रचनाओं पर क्रमशः विचार किया गया है ।

जार्ज ग्रियर्सन द्वारा उल्लिखित रचनाएं

ग्रियर्सन ने नौ कवियों - पुष्य कवि, खुमान सिंह, केदार , कुमार पाल, अनन्यदास, चन्द, जगनिक शार्ङ्गधर एवं जोधराज का उल्लेख किया है । जिन, पुष्य और केदार को उन्होंने स्वयं अनुपलब्ध माना है । इसी प्रकार शार्ङ्गधर की रचना "हम्मीर रासो" अनुपलब्ध है । कुमार पाल कोई कवि न होकर काव्य का नायक है तथा इस काव्य की रचना अपभ्रंश में हुई है । अतः इसे हिन्दी साहित्य में स्थान नहीं दिया जा सकता । अनन्यदास (1710 - 90 विक्रमी) तथा जोधराज (सं॰ 1875 वि0) का समय सत्रहवीं, अठारहवीं, शताब्दी निश्चित हो चुका है । खुमान सिंह " खुमान रासो" के रचयिता न होकर "दलपति विजय " थे, जिनका जीवन काल 18वीं शती सिद्ध हो चुका है । इसके बाद " जगनिक " की भी रचनाएं उपलब्ध नहीं हैं । चन्द (चन्दवरदायी) द्वारा रचित " पृथ्वीराज रासो" के लघुतम संस्करण के शोधित रूप को मूल के बहुत निकट माना जा सकता है ।

अतः इस प्रकार ग्रियर्सन द्वारा उल्लिखित कवियों में से केवल चन्दवरदायी को ही आदिकाल के हिन्दी कवि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है शेष की या तो रचनाएं अनुपलब्ध है, या वे परवर्ती युग की हैं ।

मिश्र बन्धुओं द्वारा उल्लिखित रचनाएं :-

के अन्तर्गत इन 19 कवियों को स्थान दिया है -

पुष्य, अज्ञात कवि (खुमान रासो), नन्द, मसऊद, कुतुबअली, साईदान, अकरम फैज, चन्द, जगनिक केदार कवि, बारदर वेणा, जल्हण, भूपति, नरपति नाल्ह, नल्लसिंह, शार्ङ्गधर, अमीर खुसरो, मुल्ला दाउद, गोरखनाथ।

इनमें से पहले सात कवि तो ऐसे हैं जिनकी रचनाएं उपलब्ध नहीं हैं। शेष में से भूपति को डॉ० रामकुमार वर्मा ने 17वीं - 18वीं शताब्दी का कवि सिद्ध किया है। अकरम फैज भी आधुनिक काल के कवि हैं। साईदान चारण, नल्लसिंह और शार्ङ्गधर जगनिक की भी कोई रचना उपलब्ध नहीं है। मुल्ला दाउद के "चंदायन" का भी रचनाकाल 1436 वि0 प्रमाणित हो चुका है जो आदिकाल की सीमा में नहीं आती। इस प्रकार चन्द, नरपति नाल्ह, गोरखनाथ, अमीर खुसरो को ही आदिकालीन हिन्दी साहित्य में स्थान दिया जा सकता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा उल्लिखित रचनाएं

शुक्ल जी ने बारह रचनाओं को आदिकालीन साहित्य में स्थान दिया है - इनमें " विजय पाल रासो, हम्मीर रासो, कीर्तिलता और कीर्ति पताका ये अपभ्रंश की रचनाएं हैं इन्हें हिन्दी साहित्य में स्थान नहीं दिया जा सकता। इनके अतिरिक्त खुमान रासो, बीसलदेव रासो, खुसरो की पहेलियाँ, विद्यापति की पदावली। इनमें से " जयचन्द्र प्रकाश " जस चन्द्रिका अनुपलब्ध हैं तथा "खुमान रासो " का रचनाकाल 18वीं शती सिद्ध हो चुका है। "परमाल रासो" एवं खुसरों की पहेलियाँ भाषा की दृष्टि से संदिग्ध या परवर्ती प्रतीत होती हैं। विद्यापति भक्तिकाल के कवि हैं। इस प्रकार शुक्ल जी द्वारा उल्लिखित रचनाओं में से पृथ्वीराज रासो को ही आदिकालीन हिन्दी काव्य के रूप में स्वीकार किया

जा सकता है ।

डॉ0 रामकुमार वर्मा द्वारा उल्लिखित रचनाएं :-

सिद्ध साहित्य -

डॉ0 वर्मा ने सिद्ध साहित्य के अन्तर्गत सरहपा, शबरपा, भुसुकुपा, लुइपा, विरूपा, डोम्भिपा, दारिकपा, गुंडरीपा, कुकुरिपा, कमरिपा, कण्हपा, गोरखपा, तिलोपा, शान्तिपा के काव्यों की चर्चा की है । इन कवियों का समय 8वी"-9वी शताब्दी है, जबकि भाषा वैज्ञानिक हिन्दी भाषा का उद्भव 1000 ई0 मानते हैं और फिर इन कवियों की रचनाएं भी मूल रूप में उपलब्ध नहीं हैं,इनके नाम पर जो भी रचनाएं प्रकाशित हुई हैं वे या तो तिब्बती भाषा में अनुदित है अथवा 18वी-12वीं शती की पांडुलिपियों पर आधारित हैं ।

अस्तु, सांकृत्यायन जी की अंतिम धारणाएं इसी मान्यता के अनुकूल हैं कि अपभ्रंश को हिन्दी से भिन्न मानने की स्थिति में सिद्ध कवियों को अपभ्रंश काव्य में स्थान दिया जाना चाहिए न कि हिन्दी काव्य में ।

जैन साहित्य -

डॉ० रामकुमार वर्मा द्वारा उल्लिखित जैन साहित्य को हम दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं -

§1§ जो साहित्य अपभ्रंश में रचित है, और §2§ जो अपभ्रंश - परवर्ती लोक भाषा या प्रारम्भिक हिन्दी में रचित है । प्रथम वर्ग में क्रमश: स्वयं भूदेव, देवसेन, पुष्य, धनपाल, मुनि रामसिंह, अभयदेव , चन्द्र मुनि आदि कवियों की रचनाएं आती हैं, जिनका रचनाकाल 8 वी शती से लेकर 14वीं शती तक है। दूसरे वर्ग में

शालिभद्र सूरि (बाहुबली रास) जिन पद्म सूरि (रेवंतगिरि) अम्बदेव सूरि (संघपति समरा रासा) राजशेखर सूरि (नेमिनाथ फागु) की रचनाओं को स्थान दिया जा सकता है। क्योंकि ये रचनाएं 13वीं एवं 14वीं शताब्दी के अन्तर्गत आती हैं। सामान्यत: स्वीकार किया जाता है कि ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी में अपभ्रंश भाषा एक ओर तो साहित्यकारों द्वारा परिनिष्ठित अपभ्रंश में परिणत हो गयी थी तो दूसरी ओर उसके लोक प्रचलित रूप थे जिसे आचार्य हेमचन्द्र ने "ग्राम्य अपभ्रंश" कहा है, एक नयी भाषा विकसित हो गयी थी जो स्थान भेद से हिन्दी गुजराती, आदि के नाम से प्रसिद्ध है, अत: इस वर्ग की रचनाओं को लोक भाषा हिन्दी की रचना माना जा सकता है।

नाथ साहित्य

नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक गुरु गोरखनाथ माने जाते हैं। डॉ राम कुमार वर्मा ने इन्हें लगभग 1270 में वर्तमान माना है।[1]

नवीन खोजों के अनुसार यही धारणा प्रबल हुई कि गोरखनाथ की रचना 13वीं शताब्दी की रचना है। डॉ० माताबदल जायसवाल ने अपने शोध ग्रन्थ "मानक हिन्दी का ऐतिहासिक व्याकरण" में गोरखनाथ की भाषा पर विशद् विश्लेषण विवेचन करते हुए इनकी भाषा को 10वीं शती के बाद की और कबीर (1400) से पूर्व की भाषा मानते हुए गोरख नाथ को हिन्दी का प्रथम कवि माना है

अत: गोरख नाथ की "गोरख बानी" की आदिकाल की रचना मानने मे कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

1- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : चतुर्थ संस्करण पृ0 - 105.

गोरखनाथ के अतिरिक्त अन्य नाथ पंथी कवियों की वाणी का संपादन आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किया है तथा उन्हें ꠰ नाथ सिद्धों की बानियां मे प्रकाशित करवाया है । इसमें अजय पाल, गोपीचन्द्र, चर्पटनाथ, चौरंगी नाथ, जलन्ध्री पाव, दत्तात्रेय, नागार्जुन, पृथ्वीनाथ, भरथरी, मच्छेन्द्रनाथ आदि 25 साधकों की वाणियाँ संकलित हैं जैसा कि विद्वान सम्पादक ने इसकी भूमिका में स्पष्ट किया है, ये मुख्यत: तीन हस्तलिखित प्रतियों पर आधारित हैं जिनका लिपिकाल क्रमश: सं0 1771 वि0, सं0 1836 वि0 एवं सं0 1855-56 वि0 है । इस संग्रह की रचनाओं की प्रामाणिकता के बारे में भी उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है - " इस संग्रह की रचनाओं की प्रमाणिकता संदिग्ध ····" ।

इनके मूल रचनाकाल के सम्बन्ध में आचार्य द्विवेदी ने अपना अनुमान इन शब्दों मे प्रस्तुत करते हुए लिखा है " इस प्रकार इस संग्रह में जिन नाथ सिद्धों की वणियां संगृहीत हैं उनमें से अधिकांश चौदहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं और थोड़े उसके बाद के । ··· यद्यपि इन वाणियों के रूप बहुत कुछ विकृत हो गये हैं, परन्तु भाषा का कुछ पुराना रूप उनमें रह गया है ।[2]

वस्तुत: डॉ0 द्विवेदी इनके रचनाकाल का सही - सही निर्णय नहीं ले सके । किन्तु आज इनका जो रूप मिलता है वह भाषा की दृष्टि से सत्रहवीं शती से लेकर उन्नीसवीं शती तक का है । अत: आदिकालीन साहित्य में इन्हें स्थान देकर बहुत बड़ी भ्रांति को बनाये रखना होगा ।

1- नाथ सिद्धों की बानियां पृ = 5

2- वही ······· ·· पृ = 25

चारण साहित्य

डॉ॰ वर्मा ने चारण साहित्य के अन्तर्गत जिन रचनाओं का उल्लेख किया है, उनमें से केवल नरपति नाल्ह का " बीसलदेव रास " तथा " पृथ्वी राज रासो " को ही आदिकाल के अन्तर्गत रखा जा सकता है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा उल्लिखित रचनाएं :-

आचार्य द्विवेदी ने " हिन्दी साहित्य का आदि काल " में - हिन्दी रचनाओं के अन्तर्गत खुमान रासो, बीसल देव रास, हम्मीर रासो, विजयपाल रासो और खुसरो की रचनाओं की चर्चा की है, किन्तु उन्हें परवर्ती, परिवर्धित एवं संदिग्ध माना है । अत: आचार्य द्विवेदी द्वारा उल्लिखित रचनाओं में बीसलदेव रास तथा पृथ्वी राज रासो ही आदि काल की रचना सिद्ध होती है ।

डॉ॰ गणपतिचन्द्र गुप्त ने आदिकाल के अन्तर्गत जिन रचनाओं का उल्लेख किया है, वे इस प्रकार है - भरतेश्वर बाहुबली रास, बुद्धिरास, चन्दनबाला रास, जीवदया रास, स्थूलिभद्र रास, रेवन्तगिरि रास, आबूरास, नेमिनाथ रास, गय सुकुमाल रास, जिनपद्मसूरि पट्टाभिषेक रास, पंच पांडव चरित रास, जिनचन्द सूरि फागु, सिरिथूलि भद्द फागु, नेमिनाथ फागु, वसन्त विलास फागु, नामदेव आदि । इनमें से पंच पांडव चरित रास और गौतम स्वामी रास रचना काल की दृष्टि से आदि काल की अंतिम सीमा के बाद का है । वसन्त विलास के रचयिता का पता नहीं है ।

अस्तु, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के अन्तर्गत उन्हीं कवियों की हिन्दी रचनाओं को सम्मिलित किया गया है जिनका भाषा वैज्ञानिक अध्ययन संभव है, और भाषा की दृष्टि से आदिकाल की सीमा में आती है ।

गोरख नाथ

शंकराचार्य के पश्चात् गोरखनाथ हमारे भारत की महान विभूति है। गोरखनाथ ने नाथ सम्प्रदाय की स्थापना की, इनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ कहे जाते हैं। गोरखनाथने अपने युग की समस्त सांस्कृतिक परिस्थितियों को प्रभावित किया। इनका सांस्कृतिक प्रभाव प्रादेशिक सीमाओं को तोड़कर सारे देश में फैल गया। इनके आविर्भाव काल के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी 9वीं-10वीं शताब्दी मानते है। डॉ0 बड़थ्वाल भी इन्हें 11वीं विक्रमी शती में आविर्भूत मानते हैं। इनके माता-पिता और जन्मस्थान के विषय में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है। गोरखनाथ ब्राह्मण वंशी माने जाते हैं, पर आगे चलकर सिद्धों से प्रभावित होकर जाति - पाति छुआछूत आदि का विरोध किया। इनका नाथ सम्प्रदाय बौद्ध और शैव परम्परा का समन्वय उपस्थित करता है। ये अपने युग के सांस्कृतिक दृष्टि से धार्मिक और सामाजिक सुधारक थे।

अत: गोरखनाथ का जन्म वृतान्त रहस्यमय है। "गोरख सिद्धान्त संग्रह " के अनुसार गोरख ईश्वर में अनुरक्त थे। उनका चरित्र अत्यन्त शुद्ध और निर्मल था, स्वयं देवी भगवती उनके चरित्र की परीक्षा लेने मे पराजित हुई थीं। भारत के कोने-कोने मे इनके मतानुयायी पाये जाते है। भक्तिकाल से पूर्व सबसे शक्तिशाली आंदोलन गोरखनाथ का योग मार्ग ही था। भारतवर्ष की कोई भी ऐसी भाषा नहीं है जिसमें गोरखनाथ से संबंधित कहानियाँ न पाई जाती हों इन कहानियों में परस्पर ऐतिहासिक विरोध बहुत अधिक है फिर भी यह बात तो अवश्य है कि गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े नेता व गुरु थे।

गोरखनाथ का कृतित्व

गोरखनाथ की हिन्दी रचनाओं के एकीकरण और सम्पादन का सर्वप्रथम व्यवस्थित प्रयत्न डॉ0 बड़थ्वाल ने किया । उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा के साहित्य परिषद् में कोषोत्सव के अवसर पर 1930 ई0 में व्याख्यान देते समय सबसे पहले नाथ योगियों और उनकी कविता का परिचय दिया जो बाद में लेख के रूप में छपा था और वही उसके बाद उनके निबंध संग्रह योग प्रवाह में संकलित कर दिया । इस लेख में प्रकाशित एवं स्थापित पद्धति की यद्यपि अनेक बातें अब प्रसिद्ध एवं अप्रमाणित हो गई हैं तथापि पं0 तारादत्त जी गैरोला की कृपा से प्राप्त गोरखनाथ की 17 पोथियों का सर्वप्रथम परिचय हमें इस लेख में मिलता है । वे रचनाएं हैं - सबदी, पन्द्रहतिथि, सप्तवार, अभैमात्रा योग, सांख्यदर्शन, प्राण संकोर्तन, आत्मबोध नरवैबोध, काफर बोध,अवलि सिलूक, जाती भौंरावली, रोमावली, साखी, मछीन्द्र गोरखबोध, गोरख गणेश संवाद,गोरखदत्त संवाद । इनमें से कुछ को तो उन्होंने स्पष्ट ही गोरखकृत नहीं माना। पौराणिक व्यक्तियों के साथ होने वाले गोरख के संवादों को उन्होंने शिष्यों की रचना माना ।

इस लेख का व्याख्यान के रूप में प्रस्तुतीकरण दिसम्बर 1930 में किया गया था तदुपरान्त डॉ0 बड़थ्वाल ने सामग्री को व्यवस्थित कर उसे गोरखबानी (संग्रह) नाम से लगभग सन् 1942 में प्रकाशित करवाया । उन्होंने इस संग्रह की भूमिका में यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया कि ये बानियाँ हमारे साहित्यिक और सांस्कृतिक विकास की लड़ी है ।[1] डॉ0 बड़थ्वाल ने इस संग्रह की रचनाओं को 3 भागों में संपादित किया । प्रथम मुख्य भाग में उन्होंने सबदी पद सिष्या दरसन, प्राण संकली, नरवै बोध, ग्यान तिलक, पंच मात्रा नाम की रचनाएं सम्पादित की है ।

1- गोरखबानी , भूमिका , पृ0 11 .

उन्होंने कुल आठ लेखों का संग्रह किया था जिनसे प्रथम भाग की सारी रचनाओं की पुष्टि प्राय: सभी आठ हस्तलेखों से हो जाती है और सबसे पुरानी प्रति में वे सारी रचनाएं उपलब्ध हैं । प्रथम परिशिष्ट में गणेश गुष्टि, ज्ञानदीप बोध ⟨ गोरखदत्त गुष्टि ⟩ महादेव गोरखगुष्टि, सिस्ट पुराण, दया बोध के साथ कुछ पदों का सम्पादन किया गया है । ये रचनाएं संदिग्ध हैं और गोरख पंथियों द्वारा लिखी गई हैं । दूसरे पौराणिक व्यक्तियों के साथ गोरखनाथ का संवाद स्वयं संदेहास्पद है । साम्प्रदायिक मान्यता को देखते हुए तथा हस्तलेखों में भी मिलने के कारण इन्हें संदिग्ध होते हुए भी परिशिष्ट में स्थान दे दिया गया है । इसी प्रकार दूसरे परिशिष्ट में सप्तवार - नवग्रह, व्रत, पंच अग्नि, अष्ट मुद्रा, चौबीस सिद्धि, बत्तीस लच्छन, अष्ट चक्र और रहरासि नामक रचनाएं सम्पादित हैं । उन्होंने 8 हस्तलेखों से कुल 40 रचनाओं की सूची बनाई थी जिनमें से 17 संख्या ⟨ दयाबोध ⟩ तक की रचनाओं के चयन के सम्बन्ध में उन्होंने अपने तर्क दिये हैं, शेष के विषय में विशेषकर दूसरे परिशिष्ट की रचनाओं के बारे में कुछ नहीं कहा है । इनका विषय और स्वरूप सम्प्रदायनुमोदित है । तीसरे में रचनाएं चक्र सिद्धि, पंचाग्नि मुद्रा आदि के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं देती है । वस्तुत: ये रचनाएं गोरख कृत ही है, इसके सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप में कुछ नहीं कहा जा सकता । डा० बड़थ्वाल ने ही " सबदी " को गोरख की सबसे प्रामाणिक रचना माना है क्योंकि वह सब प्रतियों में मिलती है । डॉ० कल्याणी मिल्लक ने गोरख - नाथ की सिद्ध सिद्धान्त पद्धति नाम की प्रसिद्ध रचना के साथ अन्य अनेक रचनाओं तथा अन्य नाथों की रचनाओं का भी सम्पादन एवं प्रकाशन ⟨ 1954 ⟩ किया । गोरख नाथ की हिन्दी रचनाओं के लिए सर्वाधिक उपयोगी संग्रह डा० बड़थ्वाल का ही है ।

"गोरखबानी" की रचनाओं में सर्व प्रथम सबदी संपादित है और प्रामाणिकता में भी प्रथम स्थान उसी का है। यद्यपि इनमें कुल 275 सबदियां सम्पादित हैं। किन्तु डॉ0 बड़थ्वाल ने केवल प्रथम 189 सबदियों को ही (जिन्हें सम्पादक ने साखी कहा है) अधिक प्रमाणिक माना है क्योंकि ये सबदियां सभी प्रतियों में समान रूप से मिलती है। सभी प्रतियों मे सबदियों की संख्या समान नहीं है इनकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई है।

इन 186 सबदियों अथवा साखियों में भी स्वयं डॉ0 बड़थ्वाल दो एक को स्पष्ट ही दूसरों की मानते है।[1] डॉ0 बड़थ्वाल ने ऐसी दो सबदियों की ओर संकेत कर बताया है कि ये क्रमशः किसी लाल नाथ योगी तथा रतननाथ हाजी की हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त भी कुछ पद ऐसे हैं जो रतननाथ हाजी के हैं।[2] किन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ पद्य ऐसे है जो रतन नाथ के कहे हुए हैं, अथवा स्पष्ट ही प्रक्षेप है।

इसी प्रकार के अन्य अनेक ऐतिहासिक पद्यों की परीक्षा की जाय तो अनेक सबदियां प्रक्षिप्त घोषित की जा सकती हैं। सबदी की भाषा के आधार पर प्रामाणिकता का विचार किया जा सकता है। इन सबदियों मे इस समय भाषा का जो रूप हमें उपलब्ध है, वह 10वीं ईसवी शताब्दी का नहीं है। स्वयं डॉ0 बड़थ्वाल ने यत्र - तत्र इस प्रकार की बात कह कर यह स्पष्ट किया है कि ये रचनाएं श्रुति परम्परा से आई हैं। इससे उन्होंने दो तथ्यों को प्रकट किया। एक तो यह कि

- -

1- गोरखबानी भूमिका, पृ0 18

2- वही, मूल सबदी, संख्या 104 तथा 118, पृ0 36 तथा 41.

नाथ वाणी के प्रति शिष्यों और श्रद्धालुयों की श्रद्धा भावना ने इन्हें नष्ट होने से बचाया। दूसरा यह कि स्मृति के कारण उसमें कुछ परिवर्तन या छूट हो जाती है और साम्प्रदायिक आग्रह से कई रचनाएं जुड़ जाती हैं अथवा पुरानी रचनाओं में परिवर्तन परिवर्धन हो जाता है।[1]

गोरखबानी में सर्वप्रथम रचना "सबदी" है। उनमें गोरख नाथ ने दर्शन और अध्यात्म से सम्बन्धित अपने विचार व्यक्त किये हैं। ये मुक्तक हैं, अतः एक सबदी का दूसरी से सम्बन्ध नहीं है। यदि इनकी विषय सामग्री का सामान्य रूप से अध्ययन किया जाय तो इनमें अनेक विषयों का प्रतिपादन दिखाई पड़ता है। वैसे सभी विषय योग और ज्ञान में अन्तर्भूत दिखाई पड़ते हैं तथा साथ ही अनेक सबदियों में विषय की आवृत्ति भी देखने को मिलती है। इनमें परमोपास्य के स्वरूप निर्वचन से लेकर साधना की गंभीर क्रियाओं तक का संकेत उपलब्ध हैं। इनमें सामान्य मानव के संयम पूर्ण जीवन की चर्चा है वहीं व्यर्थ के बाह्य आडम्बर का जमकर खंडन किया है। सहज रहनी और करनी का बड़ा ही स्पष्ट और सरल कथन इसमें मिलता है। इन मुक्तकों मे जहां एक ओर अत्यन्त व्यवहारिक और सरल निरूपण है, वही दूसरी ओर हठयोग प्रधान साधना के अनुकूल संयमों, आचारों और क्रियाओं का भी अनुकूल संयमों, आचारो और क्रियाओं का भी व्याख्यान है। इनमें समाज से, संसार से भागने का नहीं अपितु संसार में संयम के साथ रहने का उपदेश है। शब्द ब्रह्म के गगन में प्रकाशन को ही प्रामाणिक मानकर वेद, किताब शास्त्र, पुराण, कुरान ग्रन्थ आदि को अंधा कहा गया है। हँसने, खेलने को ब्रह्मज्ञान में लीन कर देने का उपदेश दिया गया है। अहिंसा का उपदेश देकर मुसलमानों को सावधान करते हुए हजरत

1- सिद्धसिद्धान्त पद्धति रोड अन्डर वर्कर्स आफ नाथ योगीज इडो0, पृ0 29

मुहम्मद को वास्तविक धर्म का उद्घाटक माना गया है । नादानुभूति एवं परमानुभूति को अनिर्वचनीय कहा गया है, जिसके लिये वाद - विवाद व्यर्थ है । उन्होंने संसार छोड़कर वन में जाने अथवा नगर में माया लिप्त रहने का समर्थन नहीं किया है । निराहार साधन और वृहद्‌ रसाधन दोनों का उन्होंने विरोध किया । काया को कष्ट देकर उसे साधने वाले, पावड़ी पहनकर चलने वाले, लोहे की श्रृंखलाओं से शरीर को बांधकर उसे नियंत्रित करने वाले, नागा, मैसी, इच्छाधारी सभी की आलोचना की और कहा कि वे सभी योग नहीं प्राप्त करा सकते ।[1]

पदों के विषय भी प्राय: वे ही हैं केवल कथन पद्धति में अन्तर है । इन 62 पदों में से अनेक पदों में गोरखनाथ ने सम्बोधनात्मक पद्धति अपनाई है । इन पदों में भी अनेक बिन्दुरक्षा, हठयोग, सहज, रससाधन, प्राणायाम, पिंड ब्रह्माण्डवाद ओंकारासाधन, नाद अनुसंधान, अजपाजाप, अहिंसा, संयम, आचार, गुरुवाद, कुंडलिनी साधन और आत्मसाधन सर्वात्मवाद आडम्बर विरोध, माया निषेध, मानस साधन, विपरीतकरण, मानसिक पूजा जैसे विषयों को अपेक्षाकृत अधिक अनुभूतात्मक ढंग से व्यक्त करने का प्रयास है । इसमें गोरखनाथ की वैयक्तिकता का तत्व अधिक है और साथ ही काव्यात्मकता भी उसमें सबदियों की तुलना में अधिक है ।[2]

शेष रचनाओं में से नखैबोध में योग की 4 अवस्थाओं (आरंभ, घट, परिचय और निष्पत्ति) का परिचय देकर योगानुकूल संयम एवं आचार का उपदेश किया गया है । इनमें कुल 14 छंद हैं । आत्मबोध में सामान्य सबदियों के समान उपदेश तथा अभैभाव जोग में यम नियम का रूपात्मक वर्णन है । ज्ञान तिलक में पुरुषाकार के साथ अन्य योग परक तत्वों का सबदी समान ही वर्णन है । वर्णन अपेक्षाकृत अधिक काव्यात्मक है और रचना भी अधिक साफ है ।

1- इस सम्पूर्ण संक्षेप के लिए गोरखबानी का सम्पूर्ण सबदी भाग दृष्टव्य ।
2- वही ----- । पद भाग पृ0 85-155 तक दृष्टव्य ।

पंच मात्रा मे पंचतत्वों का अध्यात्म योगात्मक विचार है - इनमें चित्त चक्र और अन्य चक्रों का निर्गुण सगुण का भी विचार मिलता है।

<u>गोरखबानी की भाषा :</u>

गोरखनाथ की रचनाओं की भाषा सधुक्कड़ी भाषा है। उनमें अनेक प्रादेशिक भाषाओं या बोलियों का सम्मिश्रण मिलता है। सबदियों की भाषा का मूलाधार खड़ी बोली और राजस्थानी है तथा पदों की भाषा पुरानी ब्रज है।

डॉ0 रांगेय राघव ने प्रयुक्त भाषा के स्वरूप पर उतना विचार नहीं किया जितना रचनाओं की प्रामाणिकता पर उन्होंने रचनाओं का परिचय देकर उसके आधार पर पांच बाते बताई हैं - §1§ उनकी भाषा अन्य सिद्ध कविता जैसी नहीं है। §2§ संस्कृत का प्रयोग भी अपने भ्रष्ट रूप में भी है। §3§ अनेक बोलियों का उसमें पुट मिश्रित है। §4§ कहीं- कहीं उर्दू, फारसी के भी भ्रष्ट रूप मिलते हैं। §5§ सधुक्कड़ी इसमें हिन्दी के अनेक रूप मिले हुए दिखाई पड़ते हैं जाइबा, खाइबा, गाइबा से लेकर करता, कथंता जोई, सोई, होई, सबकी बहुतायत है, जिसको देखकर रूप स्थिर करना कठिन दिखाई देता है। उन्होंने उसमें खड़ी बोली राजस्थानी, ब्रजभाषा के प्रयोगो के दर्शन किये। साथ ही उन्होंने पुरानी बंगला, भोजपुरी, पंजाबी के भी प्रयोगों की ओर संकेत किया है। सारांशत: उनका यह मत है कि भाषा उस युग की कदापि नहीं है जिसमें गोरखनाथ हुए थे। वह 10वीं - 14वीं शताब्दी की प्राचीन खड़ी - ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी का रूप लिए हुए थी।

भारतीय रहस्यवाद में न्यायवाद और अद्वैतवाद को अनेक रूपों में स्वीकार किया गया है। साथ ही इनमें 5 विशेषताएं सामान्यत: पाई जाती है। §1§ मानस की शुद्धता के प्रति तीव्र सावधानी, §2§ संतुष्टि §3§ नैतिक सात्विकता के प्रति जागरूकता, §4§ एकांतिका। रहस्यवाद के भारतीय विवेचकों ने गोरखनाथ को रहस्यवादी माना है। डा0 मोहन सिंह गोरख नाथ की रहस्यवाद तथा मध्ययुगीन

भाषा का साहित्यमेंसर्वप्रथम ऐतिहासिक रहस्यवादी माना था । उन्होंने अपने रहस्यवाद में योग को महत्व दिया । डा0 आर0 डी0 रनाडे ने भी गोरखनाथ को रहस्यवादी माना है । [1]

गोरखनाथ का रहस्यवाद योग परक रहस्यवाद है जिसका मूल हमें काश्मीर शैव मत में दिखाई पड़ता है । इनके रहस्यवाद में हमें निम्न विशेषताएं मिलती है । §1§ नैतिकता और संयम के प्रति दृढ़ आग्रह, §2§ हठयोग साधना की प्राथमिकता । §3§ ज्ञानोपलब्धि लक्ष्य §4§ तर्क, पांडित्य और शास्त्र कथा के विरोध के साथ रहनी पर आग्रह §5§ ऐन्द्रिक सुख का तीव्र विरोध §6§ अद्वैतानन्द की उपलब्धि §7§ माया से औदासीन्य, §8§ पिण्ड ब्रह्माण्ड के एकात्म का सम्पादन आदि । [2]

रहस्यवादी प्रतीक पद्धति और पौराणिक शैली का प्रयोग अपनी अभि-व्यक्ति के लिए करता है । यही रहस्यवादी की भाषा है । रहस्यवादी काव्य में हृदय धर्म को उक्त दोनों पद्धतियों से मोहक आवरण प्रदान किया जाता है । रहस्यवाद धर्म और काव्य में भी एकत्व का दर्शन करता है । इसीलिए इसमें धार्मिक प्रतीकों का सर्वाधिक प्रयोग होता है ।

उनकी रचनाओं में योग सम्बन्धी प्रतीकों का पर्याप्त प्रयोग मिलता है उन्होंने लोक जीवन से भी कुछ प्रतीकों को चुना है । उनके कुछ प्रतीक है :-

गुदड़ी - काया §सबदी §40§ अहुण परण - काया §43§

हीरा - परमतत्व § सबदी §60§ पंचदेव - मन § 112 §

गाय - परमानुभूति § 196§ कागद - उपनिषद् §196§

कामधेनु - परमानुभूति अथवा अध्यात्मिक अनुभूति § 207§ ।

1- पाथवे टु गाड आर॰ डी॰ रनाडे ।

2- विस्तार के लिए दृष्टव्य - नाथ और संत साहित्य पृ0 565 - 577 ·

गाय - आत्मा (पद 20) बछड़ा - खरन्द्र (पद 20)

मृग - मन (26) भील - आत्मा (26)

नगर - शरीर गढ़- शरीर (27)

बाघिन - कामनी (43) सर्पिणी - माया (45)

कंवली - निर्लिप्त (47) पानी - सांसारिक कर्म (47)

ये सभी प्रतीक लोक जीवन से ग्रहण किये गये हैं जिनके अर्थ आध्यात्मिक एवं योग परक है। उनका सम्बन्ध विभिन्न योग क्रियाओं एवं फलों से है।

गोरखनाथ की साधना पर तांत्रिक मत और साधना का गहरा प्रभाव पड़ा है। वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैदिक क्रियाओं की सहायता लेते है। तांत्रिक साधना पद्धति वैदिक साधना और क्रिया का सरल संक्षेप है। भारतीय तांत्रिक साहित्य में वैदिक साहित्य के बहुत से प्रतीक अपनी पूरी अर्थवत्ता के साथ सुरक्षित हैं।

गोरख की हिन्दी रचनाओं की भाषा शैली को विशेषकर उलटवासी रचनाओं की शैली को इसी परम्परा का माना जा सकता है। तांत्रिको में जन सामान्य में प्रचलित गर्हित आर्थवाले शब्दों का प्रयोग कर उनसे अपना विशिष्ट अभिप्रत्य अर्थ लेने की शैली प्रचलित थी। गोरखनाथ की उलटवासियों में ग्रहीत प्रतीक एवं पारिभाषिक शब्द योग के क्षेत्र से अधिक ग्रहण किये गये हैं और लोक जीवन से कम। उन्होंने उन्हें लेकर जो रूपक योजना की है वह भी सांग पुष्ट और दूरगामी नहीं हैं।

पिंड ब्रह्माण्डबाद सम्बन्धी विचार मूलाधार के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार की शब्दावली के माध्यम से उन्होंने अन्तर साधना आंतरिक जीवन

रहस्यसाक्षात्कार परवर्तित जीवन के विभिन्न पक्षों की अभिव्यक्ति की है। संख्यात्मक शब्दों का भी प्रयोग है।

उन्होंने अपनी उलटवासियों मे साधना की विभिन्न क्रियाओं और अनुभूतियों को रहस्यात्मक ढंग से व्यक्त किया है।

गोरखनाथ के कुछ पदों मे शांत रस की झलक मिलती है। जैसे राग असावरी के अन्तर्गत संग्रहीत " तुझ परिवारी हो अणहड़िया दे देवा "। इसमें परिवर्तनशील संसार में विरक्ति तथा नित्य सृष्टिकर्ता, पूर्ण सर्वव्यापक, तत्व के प्रति अनुरक्ति भाव इस पद में स्पष्ट है। अंतिम चरणों में विस्मय का भाव है। कहीं- कहीं अलंकारों की सुन्दर योजना भी देखने को मिल जाती है। तत्वबेलि काया नगर के लोक रूपक इस दृष्टि से दर्शनीय हैं। गोरखबानी में भाणा छन्दों की संख्या अधिक है।

रचना पद्धति और काव्य शैली की दृष्टि से गोरखनाथ की रचनाओं में अनेक रूप मिलते है। उनकी प्राप्त संकली मे दोहा चौपाई शैली का विकसित रूप देखने को नहीं मिलता है।

बीसल देव रास

रचयिता

"बीसल देव रास " एक श्रृंगारिक रचना है । इसके रचयिता -"नरपति नाल्ह" हैं । इनके विषयमेंकोई विशेष जानकारी नहीं प्राप्त होती ।

कुछ विद्वानों ने " बीसल देव रास " के रचयिता " नरपति नाल्ह" को पन्द्रहवीं शती के किसी गुजराती कवि से अभिन्न सिद्ध करने का प्रयास किया है, किन्तु उक्त गुजराती कवि का नाम केवल मात्र, " नरपति" है, उसके आगे "नल्ह" या " नाल्ह" का प्रयोग नहीं मिलता । साथ ही दोनों के रचना - काल में भी पर्याप्त अन्तर है, अतः दोनों को एक नहीं माना जा सकता ।

रचना काल

"बीसल देव रास " के रचना - काल के विषय में विभिन्न पांडुलिपियों में भिन्न - भिन्न प्रकार से निर्देश मिलते हैं जैसे -

﴾क﴿ संवत सहस सतिहत्तराई जाणि ।
नल्ह कबीसरि कही अमृत वाणि ।
गुण गुथ्यउ चउहाण का ।
सुकल पक्ष पंचमी श्रावण मास ।
रोहिणी नक्षत्र सोहामणउ ।
सो दिन गिणि जोडसी जोड़ रास ॥

﴾ख﴿ कुछ में उपर्युक्त अंश की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है -
" संवत सहस तिहुत्तर जाणि ।
या इस प्रकार भी है -

" संवत तेर सत्तोतरइ जाणि ।

§ग§ अनेक के आरम्भ में इस प्रकार निर्देश है -

बारह सै बहोत्तराहां मंझारि,

जेठ बदी नवमी बुधवारि,

नाल्ह रसाइण आरभइ ।

सारदा तुठी ब्रह्म कुमारि ।।

ऐसी स्थिति में किस निर्देश को वास्तविक माना जाय यह समस्या है। इन सबको मुख्यत: दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है §1§ जिनमें जेठ बदी नवमी बुधवार का उल्लेख है तथा §2§ जिनमें श्रावण शुक्ल पंचमी का निर्देश है । दूसरे वर्ग की रचनाओं में संवत में ही प्राय: अन्तर है, महीना व दिन आदि में नहीं , ऐसी स्थिति में यह संभव है कि एक ही संवत विभिन्न लिपिकारों के कारण बदल गया हो, जैसे - " संवत सहस तिहुत्तर जाणि " और " संवत सहस सतिहुत्तरइ जाणि" में केवल एक स का अन्तर है जिससे तिहुत्तर सतिहुत्तर हो गया । दूसरी ओर प्रारम्भ के उल्लेख में बारहसै बहोहत्तर का निर्देश है । राजस्थानी में बहोत्तर का प्रयोग 72 के लिए होता है । अत: इसका अर्थ 1272 लिया जा सकता है । तिथि - बार की दृष्टि से भी इसकी पुष्टि की गई है । ऐसी स्थिति में " संवत सहस तिहुत्तर " का अर्थ 1073 न लेकर 1273 लेना चाहिए जो कि 1272 के समीप पड़ता है । यद्यपि यहाँ अधिक विवेचन के लिए स्थान नहीं है, फिर भी निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि इस काव्य का आरम्भ संवत् 1272 जेठ बदी नवमी बुधवार को हुआ तथा इसकी समाप्ति संवत 1273 श्रावण शुक्ल पंचमी को हुई । इसीलिए कवि ने जहाँ 1272 के साथ " नाल्ह रसायण आरभइ" कहा है, वहा दूसरे के साथ भूतकालिक क्रिया का प्रयोग करते हुए नल्ह

कवीसरि कही अमृत बाणि। " कहा गया है जो इसकी समाप्ति का सूचक है ।
अस्तु दूसरे निर्देश में 1273 से ही 1073, 1077, 1367 आदि बन जाना स्वाभाविक
है । अन्य ऐतिहासिक एवं भाषा वैज्ञानिक साक्ष्यों के आधार पर श्री गौरी शंकर
हीराचन्द ओझा श्री अगरचन्द नाहटा, डा0 उदय नारायण तिवारी प्रभृति
विद्वान भी इसका रचना - काल 1272 वि0 मानने के पक्ष में हैं। कुछ विद्वान इसका
रचना - काल तेरहवीं शती मानते हैं, किन्तु वे " बारह सौ बहोत्तरां " का अर्थ
1272 लगाते है, जो राजस्थानी ज्ञान के अभाव का सूचक है ।

अतः हम इसे निश्चित रूप से 1272 वि0 अर्थात 1215 ई0 की रचना
मान सकते हैं यह दूसरी बात है कि आज इसका मूल रूप उपलब्ध नहीं है जो भी
प्रतिलिपियाँ मिलती हैं वे बहुत परवर्ती एवं परिवर्तित है लेकिन 1400 के बाद की
नहीं हैं ।

बीसल देव रास की ऐतिहासिकता एवं प्रामाणिकता -

बीसल देव रास में तीन ऐतिहासिक व्यक्ति के नाम आते हैं - बीसल देव
राजमती और भोज परमार । बीसल देव (विग्रह राज) नाम के चार शासक
हुए हैं किन्तु राजमती नाम की कोई रानी ज्ञात नहीं है, बीसल देव तृतीय की
रानी का नाम अवश्य सोमेश्वर के बोज्योल्याँ के शिलालेख में राजदेवी मिलता है।
हो सकता है कि " बीसल देव रास " का कवि इसी राजदेवी को राजमती कहता
हो, और उसका बीसल देव तृतीय हो, जिसका समय सं0 1150 के लगभग पड़ता है।
भोज परमार का समय संवत 1112 के लगभग पड़ता है इसलिए रचना के तीनों व्यक्ति
ऐतिहासिक हैं ।

किन्तु इस रचना में जो शेष विवरण आते हैं, ऐतिहासिक नहीं हैं ।
राजमती भोज परमार की कन्या थी, यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है । भोज
कभी भी सोरठ, मंडोवर, गुजरात आदि का शासक था, यह इतिहास से प्रमाणित

नहीं है। अजमेर और जैसलमेर उस समय बसे भी नहीं थे। अजमेर सं0 1165 के लगभग अजयराज के द्वारा बसाया गया था और जैसलमेर ख्यातों के अनुसार जैसल के द्वारा सं0 1212 में किन्तु अन्य साक्ष्यों के अनुसार सं0 1550 के लगभग बसाया गया था। फिर, बीसल देव तृतीय की उड़ीसा - यात्रा भी इतिहास से प्रमाणित नहीं है। इसलिए यह प्रकट है कि रचना का ऐतिहासिक महत्व नगण्य है। वह केवल तीन ऐतिहासिक पात्रों को लेकर प्रचलित किसी किंवदंती पर आधारित अथवा कल्पित रचना है। वस्तुत: कवि का लक्ष्य न तो इतिहास का आख्यान करने का था और न किसी सामायिक नरेश या आश्रयदाता के गौरव का बढ़ा - चढ़ा कर गान करने का था, अपितु मूल लक्ष्यनारी -चरित्र का गुण- गान करने का था, जिसकी व्यंजना बार- बार की है -

हंस गमणि मृगलोयणी नारि।
सीस समारइ दिन गिणइ।
कांइ सिरजी उलगाणांरी नारि।
जाइ दिहाड़ा रे झुरता ॥

भाषा -

हिन्दी भाषा के आदि स्वरूप और उसकी प्राचीनता का बहुत कुछ आभास हमें इस ग्रंथ द्वारा मिलता है।

जिस समय की यह पुस्तक है, उस समय कारकों के वियोगात्मक तथा संयोगात्मक दोनों रूप थे। हां इतना अवश्य था कि वियोगात्मक रूप का विकास हो रहा था और संयोगात्मक रूप लुप्त होता जा रहा था।

बीसल देव रास मे कुछ संज्ञाएं ऐसी आई है जो हमारी भाषा की नहीं

है । जैसे :- नेजा, ताजी, खुरासान इत्यादि । ये शब्द मुसलमानों के संसर्ग से भाषा में आ गये है ।

बीसलदेव रास की भाषा के विषय में यह कहा जा सकता है कि बीसल देव रास की भाषा में खड़ी बोली के कुछ तत्व अवश्य मिलते हैं लेकिन उसकी भाषा प्राचीन राजस्थानी है । इस ग्रंथ मे श्रृंगार रस की ही प्रधानता है वीर रस का किंचित आभास मिलता है ।

आकार तथा वर्ण्य विषय:-

डॉ0 माता प्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित " बीसल देव रास " 128 छन्दों का गीत प्रबन्ध काव्य है । इस दृष्टि से भी देखने पर इन 128 छंदों में कथा- निर्वाह भली भाँति हो जाता है, यह अवश्य है कि कहीं- कहीं पर अस्वीकृत छंदों में से कोई- कोई कथा की पूर्णता अथवा उसमें अन्य प्रकार से चमत्कार लाने में सहायक हो सकते हैं, किन्तु प्रक्षेपों का ठीक यही कार्य भी हुआ करता है । अत: इस प्रलोभन से बचकर आधुनिक पाठालोचन की वैज्ञानिक पद्धति द्वारा मूल के निर्धारित छंदों को स्वीकार किया गया है ।

नरपति नाल्ह कृत " बीसल देव रास " एक श्रृंगारिक रचना है यह एक भावुक कवि की सरस कल्पना से प्रस्तुत ऐसे स्वस्थ प्रणय की कथा है जिसमें जीवन का तरल रस प्रभावित हो रहा है । इस ग्रंथ का नायक बीसल देव है, किन्तु रचना नायिका प्रधान है इसमें राजमती की कोमल भावनाओं को प्रस्तुत किया गया है । रासो काव्यों के सम्बन्ध में यह एक प्रचलित धारणा रही है कि उनमें प्रमुख रस वीर

होता है, जिसके सहायक के रूप में श्रृंगार की भी अवतारणा की जाती रही है। जिनमें युद्ध और राजाओं की वीरता का ही वर्णन अधिक होता था और उनके आश्रित चारण या भाट होते रहे हैं जो उनकी प्रशस्ति में ही रचना करते थे किन्तु बीसल देव रास उनसे अलग रचना है जिसमें श्रृंगार की प्रधानता है और इसका कवि निर्भीक और साहसिक है जिसने तत्कालिक राजा के विषय में ऐसी काव्य रचना की।

इस प्रकार " बीसल देव रास " नायिका प्रधान श्रृंगारिक रचना है और इसमें रासों के सभी गुण विद्यमान हैं। बीसल देव रास में बीसल देव और राजमती के जीवन की एक घटना को पल्लवित किया गया है कथा सुखान्त है। यह रचना अपनी सीमित परिधि में अवश्य ही सरस ललित और कलापूर्ण है।

बीसल देव रास - काव्य परिचय

"बीसल देव रास " एक खंड काव्य है उसमें राजमती एक नव विवाहिता पत्नी के रूप में हमारे सामने आती है जब बीसल देव उसके सामने डींग हांकने लगता है कि -

मो सरिखउ नहीं अवर भूवाल।

इस पर वह कह पड़ती है कि उसे गर्व नहीं करना चाहिये क्योंकि उसके समान अनेक भूपाल हैं, जिनमें से एक तो उड़ीसा - पति ही हैं, जिसके राज्य में उसी प्रकार खाने हीरे उगलती हैं, जिस प्रकार उसके राज्य में साँभर की झील नमक उगलती है।

बस इतनी सी बात पर बीसल देव रूष्ट हो जाता है और बारह वर्ष तक के लिए उड़ीसा जाने और वहाँ से हीरे लाने की प्रतीज्ञा कर बैठता है। इस पर राजमती अपने समस्त स्वाभिमान को तिलांजलि देकर बीसल देव को मनाने का

प्रयत्न करती है किन्तु उसके अनुरोधों का कोई प्रभाव बीसल देव पर नहीं पड़ता और वह उड़ीसा जाने का निश्चय करता है । राजमती की सखियां जब उससे कहती है कि यदि स्त्री चाहे तो उसके अंचल मे बंधा हुआ पति किसी प्रकार उसको छोड़कर नहीं जा सकता है वह कहती है -

सात सहेलीय सुणउ म्हारीय बात ।

कूंपउ बोलि दिखाडिया गात्र । ॥ 58 ॥

राजमती के इस सीमा तक जाने के अनन्तर भी यदि बीसल देव अविचलित रहता है, तो राजमती का उसको मूर्ख कहना और यह कहना कि वह नरपाल नहीं गाहिकपाल है, यथार्थ ही लगता है ।

एक बार ज्योतिषी से कहलवाकर वह ठीक मुहूर्त न होने के बहाने उसे कुछ दिनों तक रोक रखती है कि वह उसे किसी प्रकार उलझा ले किन्तु फिर भी कोई परिणाम नहीं निकलता है, और बीसलदेव उसे छोड़कर उड़ीसा चला ही जाता है । बारह वर्ष के कठोर दिन तरूणी राजमती बड़ी कठिनाई से काटती है और अपने स्त्री जन्म को झींखती है । अब वह पंडित को बीसल देव को लाने के लिए उड़ीसा भेजती है । पंडित उड़ीसा पहुंचकर बीसल देव को राजमती की पत्रिका देता है और उसका संदेश कहता है । बीसल देव उड़ीसा के राजा से विदा लेता है और उड़ीसा से वापस आ जाता है । प्रवास से लौटा हुआ बीसल देव राजमती को मनाने का प्रयत्न करता है राजमती उसकी मूर्खता पर व्यंग्य किये बिना नहीं रहती है और कहती है " हे स्वामी ! तूने घी का तो व्यापार किया, किन्तु खाया तेल ही । कवि उस पुनर्मिलन में भी नायिका की विरह वेदना को नहीं भूलता है - उसकी विरह वेदन नवि जाणइ कोइ । 128

फलतः यह प्रकट हो गया होगा कि यद्यपि रचना में कोई महानता नहीं

है किन्तु जीवन की यथार्थता सरलतम रूप में व्यंजित हो सकी है , पुन: साहित्य में न हमें दूसरी राजमती मिलती है और न दूसरा बीसलदेव ही मिलता है, और इसी में " बीसल देव रास " की सबसे बड़ी सफलता निहित है ।

बीसलदेव के अभिज्ञान को कवि ने जितना वास्तविकोपम बनाने का यत्न किया है वह उसकी दाहिनी आँख के कोरे के तिल तक को बताना नहीं भूलता है । यही बात राजमती के अभिज्ञान के विषय में भी है कि उसकी आकुल बोलने की आदत को बताना कवि नहीं भूलता है ।

एक विचित्र बात जो इस कवि में दिखाई पड़ती है वह है इसकी हास्य या विनोद प्रियता । राजमती ने वर्ष भर का संबल देकर पंडित को भेजते हुए उससे घी अधिक खाने को कहती है जिससे कि वह द्रुत गति से चल सके -

घीय सउण जीमजो जिम पगि हुवइ प्राण । 97 ।

किन्तु पंडित को उदर-पूर्ति ही अधिक प्रिय लगने लगती है, वह खूब खा-पीकर मजे- मजे मे चलता है, और सब भुला देता है जो कुछ राजमती ने उससे कहा था । इसी प्रकार उड़ीसा वर्णन में - जहाँ बैल की पूजा होती है और गाय हल में जोती जाती है, मांड खाया जाता है, और चावल रख लिया जाता है - मांड पीजइ कण राखिजइ । 100

इस प्रकार की विनोद प्रियता हिन्दी साहित्य में बहुत ही कम मिलती है । फलत: बीसल-देव रास अपने ढंग की एक ही रचना है, और इसका कवि भी अपने ढंग का अकेला ही है ।

पृथ्वी राज रासो

रचयिता

पृथ्वी राज रासो लोक काव्य का रचयिता चंद बरदाई प्रसिद्ध है । वह जाति का ब्रह्म भट्ट था और अजमेर दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वी राज (राज्यकाल सं0 1226-1250) तथा काशी - कन्नौज के गहड़वाल राजा जयचंद (सं0 1226-1250) का समकालीन था ।

रचना में कवि चंद दो रूपों में आता है - एक तो कथा के नायक के कवि मित्र के रूप में और दूसरे रचनाकार कवि के रूपमें । चंद बरदिया नाम से कुछ ही स्थलों पर वर्णन है । शेष वर्णनों में वह नायक के कवि मित्र के रूप में ही दिखाई देता है । इसके लिये काव्य मे चंद, कविचंद, कवि,राजकवि, भट्ट चंद, चंद बरदाई, चंडिय, चंह, चंद, कवियन आदि नामों से आता है ।

रचना काल -

पृथ्वी राज रासो में वर्णित संयोगिता स्वयंवर और कयमास वध रासो के प्राचीनतम अंश है । स्वयंवर को यदि कवि की कपोल कल्पना माना जाय तो भी कयमास वध की पुष्टि होती है । "खरतर गच्छ पट्टावली " के उल्लेख से सिद्ध है कि सं0 1236 तक मंडलेश्वर कयमास पृथ्वी राज के दरबार में प्रभावशाली था । " पृथ्वी राज विजय " की रचना के समय भी उसका प्रभाव प्राय: वही था । नाम से स्पष्ट है कि पृथ्वी राज विजय पृथ्वी राज की महान विजय का स्मारक है । यह विजय सन् 1191 में हुई । एक वर्ष बाद यही विजय पराजय में परिणत हो गयी थी । कयमास वध यदि ऐतिहासिक घटना है तो इसे पृथ्वी राज विजय की

रचना के बाद अर्थात सन् 1192 के आरम्भ में रखना होगा । पृथ्वी राज विजय की रचना के बाद अर्थात सन् 1191-1192 के बीच हुयी थी तथा उसके रचयिता को यह   घटना अज्ञात है । अत: रासो की रचना की प्रथम कोटि सन् 1192 में रखी जा सकती है ।

पृथ्वी राज रासो का उल्लेख वि0 सं0 1747 में लिखित " जसवंत उद्योत" में मिलता है ।

तदुपरान्त कवि यदुनाथ कृत " वृत्त विलास " में रासो का उल्लेख मिलता है -

" एक लाख रासो कियो, सहस पंच परिमान ।

पृथ्वी राज नृप को सुजसु, जाहर सकल जिहान ।।

यह उल्लेख 18वीं शताब्दी का है ।उदय पुर के निकट राज्य समुद्र सरोवर के बांध पर उत्कीर्ण "राजप्रशस्ति" महाकाव्य में भी रासो का उल्लेख मिलता है- "भाषा रास पुस्तकेस्य युद्धस्योचितस्तिविस्तर:", इस काव्य का लेखन काल सं0 1718-1732 के बीच हुआ था । पृथ्वी राज रासो की कोई भी प्रति सं0 1600 के पूर्व की नहीं मिलती । अत: मोती लाल मेनारिया का मत है कि इसके पूर्व की प्रतियाँ जाली है ।

रासो के अपभ्रंश वाले पद्य पुरातन प्रबन्ध संग्रह की जिस प्रति में मिले हैं उसका लिपिकाल सं0 1528 है । अत: जिस पुस्तक के ये पद्य होंगे वह निश्चित ही वि0 सं0 1528 से पूर्व रची गयी होगी । इसी संग्रह में कुछ प्रबन्ध ऐसे भी हैं - जिनसे स्पष्ट होता है कि वे सं0 1289 के पूर्व के हैं । पृथ्वी राज रासो भी उन्हीं प्राचीन प्रबंधों में से है, कहना कुछ कठिन है । प्रबन्ध संग्रह में वर्णित ये बातें -पृथ्वी राज ने सात बार सुल्तान को हराकर नहीं छोड़ा या कभी गजनी से कर नहीं उगाहा-

इतिहास सम्मत नहीं है। किन्तु उन छप्पयों की भाषा स्पष्टत: अपभ्रंश है। परन्तु वह टकसाली अपभ्रंश नहीं है जिसका वर्णन हेम व्याकरण में मिलता है। यह उससे कुछ अधिक विकसित और मंजी हुयी है।

इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मूल पृथ्वी राज रासो का रचना काल सन् 1400 के लगभग रखा जा सकता है। संभावना है कि रासो का निर्माण पृथ्वी राज के निर्भीक व्यक्तित्व से प्रेरित होकर पृथ्वी राज के मृत्यु काल वि०सं० 1250 के लगभग प्रारम्भ हुआ होगा। विभिन्न कवियों द्वारा कालान्तर में रासो का विकास होता रहा। एवं वि० सं० 1660 से इसकी प्रतियां मिलने लगी।

पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता एवं प्रमाणिकता

साहित्यकारों और इतिहासकारों के पारस्परिक मतभेदों के परिणाम स्वरूप पृथ्वी राज रासो की प्रामाणिकता संकट में पड़ चुकी है। इतिहास के अन्वेसकों को जब शिलालेख आदि साधन प्राप्त हुए तो रासो के साथ उसका वैषम्य भी उन्हें दिखाई पड़ा। रासो की भाषा ने इस संदेह को पुष्ट किया क्योंकि कहीं-कहीं वह 13वीं शताब्दी की भाषा से दूर पायी गयी।

रासो की अप्रमाणिकता की चर्चा सर्वप्रथम राजस्थानी इतिहासज्ञ श्यामलदास ने चलाई।

तदनन्तर मोहन लाल विष्णु लाल पंड्या ने पृथ्वी राज रासो को प्रामाणिक सिद्ध करने के लिए एक संरक्षा छपवाई। नागरी प्रचारिणी सभा काशी से रासो का संस्करण भी प्रकाशित करवाया। इस प्रकार प्रामाणिकता अप्रामाणिकता को लेकर उठने वाले विवादों के दो पक्ष हो गये हैं।

एक पक्ष रासो को प्रामाणिक मानता है । इसके समर्थक मोहन लाल पंड्या, मिश्रबंधु तथा मथुरा प्रसाद दीक्षित हैं । दूसरा पक्ष रासो को अप्रामाणिक सिद्ध करने वालों का है इस पक्ष के समर्थक गौरी शंकर हीरा चंद ओझा सहित श्यामल दास, मुरारिदान हैं । इनके अनुसार चंद नाम का कोई कवि पृथ्वीराज के दरबार में नहीं था, न उसने रासो लिखा ।

इन दोनों के अतिरिक्त एक तीसरा पक्ष भी है जो यह मानता है कि पृथ्वीराज के दरबार में कवि चंद कवि था और उस ने रासो लिखा परन्तु मूल रासो अब प्राप्त नहीं है । वर्तमान रूप बहुत परिवर्तित हो चुका है । इसके पक्षधर हैं - मुनि जिन विजय, सुनीति कुमार चटर्जी, दशरथ शर्मा और अगर चंद नाहटा ।

संयोगिता रासो की नायिका है । इसका सामान्य निर्देश पृथ्वीराज विजय में मिलता है । उसके पिता जयचंद और पृथ्वीराज का वैमनस्य इतिहासानुमोदित एवं तत्कालीन राजनीतिक स्थिति के अनुकूल है । हाँ स्वयंवर तथा अपहरण की घटना कवि के बुद्धि कौशल की उपज प्रतीत होती है ।

काव्य का पूरा एक सर्ग कयमास की कथा से संबंधित है । इसमें कहा गया है कि वह पृथ्वीराज का प्रधान आमात्य था । पृथ्वीराज विजय में वह पृथ्वीराज के मंत्री के रूप में वर्तमान है । कयमास के पृथ्वीराज के प्रधान आमात्य होने तथा पृथ्वीराज द्वारा उसके निकाले जाने की एक कथा पुरातन प्रबन्ध संग्रह के पृथ्वीराज प्रबन्ध में है । फलत: कयमास का पृथ्वीराज का आमात्य होना ऐतिहासिक प्रतीत होता है किन्तु रासो में उसके वध की जो कथा आती है वह इतिहास सम्मत नहीं है, सम्भवत: वह कवि की कल्पना है ।

रासो के प्रस्तुत संस्करण में पृथ्वी राज और शहाबुद्दीन के बीच हुए

अन्तिम युद्ध का वर्णन है । यह युद्ध सर्व सम्मत से ऐतिहासिक घटना है ।

अत: पृथ्वी राज रासो पूर्ण रूप से ऐतिहासिक रचना नहीं है कुछ ऐतिहासिक घटनाओं और कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों के नामों को काल्पनिक रूपकों का ताना - बाना पहनाकर प्रस्तुत कर दिया गया है । मूल ऐतिहासिक है, विस्तार काल्पनिक । इतना तो सिद्ध है कि रासो का कवि यदि पृथ्वीराज का समकालीन नहीं था, तो उसके पीछे का भी नहीं था । रचना का उद्देश्य कथा नायक का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन था, जिसके लिये, सुलभ सामग्री का कवि ने उत्तरदायित्व तथा परम कौशल के साथ उपयोग किया है ।

पृथ्वीराज रासो की भाषा

पृथ्वीराज रासो में इस आशय का एक छन्द है कि इसमें षड्भाषा का प्रयोग मिलता है -

" छंदोमध्य सुविधमान विहतो ररस्स भाषा छवो" 5/7

षड्भाषा परम्परा के अन्तर्गत संस्कृत, प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्रंश को सम्मिलित किया गया था । रासो की भाषा के विश्लेषण से ज्ञात होगा कि षड्भाषा इस काव्य की प्रकृति नहीं है । वरन् मात्र अलंकरण है ।

पृथ्वीराज प्रबन्ध के अन्तर्गत रासो के पद्यों के मिलने के बाद यह धारणा बन गयी है कि मूल रासो अपभ्रंश में रहा होगा । संभवत: चंद की देश्य मिश्रित अपभ्रंश उत्साही जैन मुनियों के हाथ कुछ शुद्ध होकर विशुद्ध अपभ्रंश बन गयी है । अलिखित काव्यों की भाषा सदा एक सी नहीं रहती । रासो के गेय होने के प्रमाण संगीत ग्रन्थ कल्पद्रुम में मिलते हैं । रासो की भाषा बहुत परिवर्तित हो चुकी है ।

मेळिआ, जित्तिया, बुल्यो, मोक्ले जैसे राजस्थानी शब्दों की उपस्थिति से कुछ विद्वान इसे डिंगल या पुरानी राजस्थानी की रचना मानते हैं। किन्तु डा० टेसिटोरी ने पुरानी पश्चिमी राजस्थानी की भाषा संबंधी जो दस मुख्य विशेषताएं बतायी है उनमें से कोई भी रासो में नहीं मिलती ।

गार्सां द तासी, बीम्स, ग्रियर्सन, सुनीति कुमार चटर्जी, धीरेन्द्र वर्मा, नरोत्तम दास स्वामी आदि विद्वानों ने एक स्वर में रासो की भाषा को प्राचीन पश्चिमी हिन्दी अथवा व्रजभाषा कहा है। परन्तु व्रज भाषा का जो स्वरूप स्पष्ट है उससे रासो की भाषा में कोई साम्य नहीं है। रासो की भाषा उकारबहुला है। जब कि व्रज भाषा औकारान्त है। व्याकरणिक दृष्टि से रासो की भाषा में नव्य भारतीय आर्य भाषा की उदयकालीन विश्लेषणात्मक अवस्था का आरम्भ मात्र मिलता है।

इस प्रकार रासो की भाषा न अपभ्रंश है न डिंगल, न पुरानी हिन्दी या पुरानी व्रज भाषा। वह पूर्वी राजस्थानी के निकट है जिसे पिंगल कहा जाता है परन्तु यह पिंगल होते हुए भी प्राकृत पैंगल (14 श०) की भाषा से कुछ अधिक विकसित है। इसमें प्राकृत अपभ्रंश के रूढ रूपों के अवशेष कम हैं, नव्य भारतीय आर्य भाषा के रूप अधिक हैं।

आकार तथा वर्ण्य विषय

भाषा साहित्य के आधुनिक इतिहास लेखक जब रासो की घटनाएं अशुद्ध पाते हैं तब यह कहते है कि मूल रासो का आकार छोटा होगा और पीछे से कवियों ने उसे बढ़ा दिया होगा। परन्तु इस कथन को झुठलाते हुए चंद वरदाई के वंशधर कवि जदुनाथ का " वृत्तविलास" (सं० 1800 के लगभग) सामने आ जाता है।

उसमें कवि ने अपने वंश का परिचय देते हुये लिखा है कि चंद ने 10500 श्लोक के परिमाण का पृथ्वीराज के चरित्र का रासो बनाया । जदुनाथ के पास अपने पूर्वज का मूल ग्रन्थ अवश्य रहा होगा जिसके आधार पर उसने उक्त घोषणा की होगी ।

मूल अपभ्रंश रासो इस समय अनुपलब्ध हैं । आरम्भ में रासो के 40,000 श्लोकों वाले वृहद रूप की ओर विद्वानों का ध्यान गया था । श्याम सुन्दर दास और मोहन लाल विष्णुलाल पंड्या ने 1904-1912 में नागरी प्रचारिणी सभा से इस रूपान्तर को प्रकाशित किया । कई वर्षों तक इसी के आधार पर रासो की ऐतिहासिकता को लेकर विचार विमर्श चलता रहा । कुछ समय बाद उसके अन्य रूपान्तर भी सामने आये । सन् 1938 में मथुरा प्रसाद दीक्षित ने असली पृथ्वी राज रासो के मध्यम रूपान्तर के एक समय को लाहौर से प्रकाशित किया । इसमें लगभग 10,000 श्लोक है । सन् 1939 में 4000 श्लोक वाले एक तीसरे रूपान्तर की ओर दशरथ शर्मा ने आलोचकों का ध्यान आकर्षित किया । रासो के चौथे रूपान्तर का अंशतः सम्पादन " राजस्थान भारतीय " में श्री नरोत्तम दास स्वामी ने किया है ।

डा0 माता प्रसाद गुप्त ने सपरिश्रम परीक्षण के बाद बताया है कि वृहद तथा मध्यम रूपान्तरों में 47 स्थानों में से मात्र 16 स्थानों पर ही बलाबल संबंधी समानता है । मध्यम और लघु में 51 स्थानों में से 24 स्थानों में विषमता है । यदि छोटे रूपान्तर वास्तव में संक्षिप्त होते तो ऐसी विषमता न होती । यह विषमता स्पष्टतः परवर्ती कवियों की कृपा है । समय - समय पर अनेक काव्य श्रोतस्विनिया इसमें आ मिली हैं और इसमें इतना विलीन हो चुकी हैं कि मुख्य स्रोत को ढूंढना कठिन हो रहा है ।

डा0 माता प्रसाद गुप्त ने प्रथ्वी-राज रासो के लघुतम रूपान्तर को मूल रूप के समीप अनुमानित करते हुए लिखा है कि मंगलाचरण और कथा की एक संक्षिप्त

भूमिका के अनन्तर जयचंद के राजसूय और संयोगिता के पृथ्वी राज संबंधी प्रेमानुष्ठान विषयक विवरणों से रचना प्रारम्भ हुयी होगी । तदनन्तर उसमें मंत्री कयमास के वध, पृथ्वी राज के कन्नौज गमन, संयोगिता परिणय, पृथ्वीराज जयचंद युद्ध और दिल्ली आकर पृथ्वी राज संयोगिता के केलि विलास की कथाए उसके पूर्वार्द्ध की सृष्टि करती रही होगी । उत्तरार्द्ध में उस केलि विलास से चंद के द्वारा किये गये पृथ्वी राज के उद्बोधन शहाबुद्दीन पृथ्वी राज के युद्ध तथा शहाबुद्दीन और पृथ्वी राज के अंत की कथाएं रही होगी । सम्पादित प्रति में इसी आधार पर गुप्ता जी ने अध्याय विभाजन किया है ।

इस प्रकार "पृथ्वीराज रासो" चरित काव्य तो है ही, वह रासो या रासक काव्य भी है । हेम चंद्र ने काव्यानुशासन में रासक को गेय रूप माना है । रासो एक सालंकार युद्ध बद्ध कथा है । जिसका मुख्य विषय नायक की प्रेमलीला, कन्या हरण, और शत्रु पराजय है । जहां तक अनुमान शक्ति के प्रयोग का अवसर है ऐसा प्रतीत होता है कि मूल रासो में इन्हीं बातों का विस्तार रहा होगा । संयोगिता की प्राप्ति ही रासो कार का चरम उद्देश्य जान पड़ता है । प्रेम की बड़ी सुकुमार योजना हुई है । युद्ध का वर्णन इस प्रेम प्रसंग को प्रगाढ़ बनाने के लिये आया है । सरदारों की मृत्यु की सूची बढ़ाने के लिये नहीं किन्तु कहीं-कहीं युद्ध का रंग इतना गाढ़ा हो गया है कि प्रेम का चित्र उसमें डूब गया है । आरम्भ प्रेममय है अन्त युद्ध मय । कथा दुखान्त है ।

पृथ्वी राज रासो - काव्य परिचय

आलोच्य ग्रंथ के माध्यम से " पृथ्वी राज रासो " का जो स्वरूप हमारे समक्ष है, वह एक अच्छे, प्रयत्न से लिखे गये, सर्गबद्ध रासक काव्य बीर काव्य का है। काव्य मे 12 सर्ग हैं । " मंगलाचरण और कथा की भूमिका " नामक प्रथम सर्ग संस्कृत

में है । यह अंश प्रक्षिप्त जान पड़ता है । दूसरा सर्ग " जयचंद का राजसूय और संयोगिता का प्रेमानुष्ठान " है जिसमें पृथ्वी के अनेक राजाओं को जीत कर जयचंद के राजसूय यज्ञ करने तथा संयोगिता के पृथ्वी राज के वरण करने का संकल्प लेने की कथा है । कैमास वध वाली प्रमुख घटना तीसरे सर्ग " कयमास वध" में आती है । पृथ्वीराज की अनुपस्थिति में उसकी कर्नाटी दासी पर अनुरक्त होकर कयमास एक रात उसके कक्ष में पहुंच जाता है । जिसकी सूचना मिलने पर वह कयमास और दासी को मार कर गढ्ढे में गड़वा देता है । चौथा सर्ग है "पृथ्वीराज का कन्नौज गमन" इसमें तथा पांचवें सर्ग " पृथ्वीराज का कन्नौज में प्राकट्य" में कवि को नगर वर्णन, सभा वर्णन, पृथ्वी राज की विजय गाथा वर्णन का अवसर मिल गया है । चंद तथा पृथ्वीराज दोनों छद्म वेश में रहते हैं किन्तु अन्त में जयचंद उन्हें पहचान लेता है और उन्हें बन्दी बनाने की आज्ञा देता है । " संयोगिता वर्णन" नामक छठें सर्ग में युद्ध की पृष्ठभूमि में पृथ्वी राज संयोगिता से विवाह करता है और विवाहोपरान्त उसे छोड़ कर अपने सामंतों में आ जाता है । किन्तु सामंतों के समझाने पर वह विरह व्याकुल संयोगिता को लेकर वापस आ जाता है ।

" पृथ्वी राज - जयचंद युद्ध ﴾ पूर्वार्द्ध ﴿" तथा पृथ्वीराज जयचंद युद्ध ﴾उत्तरार्द्ध﴿ सातवां और आठवां सर्ग है । पूर्वार्द्ध में पृथ्वी राज और संयोगिता के दिल्ली की ओर प्रस्थान करने तथा उसके वीरों तथा जयचंद के पक्ष के वीरों के बीच घमासान युद्ध का वर्णन है । उत्तरार्द्ध में युद्ध की भयंकरता क्रमश: बढ़ती जाती है । अंतत: पृथ्वी राज दिल्ली पहुंच जाता है । नवासर्ग "पृथ्वीराज का केलि विलास" में छ: छंदों में कवि ने सुन्दर ढंग से षडऋतु वर्णन करते हुए नायिका के प्रेम अनुरोधों का उल्लेख किया है । अत: दसवें सर्ग में " पृथ्वीराज का उद्बोधन" है ।

"शहाबुद्दीन – पृथ्वीराज युद्ध " इस ग्यारहवें सर्ग में दोनों राजाओं के बीच हुए दूसरे युद्ध का वर्णन है । अन्तिम सर्ग " शहाबुद्दीन तथा पृथ्वी राज का अंत" । इसमें पृथ्वी राज को गजनी ले जाकर नेत्रहीन कर देने का वर्णन है । यह समाचार जब चंद को मिलता है तो वह अपने आश्रय दाता की मुक्ति के लिये विचलित हो जाता है । वह पृथ्वीराज को तैयार करता है और उसी के द्वारा सुनियोजित ढंग से बिना फल के बाण से शहाबुद्दीन का अन्त करवा देता है । इसके बाद पृथ्वी राज भी मृत्यु को प्राप्त हुआ ।

रचना की अंतिम पंक्तियों में कवि ने लिखा है कि –

" रासउ असंभु नव रस सरस्न छंदु चंदु किंय अभिअसम ।
श्रृंगार वीर करूणा विभछ भय अद्भुत्तह संत सम ।।

अर्थात यह अपूर्व रासों नवरसों से सरस है, इसके छंदो को चंद ने अमृत के समान किया है, और यह श्रृंगार, वीर, करूणा, वीभत्स, भय,अद्भुत तथा शान्त रसों से युक्त है । कवि का कथन अक्षरशः सत्य है । संपूर्ण काव्य का अंगीरस वीर है । अन्य रस यथा स्थान अंग बनकर आए हैं ।

नामदेव

महाराष्ट्र साहित्य के प्रसिद्ध सन्त नामदेव का जन्म नरसी वमनी ﴾सतारा﴿ में सन् 1270 ई0 में हुआ था । जन्मकाल के विषय में विद्वानों में मतभेद है । डॉ0 रनाडे के अनुसार संत नामदेव तथा ज्ञानेश्वर समकालीन थे । नामदेव जी दमशती नामक दर्जी के पुत्र थे इसी से इनकी जाति छीपा मानी जाती है । इनका विवाह राजाबाई से हुआ था । जिनसे चार पुत्र हुए – नारायण, महादेव, गोविन्द और विट्ठल । नामदेव की 80 वर्ष की अवस्था में ﴾ सन् 1350 ई0﴿ मृत्यु हो गयी ।

नामदेव हिन्दी में कवि और संत के रूप मे मान्य हैं। निर्गुण सम्प्रदायी महान संत नामदेव को कबीर के पूर्व संत सम्प्रदाय की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने का श्रेय प्राप्त है । ये विट्ठल के उपासक थे - इस उपासना पद्धति में नामस्मरण का विशेष महत्व है । विट्ठल सम्प्रदाय का उद्भव लगभग 1209 ई० के आस - पास दक्षिण में पंढरपुर में हुआ था । जिसके प्रबल समर्थक कन्नड़ संत पुण्डलीक है । विट्ठल सम्प्रदाय शैव और वैष्णव का मिश्रण है । पंढरपुर की शिवलिङ्ग को शीश पर चढ़ाये विष्णु की मूर्ति इसका प्रतीक है । इसी मूर्ति को विट्ठल कहते हैं । जो सर्वव्यापी ब्रह्म के रूप में माने जाते है । 8वीं शताब्दी के शैव धर्म तथा 11वीं शताब्दी के वैष्णव धर्म दोनों का सामान्यजस्य विट्ठल सम्प्रदाय में हुआ - जिसके सबसे बड़े संत नामदेव जी हैं ।

कृतित्व

हिन्दी साहित्य में कवि के रूप में माने जाने वाले संत नामदेव के काव्य मे सरलता और सुबोधता दोनों का सुन्दर सम्मिश्रण है । सत्य, भक्ति, विश्वास, आत्म समर्पण तथा लोकोत्तर आनन्द तथा दृश्य का स्पन्दन उसमें देखा जा सकता है । उनके अभंग जनता में प्रेम से गाए जाते है । अभंगों के कारण ही उनका यश जीवन काल में ही काफी फैल चुका था । वे मराठी तथा हिन्दी के समान रूप से अधिकारी कवि थे । मूर्ति पूजा सम्बन्धित रचनाएं , परम्परा से रहित रचनाएं एवं उत्तरकालीन रचनाएं - यही तीन तरह की उनकी रचनाएं निर्गुण विचारधारा से ओत प्रोत हैं । डॉ० मौर्य ने नामदेव की हिन्दी कविता नामक रचना प्रकाशित की है, जिसके आधार पर प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में नामदेव की भाषा का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

भाषा

वैसे तो अभी तक नामदेव की पाण्डुलिपि अप्राप्य ही है । कुछ पद सिक्खों के गुरु ग्रन्थ साहब तथा कुछ आप्टे द्वारा संकलित पदों में मिलते हैं । चूँकि गुरु ग्रन्थ साहब के पद सन् 1605 ई0 के लगभग के है, अतः उनमें थोड़ा बहुत अन्तर होना स्वाभाविक भी है । नामदेव में तत्कालीन देहलवी का वह रूप है जो महाराष्ट्र में प्रचलित था ।

सामान्य बातें -

भाषा मे संस्कृत के - वर्णमाला के प्राय: सभी स्वर तथा व्यंजन विद्यमान है । किन्तु ऋ के स्थान पर रि, श के स्थान पर स, ष के स्थान पर ख आदि का प्रयोग मिलता है ।

1- शब्दान्त की " अ" ध्वनि प्राय: "उ" में परिवर्तित हो गई है - संसारु, वेदु आदि ।

2- शब्दान्त " अ" का "इ" में परिवर्तित हो गया है । अ के स्थान पर उ , क के स्थान पर ग , न के स्थान पर ण तथा य के स्थान पर ज का प्रयोग मिलता है खान - इस्थान ।
विभक्तियों में - सप्तमी के लिए इ, ए, ओ, प्रत्यय पाये जाते हैं - मन में - मनि, अकाश में अकासे आदि ।

कहीं - कहीं सम्बन्ध कारक में च का प्रयोग मिलता है । क्रिया प्रत्यय में भूतकालिक " इल " का आगम ही क्रिया प्रत्यय में नामदेव की भाषा में कृत्रिमता नहीं है । नामदेव जी ने खड़ी बोली का अन्तर्प्रादेशिक रूप अपनाया था । वे समान

रूप से हिन्दी और मराठी में कविता लिख सकते थे ।

भाषा पाण्डित्य का प्रदर्शन उनका लक्ष्य न था । अत: कबीर की तरह भाषा में वैविध्य भी है । सम्पर्क में आने वालों की भाषा का प्रयोग बिना हिच-किचाहट के उन्होंने किया ही । विदेशी शब्दों का प्रयोग भी उनकी भाषा में पाये जाते हैं - उनके ग्रन्थों की भाषा से तत्कालीन खड़ीबोली के उस रूप का आभास मिलता है जो उनके समय मे मध्यदेश और पंजाब में विकसित हो रही थी ।

बाबा फरीद

बाबा फरीद का पूरा नाम शेख फरीदुदीन मसूद गंजशंकर था । परन्तु उन्हें शेख फरीद गंजशंकर के नाम से ही प्रसिद्धि प्राप्त है । फरीद का तात्पर्य " अनुपम " तथा गंजशंकर - " मधुरता के संग्रह " को कहते हैं । इनकी उस उपाधि से सम्बन्धित कई रवायतें प्रसिद्ध हैं । इनकी माँ बीबी कुरसुम खातून बिदुषी महिला थीं वे धर्म परायणा तथा भक्त थीं । इनके पिता शेख जमालुद्दीन थे । बाबा फरीद का जन्म ईसवी सन् 1173 में हुआ । उनका बचपन का नाम फरीदुन मसूद था । इनके अजीजुद्दीन , शेख नजीबुद्दीन मतवक्कल दो भाई थे तथा बीबी हाजरा उर्फ जमीला बहन थीं । इन्हें जन्मजात वली के रूप में माना जाता था । इनके विषय में कई आश्चर्यजनक घटनाओं का जिक्र आता है ।

बाल्यावस्था में ही बाबा फरीद पिता के वात्सल्य से वंचित हो गए । अत: लालन - पालन माँ के ही आश्रम में हुआ । शिक्षा - दीक्षा का सुचारू प्रबन्ध था मुल्तान में मौलाना मिनहाजुद्दीन से उन्होंने कुरान - हदीस तर्क और दर्शन का ज्ञान प्राप्त किया । ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी ने फरीद की विलक्षणता

से प्रभावित होकर अपना शिष्य बना लिया । ईरान, अफगानिस्तान, सीरिया, मक्का, मदीना, बगदाद आदि मुस्लिम प्रदेशों का भ्रमण 18 वर्षो तक करते रहे । भ्रमण में मिलने वाले व्यक्तित्व सम्पन्न लोगों का इन पर काफी प्रभाव पड़ा और इनका दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक हो गया । उनमें मानवीय विज्ञान, अनेक भाषा आदि की समझ भी आ गई ।

विदेश से वापस आने पर कुछ दिन तो अपनी माँ के साथ खोतवाल गाँव मे निवास किया तदनन्तर लाहौर होते हुए अजोधन § पाकपाटन § गए और स्थायी रूप से यही रहने लगे यह स्थान समृद्धिपूर्ण था । बाबा फरीद के निवास के कारण ही यह स्थान दरवेशों का नगर बन गया । फरीद की माँ की मृत्यु हिंसक जानवर द्वारा हुई । फरीद की प्रसिद्धि से धार्मिक क्षेत्र में विरोध भी हुआ ।

कृतियाँ

बाबा फरीद उन प्राचीन सूफी संतों मे है जो हिन्दू मुसलमान दोनों में समान रूप से समादृत थे । जन सामान्य से अधिक परिचय था । पश्चिमी पंजाब में जन्म लेने से और अजोधनवासी होने से बाबा फरीद पश्चिमी पंजाब अथवा प्राचीन मुल्तानी से परिचित थे । " गुरु ग्रन्थ साहब" में इनकी बानियाँ संग्रहीत हैं । ऐसा कहा जाता है कि दो फरीद हुए हैं - एक बाबा फरीद गंजशकर हैं, जिनका अविर्भाव तथा रचना काल 12-13वीं शती में आता है और दूसरे फरीद जो इन्हीं के वंशज है। लेकिन आधुनिक खोजों के आधार पर अधिकांश विद्वान मानते हैं कि भाषा चिंतन-दर्शन - साधना के दृष्टिकोण से गुरु ग्रन्थ साहब में संग्रहीत बानियाँ एक ही फरीद की हैं । इन बानियों मे आशा महला में 13 श्लोक है, राग सूही 1 में 7 छन्द है, राग सूही 2 में 2 छन्द हैं । इनके अतिरिक्त बाबा फरीद के 128 श्लोक या दोहे हैं ।

भाषा

भाषा के प्रभाव के दृष्टिकोण में इनकी भाषा को प्रभावित करने वाले दो मुख्यस्रोत हैं। पश्चिमी पंजाब की मुल्तानी और पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी पंजाब में फैली प्रचीन देहलवी। सामान्यतया इनकी भाषा को प्राचीन मुल्तानी या प्राचीन लहँदा कहा जाता है, किन्तु गंभीरता से देखने पर ज्ञात होता है, कि फरीद की बानी की भाषा वह अन्तर्प्रान्तीय भाषा है जो पश्चिमी तथा पूर्वी पंजाब और तत्कालीन दिल्ली-अजमेर सूबे में प्रचलित थी। इसी भाषा को अमीर खुसरो ने अपने नूहसिपहर नामक फारसी ग्रन्थ मे "देहलवी" कहा है। इस तरह फरीद की भाषा वही है, जिसे प्राचीन खड़ीबोली या देहलवी कहा जा सकता है तथा जिसे गोरखनाथ ने अपने उपदेशों में प्रयुक्त किया था। उसमें मुल्तानी और पंजाबी का प्रभाव अवश्यक है। अतः फरीद की भाषा को पंजाबी (पूर्वी-पश्चिमी) मिश्रित प्राचीन देहलवी या प्राचीन खड़ी बोली या प्राचीन मानक हिन्दी कहा जायेगा। वियोगी कारक परसर्गों के अन्तर्गत प्राचीन देहलवी या खड़ी बोली के का - के - की तथा प्रचीन पंजाबी (पूर्वी - पश्चिमी) के दा-दे- दी समान रूप से मिलते हैं। फरीद की काव्य भाषा पश्चिमी पंजाबी या मुल्तानी थी, किन्तु का- के - की की प्राप्ति से देहलवी की अन्तप्रान्तीयता सिद्ध हो जाती है।

इसी प्रकार पुरुष - वाचक - उत्तम पुरुष के संबंध वाची सर्वनामों के अन्तर्गत प्राचीन देहलवी या खड़ी बोली के - मेरा - मेरे - मेरी, हमारा, हमारे हमारी रूप ही मिलते हैं। फरीद में अपभ्रंश व्याकरणिक प्रत्यय वहीं है, जो प्रायः तत्कालीन (13वीं शती ई0) सभी हिन्दी प्रदेश, की बोलियों में सर्वनिष्ठ है,

किन्तु कुछ विशिष्ट प्रत्ययों से ही उनकी भाषा की व्याकरणिक मूल प्रकृति की पहचान हो सकती है । इनके काव्य में प्राचीन खड़ीबोली तथा प्राचीन मुलतानी के व्याकरणिक प्रत्यय समान रूप से मिलते हैं, प्राचीन मुलतानी उनकी मातृ भाषा थी । अतएव उसके व्याकरणिक प्रत्ययों का प्रयोग संभाव्य है, किन्तु प्राचीन खड़ी बोली के प्रत्ययों की उपस्थिति दो तथ्यों की ओर संकेत करती है ‡1‡ प्राचीन खड़ी बोली 13वीं शती ई0 मे अन्तर्प्रान्तीय भाषा थी ‡2‡ बाबा फरीद की भाषाओं को पंजाबी मिश्रित प्राचीन देहलवी कहा जा सकता है ।

अमीर खुसरो

मध्य एशिया के लाचन जाति के तुर्क सैफुद्दीन के पुत्र अमीर खुसरो का जन्म 651 हि0 ‡ 1193 ई0 ‡ में एटा ‡ उत्तर प्रदेश ‡ के पटियाली नामक गांव में हुआ था । चंगेज खां के आक्रमणों से पीड़ित होकर शम्सुद्दीन अल्तमश ‡शासन काल 1211 - 1236 ई0 ‡ के राज्य काल में शरणार्थी के रूप में भारत आ बसे थे । खुसरो की माँ इमादुतुल मुल्क की लड़की, एक भारतीय मुसलमान महिला थीं । सात वर्ष की अवस्था में खुसरो के पिता का देहान्त हो गया, किन्तु उनकी शिक्षा दीक्षा में कोई बाधा नहीं आयी । अपने समय के दर्शन तथा विज्ञान में उन्होंने विद्वता प्राप्त की और 20 वर्ष की आयु में वे साहित्यशास्त्र के अच्छे ज्ञाता हो गये और कविता करने लगे थे ।

युवावस्था में अमीर खुसरो की मित्रता हसन देहलवी से हुई । हसन भी फारसी में कविता करते थे । दोनों मित्रों को गयासुद्दीन बलबन के दरबार में स्थान मिला । प्रारंभिक दिनों में खुसरो ने बलबन की प्रशंसा में अनेक कसीदे लिखे ।

जन्मजात कवि होते हुए भी खुसरो में व्यवहारिक बुद्धि की कमी नहीं थी । जहाँ एक ओर उनमें एक कलाकार की उच्च कल्पनाशीलता थी, वहीं दूसरी ओर वे अपने समय के सामाजिक जीवन के उपयुक्त कूटनीतिक व्यावहार कुशलता में भी दक्ष थे । उस समय बुद्धिजीवी कलाकारों के लिए आजीविकाकासबसे उत्तम साधन राजाश्रय ही था । खुसरो ने भी अपना सारा जीवन राजाश्रय में बिताया । उन्होंने गुलाम, खिलजी और तुगलक – तीन अफगान राजवंशों तथा ।। सुलतानों का उत्थान – पतन अपनी आँखों से देखा ।

राजनीतिक साहित्यिक कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी खुसरो की अध्यात्मिक साधना कभी अवरुद्ध नहीं हुई । उन्हें इस क्षेत्र में दिल्ली के प्रसिद्ध मुस्लिम संत निजामुद्दीन औलिया का सानिध्य और शिष्यत्व प्राप्त था । खुसरो ने औलिया से विधिवत दीक्षा ली । कुछ समय पश्चात शिष्य की साधना इस स्तर तक पहुंची कि उनका अहं पूर्णतया विगलित हो गया । गुरू और शिष्य का द्वैतभाव शेष न रहा । खुसरो निजामुद्दीन औलिया के सबसे स्नेही शिष्य थे । औलिया ने वसीयत की थी कि जब खुसरो का देहांत हो तो उन्हें औलिया के पहलू में दफनाया जाय ।

राजनीतिक दांव – पेंच से अपने को सदैव अनासक्त रखते हुए खुसरो निरन्तर एक कवि, कलाकार, संगीतज्ञ और सैनिक ही बने रहे । खुसरो की व्यवहारिक बुद्धि का सबसे बड़ा प्रमाण यही है, कि वे जिस आश्रयदाता के कृपा-पात्र और सम्मानभाजन रहे, उसके हत्यारे उत्तराधिकारी ने भी उन्हें उसी प्रकार आदर और सम्मान प्रदान किया ।

सबसे पहले सन् 1270 ई0 में खुसरो को सम्राट गयासुद्दीन बलवन के भतीजे कड़ा § इलाहाबाद § के हाकिम अलाउद्दीन मुहम्मद कुलिश खाँ § मलिक-छज्जू§ का राजाश्रय प्राप्त हुआ । एक बार बलवन के द्वितीय पुत्र नासिरूद्दीन बुगरा खां की प्रशंसा में कसीदा लिखने के कारण मलिक छज्जू उनसे अप्रसन्न हो गया और खुसरो को बुगरा खाँ का आश्रय ग्रहण करना पड़ा । जब बुगरा खां लखनौती का हाकिम नियुक्त हुआ तो खुसरो भी उसके साथ चले गये । किन्तु वे पूर्वी प्रदेश के वातावरण में अधिक दिन नहीं रह सके और बलवन के ज्येष्ठ पुत्र सुलतान मुहम्मद का निमन्त्रण पाकर दिल्ली लौट आये । खुसरो का यही आश्रयदाता सर्वाधिक सुसंस्कृत और कला प्रेमी था । सुल्तान मुहम्मद के साथ खुसरो और हसन को भी मुल्तान जाना पड़ा और मुगलों के साथ युद्ध में सम्मिलित होना पड़ा । इस युद्ध में सुल्तान मुहम्मद की मृत्यु हो गयी और खुसरो और हसन बन्दी बना लिये गये । खुसरो ने बड़ी साहस और कुशलता के साथ बन्दी जीवन से मुक्ति प्राप्त की । परन्तु इस घटना के परिणाम स्वरूप खुसरो ने जो मर्सिया लिखा वह अत्यन्त हृदयद्रावक और प्रभाव शाली है । कुछ दिनों तक अपनी माँ के पास पटियाली तथा अवध के एक हाकिम अमीर अली के यहाँ रहे । परन्तु शीघ्र ही वे दिल्ली लौट आये । दिल्ली में पुन: उन्हे मुईजुद्दीन कैकबाद के दरबार मे राजकीय सम्मान प्राप्त हुआ । यहाँ उन्होने 1289 ई0 में "मसनवी किरानुससा दैन " की रचना की । गुलाम वंश के पतन के बाद जलालुद्दीन खिलजी दिल्ली का सुल्तान हुआ । उसने खुसरो को अमीर की उपाधि से विभूषित किया । खुसरो ने जलालुद्दीन की प्रशंसा में " मिफ्तोलफ्तह" नामक ग्रन्थ की रचना की । जलालुद्दीन के हत्यारे उसके भतीजे अलाउद्दीन ने भी सुलतान होने पर खुसरो को

उसी प्रकार सम्मानित किया और उन्हें राजकवि की उपाधि प्रदान की । खुसरो की अधिकांश रचनाएं अलाउद्दीन के राज्यकाल की ही है । 1298 से 1301 ई0 की अवधि में उन्होंने पांच रोमाण्टिक मसनवियां 1- " मल्लोल अनवर " 2- " शिरीन खुसरो, 3- " मजनू - लैला " , 4- आईन - ए - सिकन्दरी " और 5- " हश्त बिहिश्त " लिखी । ये पंचगंज के नाम से प्रसिद्ध हैं । ये मसनवियां खुसरो ने अपने धर्म गुरु शेख निजामुद्दीन औलिया को समर्पित की तथा उन्हें सुल्तान अलाउद्दीन को भेंट कर दिया । इन पद्य ग्रन्थों के अतिरिक्त खुसरो ने दो गद्य ग्रन्थों की भी रचना की - 1- "खजाइनुल फतह" 2- "एजाजेखुसरवी" जो अलंकार ग्रन्थ है । अलाउद्दीन के शासन के अंतिम दिनों में खुसरो ने देवल-रानी खिज्र खाँ नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक मसनवी लिखी ।

अलाउद्दीन के उत्तराधिकारी उसके छोटे पुत्र कुतुबुद्दीन मुबारकशाह के दरबार में भी सामान्य राजकवि रूप में बने रहे, इस काल में खुसरो ने नूसिपहर नामक ग्रन्थ की रचना की जिसमें मुबारक शाह के राज्काल की मुख्य - मुख्य घटनाओं का वर्णन है । खुसरो की अन्तिम ऐतिहासिक मसनवी " तुगलक नामा" है जो उन्होंने गयासुद्दीन तुगलक के राज्यकाल मे लिखी है और जिसे उन्होंने उसी सुलतान को समर्पित किया । सुलतान के साथ खुसरो बंगाल के आक्रमण में भी सम्मिलित थे । उनकी अनुपस्थिति में ही दिल्ली में उनके गुरु शेख निजामुद्दीन की मृत्यु हो गयी । इस शोक को अमीर खुसरो सहन नही कर सके और दिल्ली लौटने पर 6 माह के भीतर ही सन् 1326 ई0 में खुसरो की इहलीला समाप्त हो गई । खुसरो की समाधि औलिया के पास ही बनायी गयी ।

यद्यपि खुसरो की महत्ता उनके फारसी काव्य पर आश्रित है, परन्तु

उनकी लोकप्रियता का कारण उनकी हिन्दवी में काव्य - रचना करने वालों में अमीर खुसरो का नाम सर्वप्रमुख है । अरबी, फारसी के साथ - साथ अमीर खुसरो को अपने हिन्दवी ज्ञान पर भी गर्व था । उन्होने स्वयं कहा है - " मै हिन्दुस्तान की तूती हूँ । अगर तुम वास्तव में मुझसे जानना चाहते हो तो हिन्दवी में पूछो । मै तुम्हें अनुपम बातें बता सकूंगा ।" अमीर खुसरो ने कुछ रचनाएं हिन्दी या हिन्दवी में भी की थी, इसका साक्ष्य स्वयं उनके इस कथन में प्राप्त होता है, " जुजबे चन्द नज्मे हिन्दी नजरे दोस्तां करदां अस्त ।" उनके नाम से हिन्दी में पहेलियाँ, मुकरियां, दो सखुने और कुछ गजलें प्रसिद्ध हैं । इसके अतिरिक्त उनका फारसी हिन्दीकोश " खालिकबारी " उल्लेखनीय है ।

खालिक बारी

पर्याप्त सामग्री के अभाव में खालिक बारी के रचयिता के विषय में विद्वानों ने अनेक विरोधी तथ्यों का उल्लेख किया है । स्व0 श्री महमूद शीरानी ने खालिक बारी को निकृष्ट कोटि की महत्वहीन पुस्तक और उसके रचयिता को एक सामान्य अध्यापक तथा अकुशल कवि घोषित किया है । इस प्रकार की घोषणा उन आलोचनात्मक ग्रंथों के अनुरूप है जो हिन्दी और उर्दू मे 30-35 वर्ष पूर्व लिखे गये और जिनमें इधर या उधर निर्णय देने का आग्रह प्रबल दिखाई देता है । पर्याप्त सामग्री के अभाव में ऐसी आलोचना खतरनाक है । वास्तविकता यह है कि यदि खालिक बारी अमीर खुसरो की रचना न होकर जहांगीर कालीन किसी खुसरो की रचना है, तब भी उसका महत्व अस्वीकार नहीं किया जा सकता । नि:संदेह इस प्रकार की पुस्तकों का या बड़े से बड़े आधुनिक शब्द कोश का काव्यात्मक महत्व नहीं होता, किन्तु आज से चार सौ वर्ष पहले या सात सौ वर्ष

पहले तीन विभिन्न भाषाओं के पर्याय एकत्रित करना सरल कार्य नहीं था। भाषा विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी और उर्दू दोनों के लिये खालिक बारी का समान महत्व है। खड़ी बोली के संज्ञा रूपों, विशेषणों और सर्वनाम के अतिरिक्त क्रिया के काल गत रूपों के सम्बन्ध में भी यह पुस्तक प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करती है। यदि इस पुस्तक की रचना जहाँगीर के समय में किसी व्यक्ति ने की है, तब भी खड़ी बोली के विकासक्रम को जानने मे इससे सहायता मिलती है और यदि अमीर खुसरो ने इस पुस्तक को लिखा है तब तो महत्व और भी बढ़ जाता है।

निश्चयत: ही "खालिकबारी" फारसी हिन्दीकोश हिन्दी जगत में प्रसिद्ध रचना है उसके रचयिता प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो ही हो सकते हैं। ये निश्चय है खुसरो ने देहलवी जबान में ही अपनी किताब लिखी होगी, और यह देहलवी जबान ही प्राचीन मानक हिन्दी का प्राचीन आधार है यह अवश्य है कि खालिकबारी की कोई प्राचीन सम्प्रति नहीं प्राप्त है जो कि 1500 ई0 से पहले की हो और इसी लिए अभी तक खालिकबारी का वैज्ञानिक संपादन नहीं हुआ इसलिए मैने इसका भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण करना उचित नहीं समझा। अत: इसे आदिकाल का ग्रंथ मानने पर भी इसका विस्तृत भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत शोध - प्रबन्ध में अन्य ग्रन्थों की भाँति नहीं दे सकी। खालिकबारी के कुछ उदाहरण नीचे प्रस्तुत है :-

खालिक बारी सिरजनहार।
वाहिद एक बदा करतार ॥ 1 ॥
रसूल पैगम्बर जान बसीठ।
यार दोस्त बोले जा ईठ ॥ 2 ॥

राउल वेल

रचना का नाम और उसका कवि

"राउल वेल " (राजकुल विलास) ग्यारहवीं शताब्दी का एक प्रेम काव्य है । इसके रचनाकार का नाम रोडा है । यह रचना के प्रारंभ और अन्त में आता है -

रोड (डें) राउल व (ऐ) ले (ल) वरवाणा (णी) । अइ ····· आपणु ज (T णी) ।
(पंक्ति ।)

रोडें राउलवेल वरवा (णी ।) (सा) तहं भासहं जाइसी जाणी । (पंक्ति 46)

सम्पूर्ण रचना एक शिला पर उत्कीर्ण है । यह शिलाधार (मालवा) में प्राप्त हुई थी और इससमयप्रिंस आफ वेल्स म्यूजियम, बम्बई में रखी हुई है । इसमें किसी सामंत के रावल (राज भवन) की रमणियों का वर्णन हुआ है, इसलिये नाम नितान्त सार्थक है । इसका कवि रोडा कौन था, इसके संबंध में हमें कहीं से कुछ ज्ञात नहीं होता । शिलालेख में वह अपने को " वंदिरा" (बंदी) कहता है (पंक्ति 19, 22, 24, 26) इसलिये वह इस काव्य के नायक का बंदी था, यही ज्ञात होता है । रचना के समय वह वृद्ध भी था, क्योंकि उसे (पालित केश पाला) कह कर संबोधित किया गया है । वह किसी राजा का आश्रित भी था, क्योंकि उसने रचना के प्रारंभ में कहा है -

हासे (सें) तोसे (सें) राजई रापइ ।

असंभव नहीं कि त्रुटित अंशों में उक्त आश्रयदाता का नाम आता रहा हो।

रचना तिथि

यह अनिश्चित रह जाता है । काव्य का नायक कोई गौड़ क्षत्रिय लगता है । नखशिख वर्णन में उसे गौड़ संबोधित किया गया है -

गौड तुहुं एक को पनु अउरु वर ﴾ पंक्ति 28 ﴾

नायिकाओं में से नाम केवल एक "राउल" का ही नाम आता है । रचना का नाम " राउल वेल " = राजकुल - विलास है, इसलिए शिलालेख के व्यक्ति राजकुल के प्रतीत होते हैं, किन्तु प्राप्त ऐतिहासिक सामग्री से इन पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता है । लेख का समय केवल लिपि विन्यास के आधार पर संभव है । इसकी लिपि संपूर्ण रूप से भोज देव के " कूर्मशतक " वाले धार के शिला लेख से मिलती है ﴾ दे0 इपिग्राफिका इंडिका, जिल्द 8, पृ0 241 ﴾ -- दोनो में किसी भी मात्रा मे अंतर नही है, और उससे कुछ बाद के लिखे हुए अर्जुनवर्म देव के,समय के "पारिजात मंजरी" के धार के शिलालेख की लिपि किंचित् बदली हुई है ﴾ दे0 इपिग्राफिया इंडिका, जिल्द 8, पृ0 96 ﴾ । इसलिए इस लेख का समय " कूर्मशतक" के उक्त शिलालेख के आस-पास ही, अर्थात ।।वीं शती ईस्वी होना चाहिए ।

रचना का विषय

ग्यारहवीं तथा बारहवीं शती में दक्षिण कोसल त्रिपुरी के कलचुरि वंश के राजाओं के शासन में था, और कलचुरि गौड नही थे, इसलिए यह लेख किसी सामंत के संबंध का ही हो सकता है । इस लेख का विषय उक्त सामंत की सात नव विवाहित नायिकाओं का नख -शिख है । कुल छः नख - शिख इस लेख में आते हैं । प्रथम नखशिख की नायिका प्रारंभ की पंक्तियों तथा कुछ अन्य अंशों के खंडित हो जाने से ज्ञात नही है, किन्तु भाषा से वह पश्चिमी मध्यदेश की

प्रतीत होती है । इसी प्रकार दूसरे की नायिका महाराष्ट्र की तथा तीसरे की नायिका पश्चिमी राजस्थान या गुजरात की ज्ञात होती है । चौथा नखशिख टक्कणी के संबंध का है, पांचवां किसी गौड़ीया के संबंध का और छठा दो मालवियाओं के संबंध का है । ये समस्त नायिकाएं सामंत की नवविवाहिताएं हैं ।

भाषा

डॉ० माता प्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित -

"राउलवेल" "उक्ति व्यक्ति - प्रकरण" के समान ही दूसरी मूल्यवान सामग्री है, और कुछ बातों में उससे भी अधिक मूल्यवान कही जा सकती है । यह "उक्तिव्यक्ति प्रकरण" से भी पूर्व की रचना है, जो किसी पंडित द्वारा केवल भाषा परिचय के लिए नहीं प्रस्तुत की गई है, बल्कि एक कवि की कलापूर्ण अभिव्यक्ति है, जिसमें पद्य ही नहीं, गद्य का प्रयोग उसके द्वारा अधिकार - पूर्वक किया गया है और जिसके संबंध में एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उस का पाठ शिलांकित होने के कारण अपने मूल रूप में सुरक्षित है ।

डॉ० माता बदल जायसवाल के अनुसार जनपदीन खड़ी बोली का उद्गम टक्की शौरसेनी की अपभ्रंश भाषा टक्की अपभ्रंश से हुआ है प्राय: प्रचलित मत यह है कि आदिकालीन हिन्दी या जनपदी खड़ी बोली का उद्गम शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है किन्तु शौरसेनी अपभ्रंश ओकारान्त या उकारान्त है इसलिये उकारान्त अपभ्रंश से आकारान्त जनपदीय खड़ी बोली का उद्गम प्रतीत नहीं होता ।

"मानक हिन्दी के ऐतिहासिक व्याकरण"में डा० जायसवाल ने आकारान्त जनपदीय खड़ी बोली का उद्गम जनपदीय टक्की अपभ्रंश से हुआ माना है जो पुलिंग एक वचन में आकारान्त थी जैसे - बछड़ा, कछड़ा- राउलवेल प० नखशिख ।

चतुर्थ नखशिख

चतुर्थ नखशिख वर्णन टक्की भाषा में लिखा गया है ।

संज्ञा शब्दों की स्थिति इस प्रकार है -

संज्ञा - कर्ता (मूल)

एक0 पु0 । स्त्री0 :- विभिन्न स्वरान्त संज्ञा शब्द प्रत्यय हीन रूप मे मिलते हैं :-

पु0 :- कछड़ा 17, बछला 18, कंगुरू 17

स्त्री0:- कंठी 16, टविकणी 18

एक0 पु0 अकारान्त शब्द, ॅ तथा - उ प्रत्ययों के साथ भी मिलते है :-

ॅ :- संगउं 17, पहिरणु 17, जणु 18

उ :- पारवउ 18

एक0 स्त्री0 के कोई प्रत्यययुक्त रूप नहीं मिलते हैं ।

बहु0 पु0 अकारान्त शब्द प्रत्ययहीन रूप में मिलते है ।

गन्न 16, टेल्ल 18, मंडन संडन 16, वोल्ल 18

बहु0 स्त्री0 के कोई प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं मिलते हैं ।

बहु0 पु0 आकारान्त संज्ञा - शब्द - ा प्रत्यय के साथ मिलते हैं,

यथा :- हीआ 15

बहु0 स्त्री0 के प्रत्यययुक्त प्रयोग नहीं मिलते है ।

संज्ञा : कर्ता (विकृत)-

कोई उदाहरण नहीं मिलता है ।

राउलवेल और उसकी भाषा — डॉ माता प्रसाद गुप्त

संज्ञा : कर्म § मूल § –

एक0 पु0 अथवा संज्ञा शब्द प्रत्ययहीन रूप में नहीं मिलते है ।

एक0 पु0 आकारान्त संज्ञा शब्द ु प्रत्यय के साथ मिलते हैं –

कण्यलु ।6

एक0 स्त्री0 के कोई उदाहरण नहीं है ।

बहु0 स्त्री0 संज्ञा शब्द प्रत्ययहीन रूप मे मिलते है –

वत्थु ।7

बहु0 पु0 के उदाहरण नहीं मिलते हैं ।

संज्ञा : कर्म § विकृत § :

एक0 पु0 अथवा स्त्री0 के कोई उदाहरण नहीं है ।

बहु0 पु0 ु प्रत्यय के साथ मिलता है – जणु ।6

बहु0 स्त्री0 ँ प्रत्यय के साथ मिलता है – गोरीँ ।5

संज्ञा :- करण –

प्रत्यय हीन रूप नहीं हैं ।

एक0 पु0 में दो प्रत्यय मिलते हैं :- ुं तथा ॆ ण, जिनमें से दूसरा प्राचीन भारतीय आर्य भाषा का एकारान्त का प्रत्यय है ।

ुं – मुहुं ।5

ॆ णु – एकेणवि ।6

एक0 स्त्री0 में – हि प्रत्यय मिलता है: कंयुपडिअहि ।6

बहु0 पु0 अथवा स्त्री0 के कोई उदाहरण नहीं हैं ।

संज्ञा : संप्रदान -

एक0 पु0 अथवा स्त्री0 के कोई उदाहरण नहीं हैं।

बहु0 पु0 में - ा प्रत्यय मिलता है : टीहा ।5

स्त्री0 के कोई उदाहरण नहीं हैं।

अपादान - एक0 पु0 में ई प्रत्यय मिलता है - पारवई ।8

संज्ञा :- संबंध -

प्रत्ययहीन सामासिक रूप मिलते हैं।

एक0 । बहु0 पु0। स्त्री0:- अड्डा पाहु ।5, अंग संनाहु ।7,

कंगू विध्यहिं ।7 चंद सवाणा ।5

एं0 पु0 में -हिं तथा - केरा मिलते हैं :

- हि का प्रयोग एक संबंधी एक साथ के साथ हुआ है -

संझहि जोन्हहि संगउं ।7

- केरा का प्रयोग बहु0 संबंधी में - हिं प्रत्यय लगा कर किया गया है :- घाघरेहिं केरा पहिरणु ।7

एक0 स्त्री0 के उदाहरण नहीं हैं।

बहु0 पु0 मे हं प्रत्यय मिलता है, इसमें संबंधी भी बहु0 है-

अक्खंदहं हीआ ।

बहु0 स्त्री0 के उदाहरण नहीं है।

संज्ञा :- अधिकारण

प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं हैं।

एक0 पु0 अकारान्त शब्द - ि, - उ तथा - हु प्रत्यय

के साथ मिलते है -

- ि : कंदि 16

- उ : पाखउ 18

- हु : पाहु 15

एक0 स्त्री0 के उदाहरण नहीं हैं।

बहु0 पु0। स्त्री0 शब्द - हिं प्रत्यय के साथ मिलते हैं -

अंधिहिं 16, धणाहिं 17

संज्ञा :- <u>संबोधन</u>

प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं हैं।

एक0 पु0 में ु प्रत्यय के साथ मिलते है - टेल्लपुतु 15

स्त्री0 तथा बहु0 के कोई उदाहरण न प्रत्ययहीन प्रयोगों के

हैं और न प्रत्यययुक्त के।

सर्वनाम शब्दों की स्थिति निम्नप्रकार है।

<u>सर्वनाम</u> :- प्रथम पुरूष - कोई उदाहरण नहीं है।

<u>द्वितीय पुरूष :-</u>

केवल दो उदाहरण मिलते हैं जो कर्ता0 (मूल) के हैं और प्रत्ययहीन हैं कर्ता (मूल) एक0 पु0 - तुहुं 15, तुहुं 15

सर्वनाम : तृतीय पुरूष (तथा अनिश्चयवाचक सर्वनाम एवं संकेत वाचक विशेषण)

प्रत्ययहीन प्रयोग कोई नहीं है।

प्रत्यययुक्त प्रयोग विभिन्न कारकों में निम्नलिखित है :-

-ो : कर्ता० ﴾मूल﴿। कर्म० ﴾मूल﴿ एक० पु०। स्त्री०: सो ।5 सो ।7

-े : कर्म० ﴾विकृत﴿ बहु० पु० : से ।7

-ें : कर्म० ﴾विकृत﴿ बहु० पु० : सें ।5

-तु : संबंध० एक० स्त्री० तसु ।8

कारण, संप्रदान, अपादान, अधिकरण और संबोधन कारकों के उदाहरण नहीं हैं।

सर्वनाम : संबंधवाचक ﴾तथा संबंधवाचक विशेषण﴿ -

प्रत्ययहीन रूप नहीं हैं।

प्रत्यययुक्त रूपों की स्थिति इस प्रकार है -

-ो : सर्व० कर्म० ﴾मूल﴿ तथा वि० एक० पु० ﴾जो?﴿ ।5, जो ।6, जो ।7,

-े : वि० बहु० पु० : जे ।7

सर्वनाम : प्रश्नवाचक ﴾तथा प्रश्नवाचक विशेषण﴿

कोई उदाहरण नहीं हैं।

सर्वनाम : ﴾तथा निजवाचक विशेषण﴿

कोई उदाहरण नहीं हैं।

विशेषण :- प्रत्ययहीन प्रयोग निम्नलिखित हैं :-

एक० बहु०, पु०। स्त्री० : केह ।5, दुई ।6, पर ।5

प्रत्यययुक्त प्रयोग निम्नलिखित हैं :-

-उ : एक0 बहु0 पु0:- एक्कु 15, सउ 16

§ -उ प्रत्यय अकारान्त विशेषण शब्दों में लगता है, जो विशेष्य के प्रत्यययुक्त होने पर, स्वत: विशेष्य के रूप में अथवा विशेष्य के अन्तर आते हैं । §

-ा : एक0 पु0 केहा 15, तेहा 15, वृद्ध 15, मत्ता 16

-ी : एक0 स्त्री0 :- जताली 16, एही 18

§ यह -ी अकारान्त / आकारान्त विशेषण शब्दों में लगा है §

-ा : बहु0 पु0 सयाणा 15, एहा 16, तेहा, इतरा 18,

-ें : बहु0 पु0 § विकृत § :- आधुघाडें 17

§ इस प्रत्यय का उपयोग विशेषण के विकृत रूप निर्माण के लिए किया गया है । §

क्रिया रूपों की स्थिति नीचे दी जा रही है ।

क्रिया :- सामान्य वर्तमान

-अहि: द्वि0 पु0 : झांखहि 15, आख § हि § 15

-अइ : तृ0 पु0 एक0 पु0 । स्त्री0 : भिज्जई 15

सोहइ 16, मोहई 16, धवाइ 18

-अहिं : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : सोहहिं 16, दीसहिं 17

-अ : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : पर 18

वर्तमान संभावनार्थ

- इज्जइ : तृ0 पु0 एक0 पु0 :वन्निज्जइ 15,

- इएयइ : तृ0 पु0 एक0 पु0 : कियइ 15, मडियइ 16

<u>सामान्य भूतकाल और भूत कृदन्त :-</u>

-उ : तृ0पु0 एक0 सामान्य भूत : हु 17

- ओ : वही वही : हो 17

-ए : तृ0 पु0 बहु0 पु0 सामान्य भूत : परे 16

§ सामान्य भूत अकर्मक क्रियाओं के वचन और लिंग कर्ता के अनुसार तथा सकर्मक के कर्म के अनुसार है । §

<u>सामान्य भविष्यत :-</u>

कोई उदाहरण नहीं मिलता है ।

<u>पूर्वकालिक कृदन्त</u>

-अ : एक0/बहु0 : मल 18, मल 18

- इ : एक0 बहु0 : §बि§ हालि 16, करि 16, ठोहि 16,

निहालि 18,

<u>वर्तमान कृदन्त</u>

- अति : तृ0 पु0 एक0 स्त्री0: पइसति 18, वानति 32

- अंद : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : अक्खंदहं 15

<u>भविष्यत् कृदन्त</u>

कोई उदाहरण नहीं हैं ।

विधि -

- उ : द्वि0 पु0 एक0 पु0 : वेहु 18

क्रियार्थक संज्ञा

कोई उदाहरण नहीं हैं।

अव्यय शब्दों की स्थिति नीचे दी जा रही है -

स्थान सूचक अव्यय -

उ : एयु 15

स्थिति सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं मिलता है।

कार्य प्रणाली सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं हैं।

संयोजक :-

- : नं 17, नं 16

निषेध सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं हैं।

निश्चय सूचक अव्यय

उ : मयणु 16

इ : गोरइ 17

पि : एक्वेणपि 16

हिं : घाघरेहिं 17

तु : तु 18

संबोधन सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं है।

परिणाम सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं है।

प्रश्न सूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं है।

पंचम नख - शिख

पंचम नखशिख वर्णन प्राचीन राजस्थानी में हुआ है।

संज्ञा शब्दों की स्थिति नीचे दी जा रही है।

संज्ञा : कर्ता कारक (मूल)

एक0 पु0 / स्त्री0 विभिन्न स्वरान्त संज्ञा शब्द प्रत्ययहीन रूप में मिलते हैं :-

पु0 :- वेस 19, वेस 19, अम्बेअल 20, रवि, टीका 21, पात 22, कुच 24, चांदा 25, कोह 26

स्त्री0 :- टीका 22, सोह 26, कांठीवेंटी 26, गडडि 27

एक0 पु0 अकारान्त संज्ञा शब्द ु । – उ प्रत्यय के साथ मिलते हैं –

ु : माडणु 23, तागु 23, हारु 24, आलु 26, जणु 26

–उ : जालउ 23, तागउ 23, ठेरउ 24

एक0 स्त्री0 संज्ञा शब्दों के कोई प्रत्यय युक्त रूप नहीं हैं।

बहु0 पु0 संज्ञा शब्द प्रत्यय हीन रूप में मिलते हैं –

दसण 22, दिठहुल 20, पात 22, कुडीपुत 23

बहु0 पु0 संज्ञा शब्द ु तथा े प्रत्ययों के साथ भी मिलते हैं –

ु : जणु 26, सुआणु 19

े : तरूवे 20, तारे 20, तारे 21

बहु0 स्त्री0 ईकारान्त शब्द ं प्रत्यय के साथ मिलते हैं –

भउहीं 21, चंदहाईं 25

संज्ञा कर्ता (विकृत)

कोई उदाहरण नहीं हैं।

कर्म (मूल)

एक0 पु0 । स्त्री0 विभिन्न स्वरान्त संज्ञा शब्द प्रत्ययहीन रूप मिलते हैं –

पु0 : टाक 19, अछ्या 22, कापड 26, वान 27

स्त्री0 : खोंपवली 20, टीका 21, बुद्धि 22, जोन्ह 27

एक0 पु0 : अकारान्त संज्ञा शब्द ु । उ प्रत्यय के साथ मिलते है –

ु : अवहारु 24, उटणु 26,

– उ : सोना जालउ 23

एक0 स्त्री0 के प्रत्यययुक्त और बहु0 के कोई उदाहरण नहीं हैं।

संज्ञा : कर्म (विकृत)

प्रत्ययहीन रूप के कोई उदाहरण नहीं मिलते हैं ।

एक0 पु संज्ञा शब्द - हि प्रत्यय के साथ मिलते हैं -

मयणहि 23

एक0 स्त्री0 के प्रयोग नहीं हैं ।

बहु0 पु0 अकारान्त शब्द प्रत्यय युक्त हैं :-

बनयारां 22

बहु0 स्त्री0 संज्ञा शब्द - प्रत्यय के साथ मिलते हैं -

वंदहाई 25

संज्ञा : करण

प्रत्ययहीन रूप मे कोई उदाहरण नहीं मिले हैं ।

एक0 पु0 । स्त्री0 में - प्रत्यय मिलता है -

राहूं 20, लाठिं 28

बहु0 पु0। स्त्री0 का कोई उदाहरण नहीं है ।

संप्रदान कोई उदाहरण नही है।

अपादान.
कोई उदाहरण नहीं है ।

संबंध

प्रत्ययहीन सामासिक प्रयोग इस प्रकार मिलते हैं -

एक0। बहु0 , पु0 । स्त्री0 : कांछा (पै) हण 26, कांठी बेंटी 25,

कहीपुल 22, सरय जलय 25, मुहससि 26

कभी-कभी समास एक0 संबंधी को उ युक्त करके बनाएं गये हैं -

एक: सुतु तरीअन्हु 24

एक0 संबंधी के साथ एक0 । बहु0 पु0 । स्त्री0 में - हि प्रत्यय मिलता है -

एक0 पु0 : चांदहि अर 21, गांगहि जलु 25, बेसहि मोलु 27

बहु0 स्त्री : चांदहि चंदहाई 25

एक0 संबंधी के साथ एक0 पु0 मे ` र । ` रउ प्रत्यय मिलते हैं -

` र : सूतेर हारू 25, पीणेर चांदहि 25, अंगेर उजालु 25

` रउ : सूतेरउ हारू 24

एक0 संबंधी के साथ बहु0 पु0 मे0 - र तथा - रे प्रत्यय मिलते है :-

- र : ताडर पात 22

- रे : सोह रे पात 22

एक0 संबंधी के साथ एक0 स्त्री0 में - केरि प्रत्यय का प्रयोग हुआ है -

श्री ह्ण केरि सोह 26

बहु0 संबंधी के साथ एक0 पु0 मे - न्हु अथवा न्हु प्रत्यय लगाकर " केरउ " अथवा "कर " का प्रयोग हुआ है -

-न्हु : ते ठ् चे? ठ् डेन्हु वाधेन्हु केसं 20, हारन्हु अवहारू 24

-न्हु केरउ : गउडेन्हु केरउ उवेसु 27

-न्हु कर : तरीअन्हु कर हारू 24

एक0 संबंधी के साथ बहु0 स्त्री0 में - करी प्रयुक्त मिलते हैं -

काम्ब करीं धपु अहणीं 21

अधिकरण

एक0 पु। स्त्री0 दोनों में ही प्रत्ययहीन रूप मिलते हैं -

पु0 : मण 20

स्त्री0: आंट 22

बहु0 शब्दों के प्रत्ययहीन रूप नहीं मिलते हैं।

एक0 पु0 में तीन प्रत्यय मिलते हैं -

अकारान्त में - ि : म्वअथि 25

अकारान्त में े : आगें 19, थणहर माझें 24, राउलें 27

" : गलेहि 23, अंतरे 24

एक0 पु0। स्त्री0 में - हि। हि प्रत्यय मिलता है -

पंठहि 23, जउणहि 25

एक0 पु0। स्त्री0 में ं प्रत्यय मिलता है -

केसं 20, ओलगं 22, विषं 25

एक0 पु0 मे - हिं प्रत्यय मिलता है -

- हिं : आंगहिं 25

बहु0 पं0। स्त्री0 में - न्हु प्रत्यय मिलता है -

- न्हु : कानन्हु 22, सोहन्हु 24, सबन्हु 24

संबोधन

एक0 पु0 मे प्रत्ययहीन प्रयोग मिलते हैं -

वर्व्वर 21,

एक0 स्त्री0 के प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं हैं।

एक0 पु0 में ु, े तथा -ो प्रत्यय युक्त प्रयोग मिलते हैं -

ु : राहु ।9

े : धेठे ।9

-ो : वंडिरो ।9,

बहु0 के कोई उदाहरण न प्रत्ययहीन के हैं और न प्रत्यययुक्त के ।

सर्वनाम शब्दों की स्थिति नीचे दी जा रही है ।

सर्वनाम : प्रथम पुरुष

प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं है ।

प्रत्यययुक्त केवल दो कारकों के उदाहरण मिलते है :

- हि : कर्म0 एक0 पु0 - मोहि 26

-रे : संबंध0 बहु0 पु0 : अम्हारे 20

द्वितीय पुरुष

प्रत्ययहीन प्रयोग निम्नलिखित है -

कर्ता0 8 मूल 8 एक0 पु0 : तु ।9, तूं 21

प्रत्यययुक्त केवल दो उदाहरण मिलते हैं -

- इं : करण0 एक0 पु0 : तइं ।9, तइं ।9,

तृतीय पुरुष 8 और अनिश्चयवाचक सर्वनाम तथा संकेतवाचक विशेषण 8

प्रत्ययहीन प्रयोग इस प्रकार हैं -

कर्म0 8 मूल 8 एक0 स्त्री0 : एह 21

कर्म0 8 विकृत 8 एक0 पु0 : स ।9, एह 21 0 आन 26

प्रत्ययुक्त प्रयोगों की स्थिति विभिन्न कारकों में इस प्रकार है -

- ो : कर्ता० ॥ मूल ॥ । कर्म० ॥ मूल ॥ एक० पु० । स्त्री० : सो 23

- ा : कर्ता० ॥ मूल ॥ बहु० स्त्री० : ताहि 21

-े : कर्म ॥ विकृत ॥ वि० बहु० पु० । स्त्री० : ते 11,

-ारउ : संबंध० एक० पु० : तारउ 26

-ारे : " " : तारे 27

॥"तारउ॥ के स्थान पर " तारे " का प्रयोग संबंधवाचकके विकृत रूप मे होने के कारण किया लगता है । ॥

-ारि : संबंध० एक० स्त्री : तारि 21

- ही : " " : ताही 25

संबंध कारक । ॥ तथा संबंधवाचक विशेषण ॥

प्रत्ययहीन प्रयोग निम्नलिखित हैं -

विशेषण एक० स्त्री० : ज 20, ज 26

प्रत्ययुक्त प्रयोगों की स्थिति निम्नलिखित है -

- ो : सर्व० कर्म० ॥ मूल॥ एक० पु० : जो 24

-े : वि० बहु० स्त्री० : जे 25

प्रश्नवाचक सर्वनाम ॥ तथा प्रश्नवाचक विशेषण ॥

प्रत्ययहीन प्रयोग निम्नलिखित हैं -

वि० एक० पु० : को 24

कर्ता० ॥ मूल॥ एक० स्त्री० : काहु 21

प्रत्ययुक्त प्रयोग नहीं हैं ।

निजवाचक सर्वनाम ﴾ तथा निजवाचक विशेषण ﴿

प्रत्ययहीन प्रयोग नहीं हैं।

प्रत्ययुक्त केवल एक प्रयोग मिलता है -

- णी : संबंध वि० एक० स्त्री० : आपणी 22

विशेषण शब्दों की स्थिति नीचे दी जा रही है।

विशेषण

प्रत्ययहीन प्रयोग निम्नलिखित है -

एक० । बहु० पु० । स्त्री० : एक 20, कीस 19, दिठ 27, नो 22,

पा ﴾ पां ﴿ प 23, चि 26, सब 26, साव 20, सेंदूरी 26

प्रत्ययुक्त प्रयोगों की स्थिति निम्नलिखित है :

- उ : एक० पु० : कईसद 24, जइसउ 24, कलिअ ﴾उ﴿ 25

﴾ उ प्रत्यय ऐसे अकारान्त पुल्लिंग विशेषण शब्दों में लगा है जो प्रत्ययुक्त विशेष्य के साथ स्वतः विशेष्य के अनंतर प्रयुक्त हुए हैं। ﴿

- ा : एक० पु० : पेटुला 22

-ो : " " : सरेसो 23, अइसो 27

- र : स्वार्थिक एक० पु० : जेहर 19, तेहर 19, केहर 22, धवलर 26

-ी : एक० । स्त्री० सरिसी 21, अइसी 27

﴾ -ी प्रत्यय अकारान्त । आकारान्त विशेषण शब्दों मे लगा है। ﴿

ं : बहु० पु०। स्त्री० : रयणिमुहां 21, रूरीं 21, कइसीं 21 जइसीं 21

क्रिया

क्रिया रूपों की स्थिति निम्नलिखित है।

सामान्य वर्तमान

- असि : द्वि0 पु0 एक0 पु0 : ﴾वो﴿ जासि 19, भूलसि 19, वानसि देखसि 21,
वारसि 22, हारसि 22

- अइ : तृ0 पु0। स्त्री0 : ﴾भा﴿ वइ 22, नावइ 22, ﴾ मू ﴿ झइ 26
पइसइ 27, दीसइ 28

- इ : तृ0 पु0 एक0 पु : आथि 27

- अथि । अंथि : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : भांवथि 19, मूझथि 20

- अ : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : फूल 20

वर्तमान संभावनार्थ

- अइ : द्वि0 पु0 एक0 पु0 : रूपइ 27

- ईजइ : तृ0 पु0 एक0। बहु0 पु0। स्त्री0 : कीजइ 23, हसीजइ 23
कीजइ 26, सीजइ 26

- इए : तृ0 पु0 बहु पु0 : गथिए 21

- अइं : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : सोहइं 22

सामान्य भूत और भूत कृदन्त

- अउ : तृ0 पु0 एक0 पु0 सामान्यभूत : भउ 24

- इअउ : तृ0 पु0 एक0 पु0 भूत कृदन्त : मिलिअउ 25

- एउ : वही : माडेउ 28

- एल : वही : पसारेल 27

- इअल : वही : पहिअल 25, ओढियल 26

- इआ : वही : गंठिया 23

- इले : वही : पहिले 22

- एतले : वही : घेतले 20

- ए : तृ0 पु0 बहु0 पु0 सामान्य भूत : दीठे 19, तूठे 20, हारे 21

- ए : वही भूत कृदन्त : रागे 22, माते 23

- एन्हु : तृ पु0 एक0 स्त्री0 सामान्यभूत : भइ 22

(सामान्य भूत अकर्मक क्रियाओं के वचन और लिंग कर्ता के अनुसार तथा सक0 के वचन और लिंग कर्म के अनुसार हैं)

सामान्य भविष्यत्

कोई उदाहरण नहीं है।

पूर्वकालिक कृदन्त

- इ - एक0। बहु0 देखि 20, पाहि 21, लहि 23, सुणि 26 लहि 23, छाड़ि 27

- ` : एक0 : हुतें 23

वर्तमान कृदन्त

- अनु : द्वि0 पु0 एक0 पु0 : वानतु 19

- अंत : तृ0 पु0 बहु0 पु0 : सराहंत 26

भविष्यत कृदन्त

कोई उदाहरण नहीं है।

विधि

- अउ : द्वि0 पु0 एक0 पु0 : तोरउ 27

- उ : द्वि० पु० एक० पु० : देखु 21, बोल 27

क्रियार्थक संज्ञा

कोई उदाहरण नहीं है ।

अव्ययों की स्थिति नीचे दी जा रही है ।

स्थानसूचक अव्यय

प्रत्ययहीन : कत 19, कतहुं 19, आर 21

-ं : उपरं 20

कालसूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं है ।

स्थितिसूचक अव्यय

कोई उदाहरण नहीं है ।

कार्यप्रणाली सूचक अव्यय

-ं : एवं 22, एवं 23

-े : कइसे 20, जइसे 20,

संयोजक

प्रत्ययहीन : त 27

-ु : जणु 21, जणु 22, जणु 27

- ि : जणि 20 दो बार

- ो : जो 27

निषेध सूचक अव्यय

प्रत्ययहीन : न 21, न 24

निश्चयसूचक अव्यय

हि : हि 21

इ : सावइ 20

तु : तु 21

हु। हू : हू 19, हु 20, हू 23

संबोधन सूचक

रे : एक0 : रे 19, सात बार

अरे : एक0 : अरे दो बार

परिमाण सूचक

प्रत्ययहीन : अति 26

उ : विपु 22

प्रश्न सूचक

प्रत्ययहीन कि । की : की 19, कि 27

भरतेश्वर-बाहुबली-रास

इसके रचयिता जैन कवि शालिभद्र सूरी थे जिन्होंने इसके रचना-काल का निर्देश करते हुए इस ग्रन्थ के अन्त में लिखा है -

जो पढ़इ ए वसह वदीत सो नरो निनु नव निहि लहइए ।
संवत ए बार एकतालि फागुण पंचमिइं एउ कीउ ए ।।

उपर्युक्त पंक्तियों में उल्लिखित " बार " (बारह) एकतालि (इकतालिस) के आधार पर इसका रचना - काल संवत् 1241 वि0 स्वीकार किया जाता है । अन्य दृष्टियों से भी यह रचना - काल संगत प्रतीत होता है ।

कथावस्तु -

"भारततेश्वर बाहुबली रास " की कथा-वस्तु जैन पुराणों पर आधारित है । प्रस्तुत काव्य की कथा वस्तु संक्षेप में इस प्रकार है - अयोध्या के प्रतापी नरेश ऋषभदेव ने अपनी वृद्धावस्था मे सन्यास लेकर अपना राज्य अपने दो पुत्रों में विभक्त कर दिया । भरत को अयोध्या तथा बाहुबली को तक्षशिला का राज्य प्राप्त हुआ । भरत बाहुबली की अपेक्षा अधिक महत्वाकांक्षी थे । एक बार उनकी आयुधशाला में दिव्य चक्र रत्न उत्पन्न हुआ जिसके बल पर उन्होंने दिग्विजय प्राप्त की । जब भरत धरती के सभी राजाओं पर विजय प्राप्त कर पुन: घर लौटे तब उनका चक्ररतन अयोध्या के बाहर ही रूक गया । उनके मंत्रियों ने बताया कि इसका कारण यह है कि अभी तक उनके भाई बाहुबली ने उनकी अधीनता स्वीकार नहीं की । अत: बाहुबली को दूत के द्वारा सन्देश भेजा गया कि वह भरतेश्वर की अधीनता स्वीकार कर ले अन्यथा उस पर आक्रमण कर दिया जायेगा । किन्तु बाहुबली ने इसका कड़ा उत्तर दिया जिसके परिणाम स्वरूप भरतेश्वर ने उन पर आक्रमण कर दिया । दोनो के बीच घमासान युद्ध छिड़ गया।

दीर्घ काल तक दोनों के बीच भयंकर युद्ध चलता रहा जिससे उभय पक्षों की अपार क्षति हुई । इसे देख कर इन्द्र ने दोनों भाइयों को प्रेरणा दी कि वे द्वन्द्व युद्ध के द्वारा हार - जीत का निर्णय कर लेवें । किन्तु बाहुबली द्वन्द्व युद्ध में भी पराजित नहीं हुए इस पर भरतेश्वर ने चक्ररत्न से प्रार्थना की कि वह बाहुबली को नष्ट कर दे । चक्ररत्न का नियम था कि वह परिवार के लोगों पर वार नहीं करता था, अतः भरतेश्वर की प्रार्थना सफल नहीं हुई । उनकी इस क्षुब्ध एवं दयनीय स्थिति को देख कर बाहुबली के मन में ग्लानि एवं निर्वेद का उद्रेक हो गया । उन्होंने घोषणा की कि भरतेश्वर की जीत हो गई और वे स्वयं सन्यास ले लेंगे । इस घोषणा को सुनकर भरतेश्वर का मन भी पसीज गया । उनके मन का सोया हुआ भ्रातृभाव पुनः जाग गया । उन्होंने बाहुबली से अपने कुकृत्य के लिए क्षमा याचना करते हुए उनसे अनुरोध किया कि वे वैराग्य धारण न करें किन्तु बाहुबली इससे विचलित न हुए उन्होंनें अनेक वर्षों तक तपस्या करके कैवल्य ज्ञान प्राप्त कर लिया ।

भाषा :

भाषा की दृष्टि से इसे प्रारम्भिक हिन्दी का काव्य कहा जा सकता है। कुछ विद्वानों ने प्रारम्भ में भ्रांतिवश इसे अपभ्रंश का काव्य माना था. किन्तु इसकी भाषा अपभ्रंश न होकर प्रारम्भिक राजस्थानी या हिन्दी है।

"भरतेश्वर बाहुबली रास" की भाषा का विश्लेषण करते हुए डॉ० हरीश ने स्पष्ट किया है कि इसकी "भाषा सरल पुरानी हिन्दी है तथा प्राचीन राजस्थानी शब्दों की भरमार है। साथ ही अपभ्रंश अपना स्थान रिक्त करती हुई एवं तत्सम शब्द ग्रहण करती प्रतीत होती है। "[1]

---

1. आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास काव्यः पृ. 30

इसमें कोई संदेह नहीं कि "भरतेश्वर बाहुबली रास" आदिकाल (1000-1400) के अन्तर्गत आने वाली एक प्रामाणिक रचना है। लेकिन इसका भाषा वैज्ञानिक विवेचन करने से ज्ञात होता है कि ग्रंथ की भाषा में पश्चिमी राजस्थानी व गुजराती एवं हिन्दी के वही व्याकरणिक रूप मिलते हैं जो प्राचीन हिन्दी, प्राचीन राजस्थानी, प्राचीन गुराजती में कॉमन हैं। यदि व्याकरणिक प्रयोगावृत्तियों के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण किया जाये तो हमें यही कहना पड़ता है कि इसमें प्राचीन राजस्थानी, प्राचीन गुजराती की अपेक्षा हिन्दी की प्रयोगावृत्तियां कम हैं। इसके अतिरिक्त यह भी कहा जा सकता है कि यह रचना केन्द्रीय हिन्दी प्रदेश की सीमा पर आती है पर हिन्दी का प्रयोग हिन्दी प्रदेश के बाहर 12वीं शताब्दी में नहीं हुआ, हिन्दी प्रदेश के बाहर हिन्दी का प्रयोग तभी आरम्भ हुआ है जब हिन्दी राष्ट्र भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई और हिन्दी अन्तर्प्रादेशिक भाषा हो गई और हिन्दी के राष्ट्रीय रूप की दृष्टि से प्राचीन मानक हिन्दी जो जनपदीय खड़ी बोली टकसी पर आधारित थी आगे चलकर हिन्दी भाषा का वही रूप दूसरे देशों में भी प्रयुक्त हुआ। बाहुबली रास केन्द्रीय हिन्दी प्रदेश की रचना नहीं कही जा सकती इसलिए "भरतेश्वर बाहुबली रास" बहुत निश्चय के साथ हिन्दी की प्रथम रचना नहीं कही जा सकती फिर भी हिन्दी के जो भी प्रयोग - संज्ञा के व्याकरणिक रूप, सर्वनाम के व्याकरणिक रूप, विशेषण के व्याकरणिक रूप और क्रिया के जो व्याकरणिक रूप मिलते हैं उन्हें प्राचीन राजस्थानी या गुजराती के रूप कहें जा सकता है। राजस्थानी को हिंदी की एक उपभाषा के रूप में माना जाता है। किन्तु बाहुबली रास की राजस्थानी भाषा वह भाषा जिसे एल·पी· टेसीटरी गुजराती के अधिक निकट मानते हैं। बाहुबली रास में राजस्थानी, गुजराती

और प्राचीन हिन्दी के वही व्याकरणिक रूप मिलते हैं जो राजस्थानी गुजराती और हिन्दी सब में प्रयुक्त होते हैं। बाहुबली रास में वह हिन्दी नहीं मिलती जो आगे चल कर खड़ी बोली, ब्रजभाषा, अवधी में विकसित हुई। हां राजस्थानी के प्रयोग बहुत मिलते हैं। इसी दृष्टि से इसकी भाषा को हिन्दी कहा जा सकता है।

उक्तिव्यक्ति - प्रकरण

दामोदर पंडित द्वारा प्रणीत व्याकरण ग्रंथ " उक्तिव्यक्ति-प्रकरण" आकार में लघु होने पर भी महत्वपूर्ण है। दामोदर पंडित काशी नरेश के दरबारी पंडित थे। जो काशी नरेश के राजकुमारों के शिक्षा गुरु थे। इस ग्रंथ की रचना 12वीं शताब्दी में हुई थी। दामोदर पंडित ने राजकुमारों को संस्कृत के माध्यम से तत्कालीन जनपदीय कोसली बोली को सिखाने के लिये इस व्याकरण ग्रंथ की रचना की थी।

इस प्रकार प्राचीन कोसली या प्राचीन अवधी या प्राचीन बनारसी का व्याकरणग्रंथ है। उदाहरण स्वरूप इसमें अवधी का संक्षिप्त व्याकरण आ गया है, लेकिन उदाहरण में इतना कम साहित्य आया है, कि 12वीं शताब्दी में प्रचलित कोसली का यत्किंचित परिचय मिलता है लेकिन अवधी का इतना साहित्य नहीं मिलता कि शोध ग्रंथ में उसकी भाषा का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सके। इसलिए ग्रंथ की प्रस्तावना में ही इस ग्रंथ का परिचय देकर ही संतोष करना पड़ा।

- - - - - - - - - - -

अध्याय - 2

ध्वनिग्रामिक अनुशीलन

ध्वनिग्रामिक अनुशीलन

ध्वनि भाषा की लघुतम इकाई है। किसी भाषा की महत्वपूर्ण या विशिष्ट ध्वनियों को ध्वनिग्राम की संज्ञा दी जाती है।

आदिकाल के प्रतिनिधि काव्य, गोरखबानी, बीसलदेव तथा पृथ्वीराज रासो इन ग्रंथो में मानक हिन्दी के लगभग सभी खण्डीय तथा खण्डेतर ध्वनिग्राम प्रयुक्त हुए हैं। खण्डीय ध्वनिग्रामो के अन्तर्गत 10 स्वर तथा 29 ध्वनिग्राम हैं। जब ध्वनियाँ समान ध्वन्यात्मक परिवेश में घटित होने पर अर्थ भेदक होती हैं, तो उन्हें ध्वनिग्रामों की संज्ञा दी जाती है। उपर्युक्त आलोच्य ग्रंथों में मूल स्वर ध्वनि-ग्राम तथा संयुक्त स्वर ध्वनिग्राम अपने सह ध्वनिग्रामों के साथ निम्नलिखित है -

स्वर परीक्षण

मूल स्वर - अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए (ए), ओ (ओ)

संयुक्त स्वर - ऐ, औ

( ) के अन्तर्गत सहध्वनिग्रामों को अंकित किया गया है।

ध्वनिग्राम वितरण से इतना अवश्य अनुमान लगाया जा सकता है कि उपर्युक्त स्वर आधुनिक मानक हिन्दी के समान है। अतएव आधुनिक मानक हिन्दी के सन्दर्भ में इन स्वरों को मानचित्र में निम्नलिखित रूप से दिखाया जा सकता है -
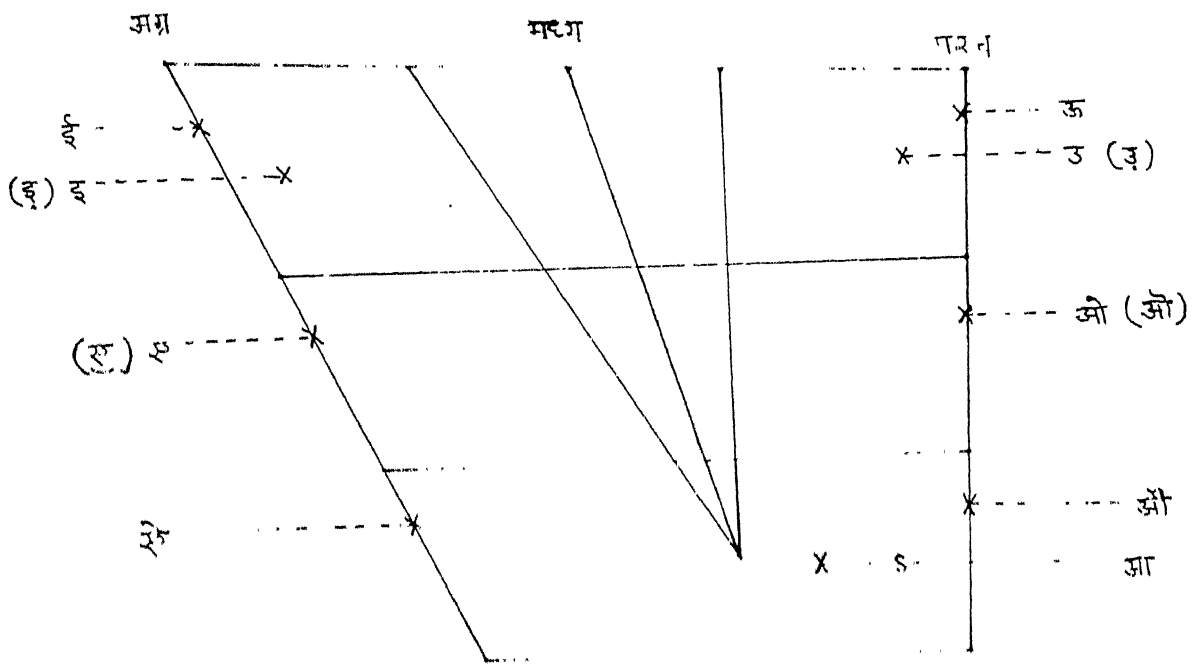
समान ध्वन्यात्मक परिवेश में घटित होने तथा स्वल्पान्तर युग्म में अर्थ भेदकता के गुण से समन्वित होने के कारण उपर्युक्त स्वरों की ध्वनिग्रामिक स्थिति आधुनिक मानक हिन्दी में सहज सिद्ध हो जाती है । ग्रन्थों की भाषा से स्वल्पान्तर युग्मों का दृष्टांत देकर इनकी ध्वनि ग्रामिक स्थापना की विशेष आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है ।

गोरखबानी की भाषा आकारान्त है और पृथ्वीराज रासो की भाषा उकारबहुला है । उकारान्त शब्द कहीं तो अपने मूल रूप में है जैसे-पहु बंधु आदि तथा अनेक स्थलों पर उनमें "उ" प्रत्यय लगा है जैसे- राउ, जग्गु आदि । "ए" तथा संयुक्त स्वर "अइ" के प्रयोग में अर्थगत समानता मिलती है -

अग्गे 12/13 अग्गइ 2/10 पृ0 रा0
संयुक्त स्वर "औ" के स्थान पर "अउ" का प्रयोग भी मिलता है

(चौपैडी) चउपैडी बी0 रा0 116/3

गोरख-बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो में ऐसे अनेक पद हैं जिनमें अन्त्य स्वर में भेद होते हुए भी अर्थगत समानता है । यह समानता अकारान्त - उकारान्त तथा अकारान्त - इकारान्त पदों में है -

ऊंचा 102/2	ऊचउ 95/8	बी० रा०
घणा 81/2	घणउ 97/2	" "
तन 4/2	तनु 3/3	पृ० रा०
सत 5/44	सतु 12/35	" "

इसी प्रकार-

गगन 12/1	गगनि 4/2	गो० बा० स०
दिस 42/2	दिसि 42/2	" " "
बेसास 45/2	बेसासि 86/6	बी० रा
धन धन 101/6	धनि धनि 12/6	" "
पास 5/5	पासि 6/15	पृ० रा०
दूर 2/3	दूरि 2/5	" "

कहीं - कहीं इ - ई और उ - ऊ के प्रयोग में अनियमितता है -

बाइ 145/2	बाई 162/1	गो० बा० स०
कामणि 10/4	कामणी 14/3	बी० रा०
निसान 7/12	नीसान 2/5	पृ० रा०
गुरु 86/1	गुरू 84/1	गो० बा० स०
रिपु 2/7	रिपू 2/3	पृ० रा०

<u>ह्रस्व "ए" "ओ"</u>

ह्रस्व "ए" और ह्रस्व "ओ" के अस्तित्व के लिए कोई ठोसप्रमाण नहीं मिलता है ।

रासो में भी इन स्वरों के लिये विशिष्ट लिपि चिन्ह का न मिलना स्वाभाविक है । छंद प्रवाह में ए से सर्वत्र दीर्घ "ए" का ही भान होता है उदाहरण:-

"एक रवि मंडल भेदहि एक ति करिसह दंदु ।"   4/4 पृ0 रा0

इसके पहले " एक" में " ए" की दीर्घ उच्चारण की रक्षा की गयी है किन्तु उसी पंक्ति में आगे वाले " एक" में " ए" का उच्चारण ह्रस्व है । ज्ञात होता है कि " ए" का ह्रस्व उच्चारण भी होता था जो बहुत कुछ "इ" के निकट था । जैसा -

" किखन इक दराहि बिलंबियइ   12/9 पृ0 रा0 में "इक" के "इ" के उच्चारण से स्पष्ट होता है ।

ऐसा ही एक उदाहरण बीसलदेव रास में भी मिलता है - " एक एकां पी आगली ।"   108/3   बी0 रा0

यहां पर पहले " एक" से ह्रस्व "ए" के उच्चारण का आभास होता है और दूसरे " एकां" में दीर्घ "ए" के उच्चारण की रक्षा की गयी है ।

सम्भवत: लिखते समय ह्रस्व "ए" को "इ" के द्वारा व्यक्त किया जाता था ।

एक > इक्क > इक परिवर्तन से भी इस मत की पुष्टि होती है कि अपभ्रंश काल से ही आदि ए का उच्चारण स्वराघात के कारण ह्रस्व हो गया था । ह्रस्व "ए" के उच्चारण की पुष्टि अपभ्रंश एह > इह > यह से भी होती है ।

ह्रस्व " ओ" के लिये उपर्युक्त ग्रंथों में कोई स्वतन्त्र चिन्ह नहीं है । परन्तु इनमें भी ध्वनि परिवर्तन की प्रवृत्ति के सहारे ह्रस्व " ओ" की संभावना मानी जा सकती है ।

दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम के लिये अपभ्रंश में "ओइ" होता था जिसे हेम चन्द्र ने संस्कृत अदस् का आदेश कहा है । [प्राकृत व्याकरण 8-4- 364]

इसके लिये स्वयंभू के पउम चरिउ [7•3•5•6•18•1•3•6•] में उहु रूप मिलता है । प्राकृत पैंगलम [139] में ओ का प्रयोग हुआ है । रासों मे "उह" "वह " दो रूप मिलते हैं । " ओ > उ > व > परिवर्तन से स्पष्ट है कि अपभ्रंश काल

से ही "ओ" का उच्चारण ह्रस्व हो चला था । इस तथ्य की पुष्टि निष्ठा के उकारान्त तथा ओकारान्त क्रिया पदों से भी होती है । इस प्रकार " ए" की भांति " ओ" के भी ह्रस्व उच्चारण का अनुमान रासो मे लगाया जा सकता है । "[1]

काव्य मे छंद के अनुरोध से प्राय: लघु अक्षर को गुरू और गुरू अक्षर को लघु बना दिया गया है । लघु को गुरु बनाने के लिये शब्दान्तर्गत ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण व्यंजन द्वित्व स्वर का अनुस्वार रंजन करने की प्रवृत्ति है । इसके विपरीत गुरू को लघु बनाने के लिये दीर्घ स्वर का ह्रस्वीकरण, व्यंजन द्वित्व का सरलीकरण की प्रवृत्ति मिलती है ।

ह्रस्वीकरण

यह प्रवृत्ति कहीं - कहीं " आ", "ई" और "ऊ" के ह्रस्वीकरण में मिलती है ।

आ का ह्रस्वीकरण

धर 51/2	(धरा)	गो० बा० स०
चंद 86/3	(चांद)	बी० रा०
हथ्थी 7/17	(हाथी)	पृ० रा०

ई का ह्रस्वीकरण

सुन्दरि 209/2	(सुन्दरी)	गो० बा० स०
रानि 81/3	(रानी)	बी० रा०
कित्ति 2/2	(कीर्ति)	पृ० रा०

ऊ का ह्रस्वीकरण

डमरु 7/6 (डमरू) पृ० रा०

दीर्घीकरण

कहीं - कहीं ह्रस्व अ,इ,उ, के स्थान पर दीर्घ आ, ई, ऊ मिलते हैं । यह प्रवृत्ति बहुत कम मिलती है ।

अ का दीर्घीकरण

बासणा 259/2 (बासण) गो० बा० स०

वासंत 9/23 (वसंत) पृ० रा०

इ का दीर्घीकरण

जोती 89/2 (ज्योति) गो० बा० स०

चीठी 89/1 (चिट्ठी) बी० रा०

उ का दीर्घीकरण

ऊतर 2/1 (उत्तर) पृ० रा०

स्वरागम

उच्चारण की सुविधा की दृष्टि से कभी - कभी पद के बीच कोई स्वर आ जाता है उसे स्वरागम कहते हैं । ऐसे उदाहरण कम ही मिलते हैं -

किरोण 169/2 (इ का आगम) गो० बा० स०

सूरजि 86/3 (" ") बी० रा०

अवरिज 2/12 (" ") पृ० रा०

जुग 73/2 (उ का आगम) गो० बा० स०

दुआरि 77/6 (" ") बी० रा०

संयुक्त स्वर

प्राकृत काल में संप्रयुक्त स्वरों का प्रयोग बढ़ जाने से शब्दगत अस्पष्टता को

को दूर करने के लिये "य" या "व" श्रुति का विधान था । परवर्ती अपभ्रंश (अवहट्ट) में इस प्रकार के संप्रयुक्त स्वरों का संयुक्त स्वर हो जाता था ।

प्राकृत अपभ्रंश में "अइ" " अउ" का प्रयोग संप्रयुक्त स्वर की तरह होता था । यही परवर्ती अपभ्रंश में "ऐ" और " औ" संयुक्त स्वर के रूप में दिखाई पड़ते हैं ।

ऐ -	आछै 3/1	गो0 बा0 स0
	बैठा 6/2	बी0 रा0
	ऐम 2/7	पृ0 रा0
औ -	औगुण 149/2	गो0 बा0 स0
	चौडउ 95/7	बी0 रा0
	मौन 6/26	पृ0 रा0

स्वर संकोचन (व्यंजन लोप)

जब संयुक्त स्वर की प्रक्रिया नहीं होती, परन्तु मध्यम क, ज, द, त, म, य व आदि के लोप होने पर स्वरों की समीकरण पूर्ण करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है, तो स्वर संकोचन की प्रक्रिया होती है । गोरख-बानी, बीसल देव रास में पृथ्वी राज रासो की अपेक्षा ऐसे उदाहरण कम मिलते हैं ।

विओगी (वियोगी)	गो0 बा0 स0 52
अनुभुइ (अनुभव)	न0 बो0 गो0 बा0
भुआल (भुवाल)	बी0 रा0 9/1
राउ (राव)	बी0 रा0 25/1
इअर (इतर)	पृ0 रा0 2/1
अनेअ (अनेक)	पृ0 रा0 2/5
पउमिनिय (पद्मिनिय)	पृ0 रा0 12/25

स्वर ध्वनिग्राम वितरण

आदि काल के प्रमुख ग्रंथ गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो आदि ग्रन्थों में प्रयुक्त हुए स्वर ध्वनिग्रामों का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है -

ध्वनिग्राम	संध्वनि	आदि - संदर्भ	माध्यमिक - संदर्भ	अंतिम - संदर्भ
अ	अ	अगम 2/1 गो० बा० स०	मन 8/1 गो० बा०स०	-
		अईर 2/6 बी० रा०	कर 1/5 बी० रा०	-
		अच्च 2/1 पृ० रा०	इअर 2/1 पृ० रा०	गुस्सा पृ० रा० 2/3
	अं	अनं 117/1 गो०बा०स०	रंग 7/1 गो० बा०स०	-
		अंजलि 22/1 बी०रा०	नंदन 1/1 बी० रा०	-
		अंकुर 2/4 पृ० रा०	रंग 4/20 पृ० रा०	परिअं 7/26 पृ० रा०
आ	आ	आस 19/2 गो० बा० स०	निरास 16/2 गो० बा०स०	आसा 16/2 गो०बा०स०
		आपि 4/4 बी० रा०	नाद 1/2 बी० रा०	आकरा 43/5 बी० रा०
		आचार 2/3 पृ० रा०	चहुआन 2/3 पृ० रा०	रामा 3/2 पृ० रा०
	आं	आन्यां गो बा० सप्त 8	कांम 7/2 गो० बा० स०	आपनां 7/2 पृ० रा०
		आंजणी 82/1 बी० रा०	चहुआंन 8/16 पृ०रा०	कहां 3/21 पृ० रा०
	इ	इहां 3/1 गो० बा० स०	गाइबा 7/2 गो० बा०स०	दोइ गो० बा० 5/1
		इण 40/6 बी० रा०	बइठा 13/4बी०रा०	गाइ 5/1 बी० रा०
		इह 9/8 पृ० रा०	समइतं 5/40 पृ० रा०	सहाइ 2/3 पृ० रा०
	इं	इंद्री 79/2 गो० बा० स०	-	गोसाइं गो० बो० गो० बा०
		-	संइभरि 20/6 बी० रा०	भुइं 63/3 बी० रा०
		इंद 2/3 पृ० रा०	-	इंह 5/18 पृ० रा०

ई	ई	ईड़ा 94/1 गो0 बा0 स0	रवोईला पं0 2 गो0 बा0	जाई6/1 गो0 बा0 स0
		-	बईठि 105/2 बी0रा0	निपाई 74/7बी0रा0
		ईस 4/20 पृ0रा0	पृथीराज 2/3 पृ0 रा0	सुषदाई 3/16 पृ0 रा0
	ईं	-	मींन 127/1 गो0 बा0 स0	मुसलमानीं 14/1 गो0बास
		-	साईंय 82/5 बी0 रा0	नहीं 39/2 बी0 रा0
उ	उ	उतपति गो0 बा0स0	मैथुन 35/2 गो0 बा0स0	बिसनु 17/2 गो0बा0स0
		उदर 1/2 बी0रा0	कउतिग 12/3 बी0 रा0	राउ 12/1 बी0 रा0
		उर 2/12 पृ0रा0	बिरूद 6/33 पृ0 रा0	पाउ 2/1 पृ0 रा0
	उं	-	बैकुंठा 167/1 गो0 बा0स0	जाउं 30/1 गो0 बा0स0
		-	टउंक 20/7 बी0 रा0	सरसउं 20/8 बी0 रा0
		-	पउंर 2/3 पृ0 रा0	ज्यउं 5/13 पृ0 रा0
ऊ	ऊ	ऊरम 89/2 गो0 बा0स0	मूल 65/1 गो0 बा0स0	अवधू 28/2 गो0 बा0 स0
		ऊलग 35/5 बी0 रा0	-	चालिगउ 67/1 बी0 रा0
		ऊतरू 2/1 पृ0 रा0	पूजा 4/12 पृ0 रा0	बंधू 2/3 पृ0 रा0
	ऊं	ऊंघा 23/1 गो0 बा0 स0	खूंटी 68/2 गो0 बा0 स0	ज्यूं 82/2 गो0 बा0स0
		ऊंचा 102/6 बी0 रा0	बूंदीय 20/6 बी0 रा0	बुहांरू 93/4 बी0 रा0
	ए	एक 118/2 गो0 बा0 स0	एकाएकी 166/2 गो0 बा0स0	भए 11/2 गो0बा0स0
		एकादसी 31/3 बी0रा0	अजमेरि 28/6 बी0 रा0	जाणए 53/4 बी0 रा0
		एनमु 2/16 पृ0 रा0	देवन 2/1 पृ0 रा0	अमीए 2/20 पृ0 रा0
	एं	-	तेंडू 38/4 बी0 रा0	महें 60/3 बी0 रा0
	ऐ	-	बैठा 6/2 बी0 रा	-
		ऐम 2/7 पृ0 रा0	दैवहि 2/12 पृ0 रा0,	समवै 6/28 पृ0 रा0
		-	चलैगा53/1 गो0 बा0 स0	लौहैं 9/1 गो0 बा0 स0

ओ	आ`अंकार ।।0/2 गो0 बा0 स0 गोरख 37/2 गो0बा0स0आओ ।55/2 गो0बा0स0		
	–	गोरडी 64/3 बी0 रा0 वाणो3।/4बी0रा0	
	–	लोग 2/3 पृ0 रा0 यसो 4/20 पृ0 रा0	
ओं	–	–	कैरों प0 29 गो0 बा0
औ	औगुन 60/2 गो0 बा0 स0 चौदसि प0 2 गो0 बा0 भूलौ ।0/2 गो0 बा0 स0		
	–	मौन 6/26 पृ0 रा0 आयौ 3/18 पृ0 रा0	
औं	–	–	बंलौं 100/1 गो0 बा0 स0
	–	चौंड्उ 95/7 बी0 रा0	–

इस विवरण से स्पष्ट है कि उपर्युक्त ग्रंथों में "अ", "आ" "ई" इन तीन ध्वनिग्रामों की " अं" "आं" "ईं" तीन संध्वनियां मिलती है । निरानुनासिक और सानुनासिक रूप कहीं तो एक दूसरे के परिपूरक रूप में है और कहीं स्वतन्त्र ध्वनिग्राम का निर्माण करते हैं। जहां अर्थ भेदकता का लक्षण सुरक्षित है वहां अनुस्वार खंडेतर ध्वनिग्राम के रूप में माना गया है ।

ॐ

"ॐ" लिपिचिह्न का प्रयोग "गोरखबानी" में केवल दो स्थानों पर हुआ है, जैसे ॐ अकल अभै मात्रा तथा ॐकार प0 35 इसके अन्य तीन वैकल्पिक रूप "ओंकार" म0गो0 57 " ओअंकार" स0 ।।0/2 तथा " वोउं" पंच मात्रा । भी प्राप्त है । प्रथम दो रूपों के आधार पर हम ॐ का उच्चारण " ओड·" तथा " ओअड·" मान सकते हैं किन्तु यहां द्रष्टव्य यह है कि " ओअंकार " शब्द के आग्रह से "एक्कार" के सादृश्य पर बना हुआ है । जैसे – गोरख बोलै एक्कार, नहि तहं बाचा ओअंकार। अगर यहां " एक्कार" शब्द न होता तो ओअंकार के स्थान पर ओंकार ही होता जैसा कि ओंकार है भी । अत: हम कह सकते है कि ॐ का उच्चारण " ओड·" की तरह

कि आगे उसी वर्ग का "क "विद्यमान है किन्तु "ऊँअलकपंथ" में ऊँ के आगे "क" वर्ग का कोई वर्ण नहीं है तो वहां इसका उच्चारण " ओउं" अथवा ओ के साथ "व" श्रुति का आगम होकर "वोउं" रहा होगा । तृतीय वैकल्पिक रूप इसकी पुष्टि कर रहा है ।

(्) का प्रयोग -

गोरखबानी में हलन्त चिह्न मुख्य रूप में व्यंजन - गुच्छ मे व्यंजन के नीचे प्राथमिक और माध्यमिक स्थिति में ही मिलता है। यह चिह्न विकल्प से उन्ही वर्णों के नीचे मिलता है जिनके संयुक्त करने में लेखन की दृष्टि से कठिनाई होती है। यथा -

भर्‌या सं0 28/1 , पढ़्या स0 149/2

यहां पर यह विचारणीय है कि प्राथमिक या माध्यमिक स्थिति में हलन्त व्यंजन गुच्छ में केवल "य" के साथ ही प्रयुक्त हुआ है ।

गोरखबानी मे हलन्त चिन्ह शब्द को व्यंजनांत बनाने के लिये भी प्रयुक्त हुआ है । इस दृष्टि से उसका प्रयोग अंतिम स्थिति में भी हुआ है ।[1] जैसे - सोनम् । बिस्न् सं0 143/1

विसर्ग (:)

विसर्ग का प्रयोग गोरखबानी में केवल एक बार हुआ है -

दु:ष 262/2 गो0 बा0 स0

इसी अर्थ में अन्यत्र इसका वैकल्पिक प्रयोग दुष स0 155/2 गो0 बा0 बिना विसर्ग के भी आया है । इससे प्रकट होता है कि संस्कृत प्रभाव से एक स्थान पर लिपिकार विसर्ग का प्रयोग कर गया है, गोरख-बानी की भाषा की प्रवृत्ति इस प्रकार की नही है । बीसलदेव रास मे भी विसर्ग का प्रयोग नहीं मिलता ।

अनुनासिकता

1- सकारण

2- अकारण

एक तीसरे प्रकार की अनुनासिकता होती है जो पास की नासिक्य ध्वनि के प्रभाव स्वरूप होती है। यह सम्पर्क जनित अनुनासिकता है।

<u>अनुस्वार और अनुनासिकता</u>

कुछ अनुनासिकता में अर्थ भेदक गुण होता है, गोरख-बानी और बीसल देव रास मे इस प्रकार की अनुनासिकता मिलती है। पृथ्वी राज रासो में कुछ स्थलों पर यह अर्थ भेदक है -

पग 3/27	पंग 2/1	पृ0 रा0
अस 5/42	अंस 4/25	पृ0 रा

वर्ग के पंचम वर्ण (ङ, ञ, ण, न, म) के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग -

गंगा 2/2 गो0बा0स0	-	बी0रा0	रंग 2/5	पृ0 रा0
पंच 48/1	"	पंजर 68/3 "	पंचमि 2/6	"
डंड 48/2	"	कुंडल 23/3 "	दंड 2/17	"
इंद्री 77/2	"	चंदन 57/4 "	अंत 3/32	"
बारंबार स0-1	"	कुंकम 57/4 "	-	"

<u>अकारण अनुनासिकता</u>

अकारण अनुनासिकता का प्रयोग तीनों ग्रन्थों में मिलता है -

कांम 17/2	गो0 बा0 स0
मांन 13/2	बी0 रा0
जांति 4/1	पृ0 रा0

सम्पर्क जनित अनुनासिकता

इस प्रकार की अनुनासिकता मे अर्थ भेदक गुण नहीं होता । पृथ्वीराज रासो में इसका बाहुल्य है । गोरख-बानी और बीसल देव रास में भी इसका प्रयोग मिलता है।

बंनि 62/1	बनि 170/2	गो0 बा0 स0
नांह 91/4	नाह 91/4	बी0 रा0
प्रमांण 4/3	प्रमान 2/1	पृ0 रा0

यह वही अनुनासिकता है जिसे डा0 सुनीति कुमार चैटर्जी ने "उक्ति-व्यक्ति प्रकरण की प्राचीन कोसली में " संक्रामक अनुनासिकता" के रूप में लक्षित किया है । इसके प्रमाण कबीर ग्रंथावली के बांन, कांम, रांम आदि शब्दों में भी मिलते है ।

ऋ का प्रयोग

"ऋ " स्वर का प्रयोग अपने मूल रूप में नहीं मिलता है । ऋ के स्थान पर ऋ की मात्रा (ृ) का प्रयोग माध्यमिक स्थिति में अधिक मिलता है ऋ के स्थान पर "रि" का प्रयोग भी हुआ है । पृथ्वीराज रासो मे "र" की सभी मात्राएं ली गई है -

कृपा 160/2	गो0 बा0 स0
मृत 3/1	पृ0 रा0
मृग 52/5	बी0 रा0

"ऋ" के लिये "रि" तथा "र" की मात्राओं का प्रयोग -

रिद्धि दया0 बो0	गो0 बा0
रिण 39/4	बी0 रा0
रितु 4/20	पृ0 रा0
त्रिंग 4/2	पृ0 रा0

कुछ स्थानों पर "ऋ" के लिये "अ", "इ" "ई" , "ए" "रू" का प्रयोग हुआ है-

अ गृह > घर 44/1 गो0 बा0 स0

इ वृक्ष > विरष 58/ गो0बा0 स0, कृत > किय 2/14 पृ0 रा0

ई अमृत > अमीरस 171/2 गो0 बा0स0, हृदय > हीयइ 46/4 बी0 रा0

ए गृह > गेह 4/22 पृ0 रा0

रू वृक्ष > रूष 71/1 बी0 रा0

री ऋश्य > रीझडी 81/3 बी0 रा0

स्वर ग्राम क्रम या स्वर संयोग

गोरख- बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो में प्रयुक्त हुए स्वर संयोगों के विवरण इस प्रकार है -

तीन स्वरों का स्वर संयोग

बीसलदेव रास में तीन स्वरों का स्वर संयोग, आदिम, माध्यमिक और अन्तिम तीनों स्थितियों में नहीं मिलता, गोरख-बानी मे अन्तिम स्थिति का केवल एक उदाहरण मिला है। पृथ्वीराज रासो में माध्यमिक स्थिति का मात्र एक उदाहरण प्राप्त होता है शेष अन्तिम स्थिति के है -

माध्यमिक स्थिति इ आइ - दरिआइन 7/4 पृ0 रा0

अन्तिम स्थिति	उदाहरण	संदर्भ
इ आ ई	पतिआई	गो0 बा0 प0 42
अ इ इ	संपरइइ	पृ0 रा0 3/25
इ अ उ	बढ़िदअउ	पृ0 रा0 3/32
इ आ इ	दरिआइ	पृ0 रा0 5/13
इ अ इ	देषिअइ	पृ0 रा0 7/6

इ ई इ	हिईइ	पृ0 रा0 12/4
अ अ उ	दिष्षअउ	पृ0 रा0 12/12
आ अ उ	उपाअउ	पृ0 रा0 10/1
ई अ उ	तीअउ	पृ0 रा0 12/48
इ अं उ	रधिअंउ	पृ0 रा0 12/48
ई इ अ	दीइअ	पृ0 रा0 3/4
अ उ उ	रद्दउउ	पृ0 रा0 7/23
ओ अ इ	जोअइ	पृ0 रा0 6/19

दो स्वरों का स्वर संयोग

गोरख बानी में 31, बीसल देव रास में 30 तथा पृथ्वीराज रासो में 39 प्रकार के दो स्वरों के स्वर संयोग मिलते हैं -

दो स्वरों का स्वर संयोग	आदिम - संदर्भ	माध्यमिक-संदर्भ	अंतिम-संदर्भ
अ अ	-	अनअच्छिर ग्या•42 गो0बा0	-
	-	किरणअनु 4/7 पृ0 रा0	पलअ 7/15 पृ0 रा0
अ इ	-	गइया ग्या•42 गो0 बा0	मनराइ प• 44 गो0 बा0
	-	बइठा 13/4 बी0 रा0	चितइ 35/1 बी0 रा0
	-	दइल 4/7 पृ0 रा0	कहइ 2/3 पृ0 रा0
अ ई	-	सइंभरि 28/1 बी0 रा0	तइं 126/1 बी0 रा0
	-	अइरावइंदा 4/7 पृ0 रा0	पिहंछिहइं 3/43 पृ0 रा0
	-	कईथन 274/ गो0 बा0 स0	भई 80/2 गो0 बा0 स0
	-	बईठि 105/2 बी0 रा0	गई 67/5 बी0 रा0
	-	-	भई 9/8 पृ0 रा0
	-	कउवा 47 प0 गो0 बा0	-

	–	लाहउर 6/2 पृ0 रा0	भयउ 2/3 पृ0 रा0
अ उं	–	–	दउं 265/1 गो0 बा0 स0
	–	टउंक 20/7 बी0 रा0	करउं 35/5 बी0 रा0
	–	चउंर 2/5 पृ0 रा0	संचरउं 2/11 पृ0 रा0
अ ऊ	–	मऊष 8/9 पृ0 रा0	–
अ ऊं	–	–	प्रपऊं प्रा0 सं0 1 गो0 बा0
अ ए	–	–	भए 15/2 गो0 बा0 स0
	–	–	पीवए 63/4 बी0 रा0
	–	–	उपटए 7/31 पृ0 रा0
अ ओ	–	–	पितओ न0 बी0 गो0 बा0
अ ओं	–	सओंन 2/13 पृ0 रा	–
आ इ	आइ 23/2 गो0बा0स0	चढ़ाइबा 2/1 गो0 बा0 स0	जाइ 171/1 गो0 बा0 स0
	आइ 77/6 बी0 रा0	रसाइण 5/1 बी0 रा0	कबाइ 11/2 बी0 रा0
	आइसं 6/14 पृ0 रा	सकाइता 5/41 पृ0 रा0	दीहाइ 2/2 पृ0 रा0
आ इं	–	रसाइंणा प0 29 गो0 बा0	काइं प0 22 गो0 बा0
	–	–	काइं 3/5 बी0 रा0
आ ई	आई प0 4 8 गो0 बा0	भाईला प0 34 गो0बा0	बाई 24/1 गो0 बा0 स0
	–	जमाईनूं 20/3 बी0 रा	चतुराई 33/4 बी0 रा0
	–	–	सुषदाई 3/15 पृ0 रा0
	–	काउरू प0 40 गो0 बा0	–
	आउ 127/7 बी0 रा0	–	राउ 12/1 बी0 रा0
	–	राउत्त 7/5 पृ0 रा0	राउ 2/1 पृ0 रा0
	–	–	जाउं 30/1 गो0 बा0 स0

आ ऊं	आऊं प0 23 गो0 बा0	-	गाऊं प0 51 गो0 बा0
आं ऊं	-	-	आंऊं प0 8 गो0 बा0
आं ई	-	-	ठांई 2/6 बी0 रा0
आँ इ	-	-	नांइ 12/13 पृ0 रा0
आ ई	-	साईय 82/5 बी0 रा0	-
आ ऊ	-	-	हेहाऊ 89/2 बी0 रा0
आ ए	-	एकाएकों 166/2 गो0 बा0 स0	-
	-	-	आए 8/5 पृ0 रा0
आ ओ	आओ 155/1 गो0 बा0 स0	-	पाओं प्रा0 सं0 2 गो0 बा0
इ अ	-	त्रिअक्षरी प0 13 गो0 बा0	-
	इअर 2/1 पृ0 रा0	दिप्पिअर 4/8 पृ0 रा0	पिअ 2/4 पृ0 रा0
इ आं	-	-	दुनिआं 12/19 पृ0 रा0
इ आ	-	अधिआरी 7/21 पृ0 रा0	परछिआ 2/1 पृ0 रा0
इ इ	-	कोरिइस्य 88/6 बी0 रा0	-
	-	लिइहिं 4/7 पृ0 रा0	-
इ उ	-	-	चढिउ 121/3 बी0 रा0
	-	-	संकुरिउ 2/3 पृ0 रा0
	-	-	सिउं 11/6 बी0 रा0
	-	-	देखिए 4/23 पृ0 रा0
	-	-	उग्गिउं 3/30 पृ0 रा0
	-	दीअन 12/41 पृ0 रा0	बीउ 2/5 पृ0 रा0
	-	-	कहीए प0 48 गो0 बा0
	-	-	प्रीउ 127/3 बी0 रा0

उ अ	उअर 8/25 पृ0 रा0	गुरुअर 3/42 पृ0 रा0	तुअ 3/25 पृ0 रा0
उ अं	उअंत 4/25 पृ0 रा0	सुअंगा 7/25 पृ0 रा0	–
उ आ	–	भुआल 9/1 बी0 रा0	भुआ 29/2 बी0 रा0
	–	चहुआन 2/3 पृ0 रा0	–
उ आं	–	चहुआंण 10/5 बी0 रा0	–
	–	चहुआंन 4/1 पृ0 रा0	–
उं आं	–	चहुंआंण 9/6 बी0 रा0	–
उ इ	–	–	अनुभुइ प0 48 गो0 बा0
	–	–	दुइ 29/4 बी0 रा0
उ ई	–	–	सुई प0 19 गो0 बा0
	–	–	हुई 25/1 बी0 रा0
उ इं	–	–	भुइं 68/5 बी0 रा0
ऊ अ	–	दूअनय 106/1 बी0 रा0	–
	–	भूअदंड 4/7 पृ0 रा0	–
ऊ अं	–	–	जूअं 8/10 पृ0 रा0
ऊ आ	–	भूआण 28/2 बी0 रा0	–
	–	भूआल 3/38 पृ0 रा0	–
	–	–	हूउ 30/1 बी0 रा0
	–	देअत 12/14 पृ0 रा0	अनेअ 2/5 पृ0 रा0
	–	प्रापेडथ्वा 2/25 पृ0 रा0	–
	–	–	देइ 135/2 गो0 बा0 स0
	–	–	देइ 124/1 बी0 रा0
	–	–	देई 47/2 गो0 बा0 स0

ए उं	–	–	लेउं 6/13 पृ0 रा0
	–	–	क्षेउं 79/5 बी0 रा0
ओ ऽ	–	दैयोउपि 3/6 पृ0 रा0	–
ओ आ	–	भोआल 7/31 पृ0 रा0	–
ओ इ	–	कोइला प0 34 गो0 बा0	होइ 23/2 गो0 बा0 स0
	–	–	रोइ 67/4 बी0 रा0
	–	जोइतं 10/10 पृ0 रा0	कोइ 2/3 पृ0 रा0
ओ ई	–	षोईला प0 2 गो0 बा0	गोई 11/2 गो0 बा0 स0
	–	–	कोई 121/8 बी0 रा0
	–	–	संजोई 10/10 पृ0 रा0
ओ ऊ	–	–	दोऊ प0 6 गो0 बा0
	–	–	दोऊ 12/37 पृ0 रा0
ओ ओ	–	–	जोओ प0 7 गो0 बा0
औ अ	–	वौअक्षरी प0 13 गो0 बा0	–
अं उ	–	संउपि 3/14 पृ0 रा0	–

व्यंजन परीक्षण

आदिकालीन काव्य में प्रयुक्त हुई व्यंजन ध्वनियों का विवरण इस प्रकार है -

स्पर्श क् ख् ग् घ्

ट् ठ् ड् ढ्

त् थ् द् ध्

प् फ् ब् भ्

स्पर्श संघर्षी च् छ् ज् झ्

अनुनासिक ण् न् म् §ञ§ §ङ·§ § न्ह् , म्ह §[1]

पार्श्विक ल् § ल्ह् §[2]

लुंठित स् § श् § §ष् § ह्

अर्ध स्वर य् व्

उत्क्षिप्त §ड़·§ §ढ़§

उपर्युक्त 29 व्यंजन ध्वनियां स्वल्पान्तर युग्म मे आकर अर्थभेदक सिद्ध हुई हैं। अतएव ये ही गोरखबानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो आदि के प्रधान व्यंजन ध्वनिग्राम हैं।

§ § में वर्णित ध्वनियां सहध्वनियां है।

1, 2 - डा0 धीरेन्द्र वर्मा ने " हिन्दी भाषा का इतिहास " में न्ह, म्ह तथा ल्ह को न् , म् , ल् व्यंजनों का महाप्राण रूप स्वीकार किया है, प्रा0 सं0 120- 121, अनुच्छेद 61, 62, 65· परन्तु कुछ भाषा वैज्ञानिक डॉ0 उदय-नारायण तिवारी आदि इन्हें मात्र व्यंजन संयोग ही स्वीकार करते हैं।

काव्य में पाये जाने वाले २९ व्यंजनों को आधुनिक मानक हिन्दी के सन्दर्भ में निम्नलिखित तालिका में व्यक्त किया जा सकता है ।

प्रयत्न-स्थान	ओष्ठ्य	दन्त्य	वर्त्स्य	तालव्य	मूर्धन्य	कंठ्य	स्वरयंत्रमुखी
स्पर्श	प् फ् ब् भ्	त् थ् द् ध्			ट् ठ् ड् ढ्	क् ख् ग् घ्	
स्पर्श-संघर्षी				च् छ् ज् झ्			
नासिक्य	म् (म्ह्)	न् (न्ह्)		(ञ्)	ण्	(ङ्)	
पार्श्विक		ल् (ल्ह्)					
लुंठित		र					
उत्क्षिप्त					(ड़) (ढ़)		
संघर्षी		स्		(श्)	(ष्)		ह्
अर्धस्वर	व्			य्			

ङ्,ञ् – आदिकालीन काव्य में अनुनासिक व्यंजन ङ् और ञ् की ध्वनिग्रामिक स्थिति स्पष्ट नहीं है अधिकांश रूप में इन वर्णग्रामों के स्थान पर अनुस्वार ही प्रयुक्त हुआ है फिर भी इस काल में यह ध्वनियां संस्वन के रूप में अपना स्थान बनाये हुए है। क वर्ग के पूर्व न (ङ्) तथा च वर्ग पूर्व न(ञ्) संस्वन के रूप में सुनायी पड़ता है। ये दोनो संस्वन ध्वनियाँ केवल माध्यमिक स्थिति में ही प्रयुक्त हुई है आरम्भिक तथा अन्तिम स्थिति में इनका कोई स्थान नहीं है।

यथा–

अंगुल	उड़्गुंल	गो०बा०स०1/7
निरंजन.	निर~जन	गो०बा०स० 44/2

ड, ढ तथा ड़, ढ़, दोनो का ही प्रयोग मिलता है।

पढि	पढि	गो०बा०स० 59/1
गढ़	गढ़	बी०र० 22/6

व्यंजन–परीक्षण
==============

आदिकालीन काव्य में प्रयुक्त व्यंजन ध्वनियों का विवरण इस प्रकार है:–

व्यंजन	संस्वन	आदिम स्थिति	संदर्भ	माध्मिक स्थिति	संदर्भ
क्	क्	कलमा	11/1गो०बा०स०	अहंकार	29/2गो०बा०स०
		कडिहि	58/2बी०र०	आकुली	15/1बी०र०
		कन्वज्ज	2/1 पृ०र०	अंकुर	2/4पृ०र०
ख्	ख्	खेहाडंबर	15/6बी०र०	देखि	59/6बी०र०
		खाई	58/1गो०बा०स०	देषि	गो०बा०स०
		खल	5/10पृ.र०	संदूखि	7/10 पृ०र०
ग्	ग्	गगनि	4/2गो०बा०स०	गगन	51/2 गो०बा०[illegible]
		गउरिका	1/1बी०र०	भगल	25/4बी०र०
		गय	2/1 पृ०र०	जंगलि	2/93 पृ०र०
घ्	घ्	घटि	19/2गो०बा०स०	—	—

		घरि 10/3	बी0 रT0	बघेरडइ 14/1	बी0 रT0
		घन 3/13	पृ0 रT0	सिंघ 2/3	पृ0 रT0
च्	च्	चंद 51/2	गो0 बT0 स0	विचारी 83/2	गो0 बT0 स0
		चतुर 7/4	बी0 रT0	अंचल 46/2	बी0 रT0
		चंपक 2/5	पृ0 रT0	वचन 2/14	पृ0 रT0
छ्	छ्	छाया 50/2	गो0 बT0 स0	उछलिया 12/1	गो0 बT0 स0
		छत्र 14/5	बी0 रT0	उछाह 10/2	बी0 रT0
		छात्त 2/5	पृ0 रT0	वच्छ 2/4	पृ0 रT0
ज्	ज्	जल 2/2	गो0 बT0 स0	रिजक 159/2	गो0 बT0 स0
		जाति 10/6	बी0 रT0	राजा 35/1	बी0 रT0
		जग्गु 2/1	पृ0 रT0	राजसू 2/1	पृ0 रT0
झ्	झ्	झरपै 67/2	गो0 बT0 स0	नीझर 61/2	गो0 बT0 स0
		झूलउ 2/6	बी0 रT0	रोझडी 81/3	बी0 रT0
		झुकि 2/1	पृ0 रT0	सेझया 4/23	पृ0 रT0
ट्	ट्	टाटी प0 41	गो0 बT0	पटण 43/2	गो0 बT0 स0
		टंडक 20/6	बी0 रT0	बेटी 48/3	बी0 रT0
		टोप 7/6	पृ0 रT0	कटके 3/6	पृ0 रT0
ठ्	ठ्	ठबकि 27/1	गो0 बT0 स0	अठसठि 13/2	गो0 बT0 स0
		ठांइ 2/6	बी0 रT0	तूठी 5/2	बी0 रT0
		ठग्गु 6/18	पृ0 रT0	राठवर 4/1	पृ0 रT0
ड्	ड्	डंड 48/1	गो0 बT0 स0	पंडित 22/2	गो0 बT0 स0
		डाबी 66/3	बी0 रT0	जुडइ 4/5	बी0 रT0
		डर 3/32	पृ0 रT0	घोडसा 2/1	पृ0 रT0

द	द	दरि 145/1	गो0 बा0 स0	पदृया 119/2	गो0 बा0 स0
			–	गढ 31/4	बी0 रा0
		दरहिं 2/5	पृ0 रा0	वाढति 2/24	पृ0 रा0
त	त	तत्त 47/2	गो0 बा0 स0	संताप 43/2	गो0 बा0 स0
		तन 114/5	बी0 रा0	मता 4/3	बी0 रा0
		तमु 2/3	पृ0 रा0	हत्थु 3/7	पृ0 रा0
थ	थ	थांन 82/1	गो0 बा0 स0	नाथ्या 11/1	गो0 बा0 स0
		थारइ 38/1	बी0 रा0	हाथि 22/1	बी0 रा0
		थट्ट 7/27	पृ0 रा0	मनमथ्थ 2/4	पृ0 रा0
द	द	दास 16/2	गो0 बा0 स0	उदके 24/2	गो0 बा0 स0
		दरब 50/2	बी0 रा0	वंदन 17/4	बी0 रा0
		दल 2/3	पृ0 रा0	समुद्या 2/1	पृ0 रा0
ध	ध	धन 19/1	गो0 बा0 स0	ब्याधिका 42/1	गो0 बा0 स0
		धजा 13/7	बी0 रा0	परधान 109/2	बी0 रा0
		धरि 2/1	पृ0 रा0	परधान 2/1	पृ0 रा0
प	प	पाखंडी 47/1	गो0 बा0 स0	सुपनै 47/1	गो0 बा0 स0
		पारपत 2/5	बी0 रा0	कूपल 49/4	बी0 रा0
		पथ्थ 2/1	पृ0 रा0	द्वापर 2/3	पृ0 रा0
फ	फ	फूल 87/1	गो0 बा0 स0	गुफा 132/1	गो0 बा0 स0
		फूल 52/3	बी0 रा0	झंफघउं 44/6	बी0 रा0
		फल 2/7	पृ0 रा0	विफ्फरइ 2/2	पृ0 रा0
ब	ब	बसती 1/1	गो0 बा0 स0	डूबन्त 24/2	गो0 बा0 स0
		बाहण 1/4	बी0 रा0	बिबाह 19/2	बी0 रा0

भ्	भ्	भवन 5/1	गो0 बा0 स0	जिभ्या 152/1	गो0 बा0 स0
		भाट 8/2	बी0 रा0	बंभण 38/4	बी0 रा0
		भूमि 2/1	पृ0 रा0	सुभाइ 2/3	पृ0 रा0
म्	म्	मन 8/1	गो0 बा0 स0	समांन 47/2	गो0 बा0 स0
		मनिहि 10/2	बी0 रा0	पमारि10/6	बी0 रा0
		महि 2/2	पृ0 रा0	सुमंत 2/1	पृ0 रा0
ण्	ण्	–		बपिणै 50/2	गो0 बा0 स0
		–		उणारा 114/1	बी0 रा0
		पर 4/11	पृ0 रा0	रणथंभ 2/17	पृ0 रा0
न्	न्	नर 20/1	गो0 बा0 स0	अनंत 45/2	गो0 बा0 स0
		नयण 47/6	बी0 रा0	पूनिम 16/4	बी0 रा0
		नरेसु 2/3	पृ0 रा0	कनक्क 3/17	पृ0 रा0
	न्ह	न्हासै 207/2	गो0 बा0स0	चीन्ह 248/2	गो0 बा0 स0
		न्हाणा 67/4	बी0 रा0	दीन्ही 8/2	बी0 रा0,
		न्हानु 3/40	बी0 रा0	तराजुन्ह 4/25	पृ0 रा0
	म्ह	म्हारा प0 1	गो0 बा0	अम्हे 104/1	गो0 बा0स0
		म्हे 36/4	बी0 रा0	साम्हइ 70/4	बी0 रा0
		–	–	तुम्ह 2/10	पृ0 रा0
य्	य्	यंद्री 36/1	गो0 बा0 स0	पियासा 23/2	गो0 बा0 स0
		–		तुरीय 21/4	बी0 रा0
		यग्य 4/10	पृ0 रा0	जयचंद 2/3	पृ0 रा0
र्	र्	रवी 57/1	गो0 बा0 स0	करणी 62/2	गो0 बा0 स0
		रतन 47/2	बी0 रा0	सारदा 5/2	बी0 रा0

ल्	ल्	लंका 64/2	गो0 बा0 स0	पलंका 64/2	गो0 बा0 स0
		लगन 8/2	बी0 रा0	कुलीय 9/3	बी0 रा0
		लता 4/15	पृ0 रा0	अलक 2/5	पृ0 रा0
	ल्ह	–		मेल्हा 153/1	गो0 बा0 स0
		–		काल्ह 38/3	बी0 रा0
		–		अल्हन 8/24	पृ0 रा0
व्	व्	वारं 104/1	गो0 बा0 स0	जोवन 19/1	गो0 बा0 स0
		वर 4/3	बी0 रा0	दिवाण 6/1	बी0 रा0
		वसंत 2/5	पृ0 रा0	भुवगोल 2/1	पृ0 रा0
स्	स्	सबद 4/2	गो0 बा0 स0	दिसंतर 29/2	गो0 बा0 स0
		सरब 5/6	बी0 रा0	दिसइ 3/4	बी0 रा0
		सरोवर 3/31	पृ0 रा0	वास 2/3	पृ0 रा0
	श	–		ईश्वर 144/1	गो0 बा0 स0
		शंकापि 3/6	पृ0 रा0	दिल्लीश्वर 2/25	पृ0 रा0
ह्	ह्	हठ 31/2	गो0 बा0 स0	सहज 45/2	गो0 बा0 स0
		हारि 108/1	बी0 रा0	कहइ 7/5	बी0 रा0
		हय 2/1	पृ0 रा0	वाहन 3/16	पृ0 रा0
	ञ	–		निरञ्जन 44/2	गो0 बा0 स0

आदिकाल के ग्रन्थोंमे"ञ" ध्वनि का प्रयोग प्राय: नहीं मिलता । आलोच्य ग्रंथ बीसलदेव रास में भी इसका प्रयोग नहीं हुआ है, गोरखबानी और पृथ्वीराज रासो में ये प्रयोग गिनती के है जिसे मुद्रण दोष कहा जा सकता है ।

संयुक्त व्यंजन या व्यंजन संयोग

व्यंजन संयोग को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है

1- एक रूप या समवर्गीय व्यंजन संयोग

2- भिन्न रूप या भिन्न वर्गीय व्यंजन संयोग

1- <u>एक रूप व्यंजन संयोग</u>

गोरख-बानी और बीसलदेव रास मे व्यंजन द्वित्व के प्रयोग गिनती के हैं लेकिन पृथ्वीराज रासो मे ऐसे उदाहरणों का आधिक्य है । सभी उदाहरण माध्यमिक स्थिति में मिलते हैं ।

क- <u>स्पर्श व्यंजन द्वित्व</u>

क्	क्	- गो० बा०	- बी०रा०	मुक्कइ 2/5 पृ० रा०
ख्	ख्	-	-	मुख्ख 2/3 "
ग्	ग्	-	-	अग्गइ 2/26 "
घ्	घ्	-	-	उघ्घरउ 5/38 "
ट्	ट्	मिट्टी गो०बा०पृ०	-	कट्टहि 2/3 "
ठ्	ठ्	- गो०बा०	-	बिठ्ठउ 2/7 "
ड्	ड्	-	-	उड्डंति 2/7 "
ढ्	ढ्	-	-	बढ्ढअउ 3/32 "
त्	त्	चित्त 19/1 गो०बा०स०	मत्तइ1/2 बी० रा०	पुत्तय 2/5 "
थ्	थ्	-	-	अथ्थर 2/23 "
द्	द्	-	-	विद्दुणन 2/3 "
ध्	ध्	-	-	निध्धानिय 2/5 "
प्	प्	-	तप्पइ1/2 बी०रा०	परसप्पर 2/5 "
फ्	फ्	-	-	विफ्फुरइ 2/2 "
ब्	ब्	-	-	कुब्बन 2/22 "
भ्	भ्	-	-	विभ्भीक्षन 5/13 "

ख - स्पर्श संघर्षी व्यंजन द्वित्व

च् च्	- गो० बा०	- बी० रा०	उच्चरउ 2/3 पृ० रा०
छ् छ	-	-	अछ्छरी 2/5 "
ज् ज्	-	-	प्रज्जालिय 2/5 "
झ् झ	-	-	सुझ्झवइ 2/13 "

ग - अनुनासिक व्यंजन द्वित्व

ण् ण्	- गो० बा०	- बी० रा०	वारण्ण 2/1 पृ० रा०
न् न्	पुन्ने सि०द०गो०बा० जगन्नाथ 30/4 "		नयन्नुन 3/7 "
म् म्	-	-	सम्मीर 2/5 "

घ - पार्श्विक व्यंजन द्वित्व

ल् ल्	-	कल्लाल 61/4 बी० रा०	पल्लव 2/5 पृ० रा०

ङ - संघर्षी व्यंजन द्वित्व

स् स्	-	-	कलस्स 4/10 पृ० रा०

च- अर्धस्वर द्वित्व

व् व्	-	जुव्वनु 2/23 पृ० रा०

छ - लुंठित व्यंजन द्वित्व

र् र् अर्य्य ग्या० सि० गो० बा०

2- भिन्न वर्गीय व्यंजन संयोग

गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में प्राप्त व्यंजन संयोगों के विवेचन से स्पष्ट होता है कि संयोग के द्वितीय सदस्य के रूप मे प्राय: य, व, र आते हैं

जिनका विश्लेषण नीचे क्रमशः प्रस्तुत किया गया है ।

व्यंजन +	य	आदिम स्थिति	संदर्भ	माध्यमिक स्थिति	संदर्भ
क्	य्	क्यारी 37/1	गो0बा0स0	धड़क्या प0 31	गो0 बा0
		क्यउँ 92/3	बी0 रा0	संक्या 109/4	बी0 रा0
		-		मुक्यउ 2/7	पृ0 रा0
(ख) ष्	य्	ष्याल 237/2	गो0 बा0 स0	-	
		-		लेख्यउ 27/6	बी0 रा0
ग्	य्	ग्यान 36/1	गो0 बा0 स0	जाग्यौ प0 10	गो0 बा0
		-		रंग्या 72/5	बी0 रा0
		ग्यायते 3/6	पृ0 रा0	यग्य 4/10	पृ0 रा0
घ्	य्	घ्यारि 197/1	गो0 बा0 स0	बंध्या 6/2	गो0 बा0 स0
			-	मंगलच्यार 10/4	बी0 रा0
			-	नच्यउ 3/41	पृ0 रा0
			-	सिछ्या सि0 द0	गो0 बा0
ज्	य्	ज्यंद 55/1	गो0 बा0 स0	नीपज्या प028	गो0 बा0
			-	देज्यो 4/3	बी0 रा0
		ज्यउं 5/13	पृ0 रा0	सेज्या 3/2	पृ0 रा0
झ्	य्	-		सेझ्या 4/23	पृ0 रा0
ट्	य्	-		केवट्या प0 23	गो0 बा0
		-		उलट्यउ 77/3	बी0 रा0
ड्	य्	-		पड्यउ 68/3	बी0 रा0
		-		विग्गड्यउ 2210	पृ0 रा0
द्	य्	-		पद्या 119/2	गो0 बा0 स0

ष्	य्	–		गुण्या 119 / 2	गो० बा० स०
		–		गण्यउ 7/30	पृ० रा०
त्	य्	त्यागि 260/2	गो० बा० स०	जीत्या 219/2	गो० बा० स०
		त्यजति 7/24	पृ० रा०	नृत्य 7/6	पृ० रा०
थ्	य्	–		असमथ्थ्य 2/3	पृ० रा०
द्	य्	धउं 60/2	बी० रा०	–	
		–		विधमान 6/7	पृ० रा०
ध्	य्	ध्यांन 8/1	गो० बा० स०	बुध्या 30/1	गो० बा०स०
		–		बांध्या 97/2	बी० रा०
		–		मध्य 4/22	पृ० रा०
ड्	य्		–	पड्या 31/1	गो० बा० स०
न्	य्	न्यंद्रा 36/2	गो० बा० स०	सुन्यं 1/1	गो० बा० स०
		–		सन्यासीय 101/3	बी० रा०
		न्याय 5/8	पृ० रा०	मन्यउ 2/11	पृ० रा०
प्	य्	प्यंजरै 68/2	गो० बा० स०	भाप्या 200/2	गो० बा० स०
ब्	य्	ब्याहटी 48/2	बी० रा०	--	
भ्	य्	भ्यंने प० 12	गो० बा०	जिभ्या 60/1	गो० बा० स०
		–		लभ्यु 8/36	पृ० रा०
म्	य्	म्यंत्र 40/2	गो० बा० स०	जांम्या प० 6	गो० बा०
		--		हरम्य 9/4	पृ० रा०
र्	य्	--		पसार्‌या 19/2	गो० बा० स०
		--		भर्‌या 77/2	बी० रा०
		--		नर्‌यंद 3/8	पृ० रा०

ल्	य्	ल्यंग प० 38	गो० बा०	फूल्या 87/2	गो० बा० स०
		ल्यउंगी 55/4	बी० रा०	मिल्या 77/5	बी० रा०
		--		बोल्यउ 2/3	पृ० रा०
व्	य्	व्याधिका 42/2	गो० बा० स०	आव्या	गो० ब्रजु/मा०बा०
		--		पूरव्यउ 41/6	बी० रा०
		व्याकरन 5/5	पृ० रा०	दिव्य 7/15	पृ० रा०
स्	य्	स्यूं 265/1	गो० बा० स०	प्रकास्या 4/2	गो० बा० स०
		---		पगस्यउं 47/3	बी० रा०
		स्यामु 7/17	पृ० रा०	चंपकस्य 2/29	पृ० रा०
ह्	य्	--		विसाह्या 154/1	गो० बा० स०
		--		कह्यउ 51/5	बी० रा०
		--		रह्यउ 3/29	पृ० रा०
श्	य्	--		पश्यामि 9/11	पृ० रा०

व्यंजन + व		आदिम स्थिति - संदर्भ	माध्यमिक स्थिति - संदर्भ
ग्	व्	ग्वालिया प० 21 गो० बा०	--
		ग्वालेरि 33/4 बी० रा०	--
ज्	व्	ज्वाला 169/1 गो० बा० स०	--
त्	व्	तत्व आ० बो० गो० बा०	--
द्	व्	द्वारा 135/1 गो० बा० स०	एद्वा प० 15 गो० बा०
		द्वादस 102/2 बी० रा०	--
		द्वापर 2/3 पृ० रा०	--
थ्	व्	-	पृथ्वी प० 11 गो० बा०
स्	व्	स्वाद 25/1 गो० बा० स०	जोगेस्वर 3/2 गो० बा० स०

		स्वामी 32/6 बी0 रा0	–
		स्थाति 4/20 पृ0 रा0	अस्व 3/4 पृ0 रा0
श्	व	–	ईश्वर 44/1 गो0 बा0 स0
		–	दिल्लीश्वर : 2/25 पृ0 रा0
ह्	व्	–	ह्वै 133/2 गो0 बा0 स0
व्यंजन + र		आदिम स्थिति – संदर्भ	माध्यमिक स्थिति – संदर्भ
क्	र	क्रोध 7/1 गो0 बा0 स0	चक्र 105/1 गो0 बा0 स0
		क्रप्पान 2/17 पृ0 रा0	चक्रभेष 5/38 पृ0 रा0
ग्	र	ग्रन्थ प्रा0 स0 गो0 बा0	नग्री 30/1 गो0 बा0 स0
		ग्रह 54/5 बी0 रा0	उग्रहइ 28/3 बी0 रा0
		ग्राहि 2/3 पृ0 रा0	सग्रीव 3/17 पृ0 रा0
ज्	र	–	वज्र 12/13 पृ0 रा0
त्	र	त्रेता प0 28 गो0 बा0	–
		त्रीया 53/5 बी0 रा0	छत्र 14/5 बी0 रा0
		त्र्यत 4/5	छत्रबंध 2/1 पृ0 रा0
द्	र	द्रैजी 60/10 बी0 रा0	भद्रा 56/9 बी0 रा0
		द्रुमपत्त 2/5 पृ0 रा0	चंद्र 6/29 पृ0 रा0
ध्	र	–	गंध्रप 198/1 गो0 बा0 स0
प्	र	प्रवार्थी 65/2 गो0 बा0 स0	निसप्रेही 195/2 गो0 बा0 स0
		प्रीउ 54/2 बी0 रा0	–
		प्रमान 2/1 पृ0 रा0	संक्रापता 5/41 पृ0 रा0
ब्	र	ब्रहांड 70/1 गो0 बा0 स0	—
भ्	र	भ्रमाया 96/2 गो0 बा0 स0	—

		भ्रमिग 4/17 पृ0 रा0	भ्रुत 3/5 पृ0 रा0
म्	र	-	अम्रित 6/11 पृ0 रा0
न्	र	न्रत्यान 4/10 पृ0 रा0	-
स्	र	स्रपनीं प0 45 गो0 बा0	सहस्र 53/1 गो0 बा0 स0
		स्रावन 76/6 बी0 रा0	--
		स्रवननु 2/5 पृ0 रा0	--
श्	र	श्रीगोरष 22/2 गो0 बा0 स0	--
		श्रवन्न 3/17 पृ0 रा0	--

अल्पप्राण + महाप्राण

		माध्यमिक स्थिति	संदर्भ
च्	छ	इच्छा	म0 गो0 गु0 गो0 बा0
		कुच्छनउ	3/1 बी0 रा0
		अच्छ्र	2/5 पृ0 रा0
क्	ख्	दक्खिनी	5/13 पृ0 रा0
त्	थ्	तित्थ	58/6 बी0 रा0
		हत्थ	4/14 पृ0 रा0
द्	ध्	सिद्धौ	दया बो0 गो0 बा0
		बुद्धि	2/4 बी0 रा0
		समुद्धा	3/5 पृ0 रा0

आदिम स्थिति का एक ही उदाहरण मिलता है -

क्	ख्	क्खिन	2/5 पृ0 रा0

व्यंजन + ह

		आदिम स्थिति - संदर्भ	माध्यमिक स्थिति - संदर्भ
न्	ह	न्हासै 209/2 गो0 बा0 स0	चीन्ह 248/2 गो0 बा0 स0

		न्हांनु 3/4 पृ0 रा0	-
म्	ह्	म्हारा प0 1 गो0 बा0	अम्हे 104/1 गो0 बा0 स0
		म्हांनू 27/4 बी0 रा0	साम्हड 90/4 बी0 रा0
		—	गिम्ह 12/21 पृ0 रा0
ल्	ह्	--	मेल्हा 153/1 गो0 बा0 स0
		--	नाल्ह 4/6 बी0 रा0
		--	गल्ह 12/21 पृ0 रा0

संघर्षी + दन्त्य

		माध्यमिक स्थिति	—	संदर्भ
स्	त्	मस्त 77/2		गो0 बा0 स0
		मस्तक 96/5		बी0 रा0
		रूस्तम 11/8		पृ0 रा0
स्	थ्	अस्थान 127/1		गो0 बा0 स0
		गलस्थल 5/41		पृ0 रा0

संघर्षी + मूर्धन्य

		माध्यमिक स्थिति	—	संदर्भ
ष्	ट्	दृष्टि 75/1		गो0 बा0 स0
		अष्टमी 7/21		पृ0 रा0 [1]

1- "श" "ष" ध्वनि ग्राम के रूप में नही है। किन्तु सह ध्वनिग्राम के रूप में प्रयुक्त है। "स" जब तालव्य ध्वनियों के पूर्व आता है तब तो "श" सहध्वनि और मूर्धन्य ध्वनियों के पूर्व आता है तब "ष" सहध्वनि के रूप में उच्चारित होता है।

अन्य व्यंजन संयोग -		आदिम स्थिति म्लेच्छ 11/17 पृ0 रा0 माध्यमिक स्थिति -	संदर्भ
क्	त	सक्ति प0 12	गो0 बा0
		युक्तानि 9/12	पृ0 रा0
ष्	ख् (ष)	गवष्किषन 6/20	पृ0 रा0
ड्	द	कड्ढे 6/5	पृ0 रा0
प्	म्	आत्मा प0 41	गो0 बा0
त्	स	वसंतोत्सवे 2/24	पृ0 रा0
त्	प्	उत्पति	वि0पु0 गो0 बा0
न्	द	सुन्दरि 6/9	पृ0 रा0
		हिन्दू 14/1	गो0 बा0 स0
न्	त	तुरन्त 24/2	"
न्	ध्	बन्धु प0 46	गो0 बा0
न्	म्	जन्मानि 10/10	पृ0 रा0
ञ	ज्	निरञ्जन 44/2	गो0 बा0 स0
ङ्	क्	संङ्कित 217/2	"
ङ्	ग्	संङ्ग 246/2	"
ण्	ड	पिण्ड म0 गो0 बो0 गो0 बा0	
ण्	ठ	कण्ट "	
ष्	फ्	पुष्फांजलि 3/36	पृ0 रा0
प्	त	सप्त रोमावली	गो0 बा0
प्	ष्	उप्पलिज 2/5	पृ0 रा0
ब्	द	सब्द प0 35	गो0 बा0
म्	ब्	कुटुम्ब 179/2	गो0 बा0 स0
व्	भ्	नंदाननव्भासने 9/12	पृ0 रा0

ष्	न्	विष्न	199/1	गो0 बा0 स0
ष्	म्	ग्रीष्म	9/10	पृ0 रा0
ष्	प्	पुष्प	10/11	पृ0 रा0
ह्	म्	ब्रह्म	7/5	पृ0 रा0

तीन व्यंजनों का संयोग

	माध्यमिक स्थिति		— संदर्भ
स् त् र्	सास्त्र 6/1		गो0 बा0 स0
	अस्त्री	41/2	बी0 रा0
प् र् ष् ण्	पृष्णां	प0 16	गो0 बा0 स0
न् द् र्	चन्द्र	आ0 बो0 गो0 बा0	
	इन्द्री	पं0 मा0 गो0 बा0	
त् स् स् थ्	तत्स्थाने	2/20 पृ0 रा0	
व् र् त् त्	आवर्त्त	9/10 पृ0 रा0	

गोरख-बानी बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में आये हुये व्यंजन ध्वनि ग्रामों के विश्लेषण से कुछ विशेष तथ्य प्रकाश में आते हैं -

"ण" और "न" का प्रयोग

"ण" और "न" दोनों ही स्वतंत्र ध्वनिग्राम हैं। "ण" ट वर्गी नासिक्य ध्वनि है, तथा "न" त वर्गी ध्वनि है। गोरख-बानी तथा पृथ्वी राज रासो में "ण" और "न" समानार्थी होकर आये है -

गुंन 60/2 - गुण 149/2 गो0 बा0 स0

बिनु 2/15 - विणु 8/2 - पृ0 रा0 ﴾ दोनों ही अभाव सूचक अव्यय हैं ﴿

साथ ही "ण" और "न" का परस्पर विनियोग भी मिलता है अर्थात "ण" के

"ण" के स्थान पर "न" तथा "न" के स्थान पर "ण" का प्रयोग -

छीन (छीण)	गो० बा० स० 137/2
व्याकरन (व्याकरण)	पृ० रा० 5/13
कहाणी (कहानी)	गो० बा० स० 37/2
णारी (नारी)	पृ० रा० 7/10
णर (नर)	पृ० रा० 4/11
पिणास (पिनास)	बी० रा० 5/6

बीसल देव रास मे "न" के स्थान पर सर्वत्र "ण" का प्रयोग हुआ है। केवल आदिम स्थिति में "न" के स्थान पर " न" का प्रयोग ही मिलता है यही स्थिति गोरख- बानी में भी है।

"ष" "ख" का प्रयोग

गोरख बानी , बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो इन तीनों ग्रन्थो में "क" वर्गी "ख" के लिये अधिकतर "ष" का प्रयोग हुआ है -

षांउ (खाउं)	गो० बा० स० 30/2
षाणि (खान)	बी० रा० 35/1
षग (खग)	पृ० रा० 11/18

प्राचीन तथा मध्यकालीन हस्तलिखित प्रतियों मे वर्ण "ष" किस प्रकार "ख" ध्वनि का घोतक हो गया , यह भी एक समस्या है। कुछ लोगों का अनुमान है कि जब संस्कृत - पाली- प्राकृत - अपभ्रंश में "ष" की ध्वनि ग्रामिक स्थिति लुप्त हो गयी तब "ष" वर्ण ग्राम भी एक अतिरिक्त वर्ण ग्राम हो गया। "ख" ध्वनि को घोतित करने के लिये वर्ण ग्राम "ख" बहुत स्पष्ट रूप से "ख" का बोध नहीं करा पाता था, क्योंकि इससे "र" , "व" का भ्रम हो जाता था। संभवत: इसीलिये "ष" से "ख" का बोध

कराया जाने लगा ।[1]

"व्" और "व्" का प्रयोग

"व" के स्थान पर "ब" का प्रयोग अनेक स्थलों पर हुआ है -

बार्पी गो० बा० स० 107/2

बेद बी० रा० 14/2

बीब्ब पृ० रा० 2/10

कहीं - कहीं दोनो समानार्थी होकर आये हैं -

विस्न 10/2 बिस्न 14/2 गो० बा० स०

जोवन 87/2 जोबन 104/5 बी० रा०

वान 7/10 बान 3/10 पृ० रा०

"ज्" और "य" का प्रयोग

"ज" और "य" के प्रयोग में भी अनिमितता मिलती है -

जोगी (योगी) 14/1 गो० ब० स०

जांन (यान) 13/1 बी० रा०

रयणि (रजनी) 3/5 पृ० रा०

"श" "स" "ष" का प्रयोग

बीसल देव रास में सर्वत्र "श" के स्थान पर "स" का प्रयोग हुआ है गोरख बानी तथा पृथ्वी राज रासो में भी ऐसे ही प्रयोग अधिक मिलते हैं -

प्रकास (प्रकाश) गो० बा० स० 1/1

सीय (शीत) बी० रा० 70/1

"श" के कुछ ही उदाहरण मिलते हैं -

ईश्वर गो० बा० स० 144/1

शंकापि पृ० रा० 3/5

"ष" वर्ण अधिकांशत: "ख" ध्वनिग्राम के लिये प्रयुक्त हुआ है परन्तु कहीं - कहीं अपने मूर्धन्य रूप में भी है -

अष्टांग गो० बा० स० 133/1

घट पृ० रा० 2/15

स्पष्ट है कि यहाँ पर "ष" का प्रयोग मूर्धन्य ध्वनि "ट" के कारण है ।

पुरुष बी० रा० 64/2

मूर्धन्यीकरण की प्रवृत्ति

कहीं - कहीं "त" वर्गी ध्वनियों का मूर्धन्यीकरण रूप मिलता है । गोरखबानी में इसका मात्र एक उदाहरण मिलता है और पृथ्वीराज रासो में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं -

कुटवाल (कोतवाल) गो० बा० प्रा० स० 15

ढिल्लीपुर (दिल्लीपुर) पृ० रा० 2/28

महाप्राणीकरण

अल्प प्राण व्यंजनों को महाप्राण कर लेने के कुछ उदाहरण मिलते हैं -

घर (गृह) गो० बा० स० 144/1

उठुपकी (स्थितकी) पृ० रा० 4/23

घोषीकरण –
अघोष व्यंजनों में से कुछ को घोष बना देने के उदाहरणभीमिलते हैं –

सोग (शोक) गो० बा० स० 235/1

मध्यग "स" की स्थिति

कुछ स्थलों पर तत्सम "श" पहले "स" तत्पश्चात "ह" हो गया है –

दह	(दश > स)	गो० बा० प० ति०
तेरह	(त्रयोदश > तेरस)	पृ० रा० 7/28
निहचल	(निश्चल > स)	गो० बा० स० 231/2

षष्ठी विभक्ति में स्य > स्स > ह परिवर्तन भी इसी नियम से है –

सुषह पृ० रा० 2/25

बीसलदेव रास में मध्यग "स" के स्थान पर कहीं – कहीं "छ" का प्रयोग मिलता है –

अपछरा (अपसरा) बी० रा० 12/5

अन्य मध्यग व्यंजनों की स्थिति

प्राकृत – अपभ्रंश की प्रवृत्ति के फलस्वरूप गोरख-बानी बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में क,ग,च,ज,त,द,प अल्पप्राण स्पर्श व्यंजनों के लोप और उनके स्थान पर "य" "व" के उच्चारण के कुछउदाहरण मिलते हैं पृ० रा० में ऐसे प्रयोग अधिक हैं –

क–	सयल	(सकल)	बी० रा० 14/5
	दिनयर	(दिनकर)	पृ० रा० 4/18
ग –	सायर	(सागर)	गो० बा० आ० बो०
	सायर	(")	बी० रा० 77/3
	नयरि	(नगरी)	पृ० रा० 4/16
च–	वयन	(वचन)	पृ० रा० 2/21
ज –	गय	(गज)	पृ० रा० 2/7
त –	सीय	(शीत)	बी० रा० 70/1
	कायर	(कातर)	पृ० रा० 6/63

द –	पयदल	(पद दल)	पृ० रा० 7/16
प –	उअर	(अमर)	पृ० रा० 8/26

मध्यग महाप्राण स्पर्श व्यंजन

शब्दान्तर्गत स्वरों के बीच आने वाली महाप्राणयं ध्वनियों का प्राय: महाप्राणत्व ही शेष रह जाता है। यह प्रवृत्ति अपभ्रंश काल से ही प्रारम्भ हो जाती है। इस प्रकार के तद्भव शब्द गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो मे भी प्रयुक्त हुये है -

ख –	मुह	(मुख)	बी० रा० 74/2
	सुह	(सुख)	पृ० रा० 4/18
थ –	थरहर	(थरथर)	गो० बा० प० 47
	नाह	(नाथ)	बी० रा० 52/6
	जूह	(जूथ)	पृ० रा० 7/25
ध –	जलहर	(जलधर)	गो० बा० प० 18
	अहर	(अधर)	बी० रा० 114/1
	कोह	(क्रोध)	पृ० रा० 7/28

आदि।

संयुक्त व्यंजन- "क्ष" "त्र" "ज्ञ" का प्रयोग

गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में "क्ष" "त्र" "ज्ञ" की स्थिति इस प्रकार मिलती है -

"क्ष" को व्यक्त करने के लिये "ष" "च्छ", कष, "क्ख" "छ" का प्रयोग मिलता है। कहीं - कहीं "क्ष" का प्रयोग अपने मूल रूप मे हुआ है -

क्ष – दक्षिण प० 19 गो० बा०, अक्षर 5/6 बी० रा०, रक्षा 3/6 पृ० रा०

ष – षिमा 48/2 गो० बा० स०, द्राष 81/7 षिश्री. 2/3 पृ० रा०

क्ष अभिषेर ग्या0 ति0 गो0 बा0

प्रत्यक्ष 4/14 पृ0 रा0

ष्य भिष्या 108/1 गो0 बा0

परितष्य 13/8 बी0 रा0

क्ख लक्खन 5/19 पृ0 रा0

छ छीर 2/20 पृ0 रा0

"त्र" गोरखबानी और बीसलदेव रास मे "त्र" का प्रयोग मूल रूप मे मिलता है ।

त्रेता गो0 बा0 प0 28

छत्र बी0 रा0 14/5

पृथ्वीराज रासो मे व्यंजन द्वित्व का आश्रय लिया गया है -

पुत्ता 2/6 पृ0 रा0

"ज्ञ" का उच्चारण " ग्य ", "न", "य", "ज" की भांति है -

ग्य - ग्यान गो0 बा0 स0 134/1

ग्यायते पृ0 रा0 3/6

न बिनांणी गो0 बा0 स0 105/2

बिनांन पृ0 रा0 4/14

ज- जाण गो0 बा0 प0 18

जाण बी0 रा0 47/1

जान पृ0 रा0 3/6

अक्षर

एक या अधिक ध्वनियों [या वर्णों] की उच्चारण की दृष्टि से ऐसी अव्यवहरित इकाई जिसका उच्चारण एक झटके से किया जा सके अक्षर है।[1]

किसी शब्द में जितनी ध्वनियां प्रमुख होती हैं, उसमें उतने ही अक्षर होते हैं। अक्षर बनाने वाली ये प्रमुख ध्वनियाँ आक्षरिक कहलाती है। शब्द में एक शीर्ष ध्वनि का होना अनिवार्य है। शीर्ष के साथ अमुखर अथवा अक्षर ध्वनियाँ भी होती है। उच्चरित भाषा के शब्दों में अक्षर संरचना का विवेचन सरल होता है। काव्य का कोई भी प्रत्यक्ष उच्चरित रूप हमारे सामने नहीं है केवल लिखित रूप ही उपलब्ध है। अतएव अक्षर संरचना का वैज्ञानिक विवेचन असंभव तो नहीं कठिन अवश्य है।

एक शब्द में एक अक्षर भी हो सकता है और एकाधिक भी। काव्य में प्रयुक्त अक्षरों का विवेचन निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है -

1- अक्षर ते 8/2 गो0 बा0 स0	म 29/1 बी0 रा	त 2/1 पृ0 रा0
2- अक्षर जल 2/2 " " "	पाट 22/4 " "	दीअ 2/1 " "
3- अक्षर गगन 1/1 " " "	गरब 29/1 " "	इअर 2/1 " "
4- अक्षर अगोचर 1/2 " "	गुजरात 23/1 "	कलिजुग्ग 2/1 "
5- अक्षर अजरांवर प0 1 " "	बीसलराव 17/1 "	सड्डंवरह 2/3 "

कम से कम एक तथा अधिक से अधिक पांच अक्षर मिलते हैं।

स्वर ध्वनिग्रामों को शीर्ष मानकर निम्नलिखित रूप से अक्षर का स्वरूप निर्धारित हो सकता है :-

---

1- भाषा विज्ञान - डॉ0 भोला नाथ तिवारी, पृ0 335

स = स्वर

व = व्यंजन

स-	अ/गम2/1 गो0 बा0	अ/क्षर 4/4 बी0 रा0	अ/द्य 2/1 पृ0 रा0
	आ/स 19/2 "	आ/स 43/6 "	आ/रंभ 2/3 "
	इ/हाँ 3/1 "	इ/सीय47/5 "	इ/ह 2/3 "
	ई/छा 94/1 "	- "	ई/स 4/20 "
	उ/तपति 14/1 "	उ/दर 1/2 "	उ/र 2/12 "
	ऊ/रम 89/2 "	ऊ/लग 35/5 "	ऊ/तरू 2/1 "
	ए/क 118/2 "	ए/ह 27/6 "	ए/नम् 2/16 "
	ऐ/सा 105/2 "	-	ऐ/म 2/7 "
	ओ/अंकार 110/2"	-	-
	औ/र 6/2 "	-	
व स	जे 9/2 गो0 बा0	मो 28/2 बी0 रा0	जो 2/1 पृ0 रा0
व स स	षाउं 30/2 "	धाउ 25/2 "	दीउ 2/1 "
व स व स	चेला 60/2 "	डाल 81/6 "	हार 2/3 "
व व स व स	द्वार 135/1 "	छत्र 14/5 "	श्रोण 4/20 "
व स व स स	रहाइ 188/1 "	कबाइ 11/2 "	रिसाई 2/3 "
व स व व व स	सास्त्र प्रा0 सं0 "	- "	सस्त्र 7/6 "
स व स स	उठाई 78/1 "	अनइ 34/2 "	अनेअ 2/5 "

व स व स व व स - वारण्ण पृ0 रा0 2/1

व स व स व स स - पूणियउ बी0 रा0 13/1

व स व स व स व स - महंमद गो0 बा0 स0 11/2

संधि प्रक्रिया

दो भिन्न पदग्रामों के एक ही अनुक्रम में आने पर प्रथम पदग्राम के अंति तथा द्वितीय पदग्राम के संयोग अथवा समस्त यौगिक पदग्राम को जिस परिवर्तन ध्वनि-ग्रामात्मक रूप से अभिव्यक्त किया जाता है उसे आधुनिक भाषा विज्ञानी 'मार्फोफोनेमिक्स' और प्राचीन भारतीय वैयाकरण इसे संधि की संज्ञा देते हैं।

गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में पदग्रामिक संरच में यह संयोग हुआ है -

1- मुक्त पदग्राम + व्युत्पादक प्रत्यय

2- मुक्त पदग्राम + विभक्ति मूलक प्रत्यय

3- मुक्त पदग्राम + मुक्त पदग्राम

1- मुक्त पदग्राम + व्युत्पादक प्रत्यय

मुक्त पदग्राम + व्युत्पादक पूर्व प्रत्यय - संधि प्रक्रिया -

अ + पूर्व = अपुब्ब (ऊ > उ हो गया, रेफ के स्थान पर व्यंजन द्वित्व) पृ० रा० 03/23

अन् + अंत = अनंत (न् + अं = नं) गो० बा० स० 3/

अन् + अंग = अनंग (") पृ० रा० 2/5

अन् + एक = अनेक (न् + ए = ने) गो० बा० प० 3

निर् + उपम = निरुपम (र् उ = रु) बी० रा० 34/3

जोग् + ईश्वर = जोगेस्वर (अ + ई = ए) गो० बा० स० 3/

उत् + दीपनी = उद्दीपनी (त > द, प्रथम व्यंजन का द्वित्व) पृ० रा० 9/9

निर् + आकार = निराकार (र् + आ रा) गो० बा० स० 77

मुक्त पदग्राम + व्युत्पादक पर प्रत्यय - संधि प्रक्रिया -

व्युत्पादक प्रत्यय के पूर्व प्रातिपदिक व्यंजनांत हो जाते है।

जोग + ई = जोगी गो० बा० स० 267/1

कुल + ईय = कुलीय बी० रा० 9/3

चतुर + आय = चतुराय पृ० रा० 2/20

अकारान्त, आकारान्त और ऊकारान्त प्रातिपदिकों के साथ ई, इय, अव प्रत्यय के जुड़ने पर प्रातिपदिकों के प्रथम अक्षर में निम्नलिखित परिवर्तन मिलते हैं -

अ > आ - अरब + ई = आरबी पृ० रा० 6/5

इ > ऐ - शिशु + अव = शैशव पृ० रा० 10/11

ई > ऐ - वीणा + इय = वैनिय पृ० रा० 5/7

कुछ धातुओं में प्रत्यय लगने से निम्नलिखित परिर्वतन होते हैं। -

कथ + आ = कथा पृ० रा० 6/32

रह् + अनी = रहनी गो बा० प० 6

जड़् + इत = जडित बी० रा० 58/5

उपास् + इका = उपासिका गो० बा० प० 38

सास् + इका = सासिका पृ० रा० 4/14

दह् + अंती = दहंती बी० रा० 70/3

मूल धातु से प्रेरणार्थक धातु व्युत्पादक प्रत्यय "आ" "आव" "अव" के जुड़ने से होने वाले परिवर्तन -

अ आ - जल + आ = जाल + हि = जालहि पृ० रा० 3/31

- कुह + आव = कुहाव + ति = कुहावति पृ० रा० 4/25

आ अ - फाड + आव = फडाव + उं = फडावउं बी० रा० 84/3

2- <u>मुक्त पदग्राम + विभक्तिमूलक प्रत्यय</u>

अकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक में जब मूल रूप तथा विकृत रूप बहुवचन बोधक प्रत्यय "ए" "आ" "इन" आदि लगते हैं तो प्रातिपदिक के अन्तिम स्वर का लोप हो जाता है -

गयंदा + आ = गयंदा पृ0 रा0 4/10

कान + ए = काने बी0 रा0 58/3

सिध + आं = सिधां गो0 बा0 स0 245/2

प्रथम अक्षर में होने वाले परिवर्तन -

ऊ > उ - फूल + आनि = फुल्लानि पृ0 रा0 2/24

आ > अ - गवाक्ष+इन = गवाक्षन पृ0 रा0 6/24

ईकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक में बहुवचन बोधक प्रत्यय लगने पर अन्तिम ई > इ हो जाता है ।

नाली + इयां = नालियां गो0 बा0 प0 22

अस्त्री + इयां = अस्त्रियां बी0 रा0 108/2

पुत्ती + इय = पुत्तिय पृ0 रा0 2/5

अपवाद स्वरूप कुछ स्थल ऐसे भी हैं जहां प्रातिपदिकों में प्रत्यय लगने पर दोनों के अक्षर ज्यों के त्यों रहते हैं -

करि + इस्य = करिइस्य बी0 रा0 88/6

हिंदु + आन = हिन्दुआन पृ0 रा0 5/19

साक्षी + अनु = साक्षिअनु पृ0 रा0 6/2

मुक्त पदग्राम + लिंग विभक्ति - संधि प्रक्रिया

अकारान्त और आकारान्त प्रातिपदिक स्त्रीलिंग बोधक "ई" "इ" के प्रत्यय के पूर्व व्यंजनान्त हो जाते है -

बाल + ई = बाली गो0 बा0 प0 1

जोग+इणि = जोगिणी बी0 रा0 44/2

कुरंग + इ = कुरंगि पृ0 रा0 2/5

क्रिया पदग्राम + विभक्ति मूलक प्रत्यय -

संधि प्रक्रिया- क्रिया प्रातिपदिक में भूत निश्चयार्थ " इया " प्रत्यय के संयोग से अन्तिम प्रत्यय को य् श्रुति का आगम -

समद + इआ = समदिया	बी0 रा0 11/1
उतर + इआ = उतरिया	गो0 बा0 स0 104/2
परठ + इआ = परठिया	पृ0 रा0 7/14
पी + आ = पीया	गो0 बा0 स0 2/2
ग + आ = गया	बी0 रा0 65/5

ऐकारान्त धातु भूतकालिक विभक्ति प्रत्यय के पूर्व इकारान्त हो जाती है -

ले + अउ = लिअउ	पृ0 रा0 रा0 2/10
दे + अइ = दीयइ	बी0 रा0 22/5

भूतकालिक प्रत्यय इया, इउ, इय, इआ, इग, इत ओइ आदि के लगने पर धातु व्यंजनान्त हो जाती है -

बेध + इया = बेधिया	गो0 बा0 स0 105/1
सम + ओइ = समोइ	गो0 बा0 स0 88/1
जड + इत = जडित	बी0 रा0 58/5
थाक + इय = थाकिय	बी0 रा0 91/6
भर + इग = भरिग	पृ0 रा0 3/10
मिल + इत = मिलित	पृ0 रा0 7/28

क्रिया पदग्राम + भविष्य निश्चयार्थ विभक्ति - संधि प्रक्रिया

देष + इषि	देषिषि	पृ0 रा0 8/25
पमुक + इहइ	पमुकिहइं	पृ0 रा0 3/43

क्रिया पदग्राम + विधि निश्चयार्थ विभक्ति

डर + इये = डरिये	गो0 बा0 स0 74/1
निबार + ई = निबारी	गो0 बा0 स0 261/2

3- मुक्त पदग्राम + मुक्त पदग्राम

संज्ञा + संज्ञा - पुनरुक्त पदग्राम

जोधा + जोधा = जोधजोधा	पृ0 रा0 12/12

दो ध्वनियों के समीप आने पर हुयी संधि प्रक्रिया -

परम + आनन्द = परमानन्द	गो0 बा0 स0 15/2
नर + ईस = नरेस	बी0 रा0 112/1
खेह + आडंबर = खेहाडंबर	बी0 रा0 15/6
चित्त + अनला = चित्तानला	पृ0 रा0 2/24

संज्ञा + कृदन्त

पवन + आपिता = पवनापिता	पृ0 रा0 5/40

संज्ञा + अव्यय

इन्द्र + आदि = इन्द्रादि	गो0 बा0 म0 गो0 मु0
चक्की + इवं = चक्कीवं	पृ0 रा0 2/20

विशेषण + विशेषण

अजर + आंवर = अजरांवर	गो0 बा0 प0 1
रत्त + रत्त = रत्तोरत्त	पृ0 रा0 9/9

अव्यय + अव्यय

फिर + इव = फिरिव	पृ0 रा0 12/42

अध्याय - 3

पदशात्मक अनुशीलन

पदग्राम विचार

प्रत्यय प्रक्रिया

प्रत्यय प्रक्रिया किसी भाषा के पदात्मक गठन का महत्वपूर्ण अंग है । "प्रत्यय" वह पदग्राम है जो ध्वन्यात्मक और व्याकरणिक दृष्टि से उस पदग्राम के ऊपर निर्भर रहता है जिससे वह जुड़ता है अर्थात प्रत्यय वह आबद्ध पदग्राम है जो सामान्यत: स्वतन्त्र रूप से सार्थक नहीं होता है । प्रत्यय की स्वतंत्र अर्थवान सत्ता नहीं है । वह मुक्त पदग्राम से जुड़कर उसके अर्थ को परिवर्तित करता है - इस प्रकार दूसरे पदग्राम से आबद्ध होने पर ही वह सार्थक होता है । यही कारण है कि स्वतंत्र अर्थ की दृष्टि से प्रत्यय अमूर्त कहा जाता है । प्रत्यय प्रमुखत: दो प्रकार के होते है :-

1- व्युत्पादक प्रत्यय

2- व्याकरणिक प्रत्यय

1- व्युत्पादक प्रत्यय

वह प्रत्यय जो किसी धातु अथवा प्रातिपादिक के पूर्व या पश्चात संबद्ध होकर दूसरी धातु या प्रातिपदिक का निमार्ण करते हैं ।

2- व्याकरणिक प्रत्यय

वह प्रत्यय है जो किसी प्रातिपदिक के अन्त में जुड़कर व्याकरणिक रूप को प्रकट करते हैं । विभक्ति प्रत्यय के बाद फिर कोई प्रत्यय नहीं जुड़ता अतएव इन प्रत्ययों को चरम प्रत्यय कहा जा सकता है । व्युत्पादक प्रत्यय के आगे विभक्ति प्रत्यय तो ला सकते है किन्तु विभक्ति प्रत्यय के बाद व्युत्पादक प्रत्यय नहीं ला सकते

व्युत्पादक पूर्व प्रत्यय

नामदेव, गोरख – बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो में तत्सम उपसर्गों का ही प्रयोग अधिक हुआ है । तद्भव और विदेशी उपसर्गों के उदाहरण कम मिलते हैं । इसका विवरण इस प्रकार है –

निषेध सूचक तत्सम उपसर्ग –

अ	संज्ञा	अ + विद्या = अविद्या	गो0 बा0 स0 228/1
		अ + देव = अदेव	पृ0 रा0 3/17
	विशेषण	अ + जपा = अजपा	ना0 164
		अ + टल = अटल	ना0 123/1
		अ + सेसि = असेसि	बी0 रा0 34/2
		अ + नग्गु = अनग्गु	पृ0 रा0 2/1
		अ + कथ = अकथ	गो0 बा0 स0 66/2
	{क्रिया}	अ + हुठ्ठिय = अहुठ्ठिय	पृ0 रा 7/22
	कृदन्त	अ + भाष = अभाष	पृ0 रा0 3/17
		अ + षंडित = अषंडित	गो0 बा0 स0 160/2
	{अव्यय}	अ + भेद = अभेद	पृ0 रा0 2/3
अन्	{संज्ञा}	अन् + हद = अनहद	गो0 बा0स0 32/2
		अन् + अंग = अनंग	पृ0 रा0 2/5
	{विशेषण}	अन + हद = अनहद	ना0 164
	{विशेषण}	अन् + अंत = अनंत	गो0 बा0 स0 3/2
		अन् + उप = अनूप	पृ0 रा0 2/26

§अव्यय§ अन् + यथा = अन्यथा पृ0 रा0 2/19

<u>निर् , नि, निस्</u>

§संज्ञा§ निर् + जीवी = निरजीवी गो0 बा0 प0 37

निर् + भय = निर्भय पृ0 रा0 10/26

§विशेषण§ निर् + मम = निरममा बी रा0 125 / 3

निर् + मल = निरमलं पृ0 रा0 4/20

निर् + आकार = निराकार गो0 बा0 स0 77/1

निर् + अंजन = निरंजन ना0 169

§अव्यय§ निर् + दंद = निरदंद गो0 बा0 स0 15/2

§संज्ञा§ नि + गुरा = निगुरा गो0 बा0 स0 23/2

नि + गुणी = निगुणी बी0 रा0 52/ 2

§विशेषण§ नि + गुरी = निगुरी गो0 बा0 स0 144/2

§विशेषण§ नि + स्पम = निस्पम बी0 रा0 39/3

नि + कमु = निकमु पृ0 रा0 3/25

निस् + ठुरे = निष्ठुरे पृ0 रा0 7/12

निह + चल = निहचल ना0 170

§संज्ञा§ नि: + संतान = नि:संतान बी0 रा 65/3

निह + चै = निहचै गो0 बा0 स0 15/2

<u>बि §निषेध§ तद्भव</u>

§संज्ञा§ बि + योगी = बियोगी गो बा0 स0 33/2

बि + काज = बिकाज पृ0 रा0 7/13

विशेषण८	बि + कल = बिकल	गो० ब० स० 213/2
८बि८	वि + कल = बिकल	बी० र० 63/6
	बि + बरजित = बिबरजित	गो० ब० स० 50/2
	बि + रले = बिरले	क० श्लोक 84
वि ८रहित८	वि + भिचारी = विभचारी	ना० 19
बे	बे + काम = बेकाम	ना० 30
	बे + अंत = बेअंत	क० आसा महला 4

सहित अर्थ द्योतक तत्सम उपसर्ग

स ८संज्ञा८	स + गुरा = सगुरा	गो० ब० स० 23/2
	स + काम = सकाम	पृ० र० 5/40
	स + जीव = सजीव	पृ० र० 6/13
सर	सर + जीव = सरजीव	गो० ब० प० 37
८विशेषण८	स + घन = सघन	पृ० र० 5/44
८अव्यय८	स + हित = सहित	पृ० र० 6/13
	स + नाथ = सनाथ	ना० 118
सह ८संज्ञा८	सह + गवनि = सहगवनि	पृ० र० 3/33
सा ८संज्ञा८	सा + मान = सामान	पृ० र० 4/10
८विशेषण	सा + रसं = सारसं	पृ० र 2/13
आ ८विशेषण८	आ + रत्त = आरत्त	पृ० र० 4/14
	आ + रंभ = आरंभ	गो० ब० स० 136 / 2

श्रेष्ठता अर्थ द्योतक तत्सम उपसर्ग

सू	सू + भर = सूभर	गो0 बा0 स0 61/1
सु (संज्ञा)	सु + मति = सुमति	गो0 बा0 स0 48/2
	सु + चेत = सुचेत	गो0 बा0 स0 182/1
	सु + दान = सुदान	पृ0 रा0 2/3
	सु + बर = सुबर	बी0 रा0 7/3
स (सत्)	सा + जन = साजन	फा0 श्लोक 70
(विशेषण)	सु + चंग = सुचंग	बी0 रा 53/4
	सु + वास = सुवास	पृ0 रा 2/5
	सु + चेति - सुचेति	फा0 श्लोक 87
उत् (संज्ञा)	उत् + छाह = उछाह	बी0 रा0 27/2
	उत् + कंठ = उत्कंठ	पृ0 रा0 2/14
(विशेषण)	उत् + अंगा = उतंगा	पृ0 रा0 7/6
(कृदन्त)	उत् + दीपनी = उद्दीपनी	पृ0 रा0 9/9
नि (संज्ञा)	नि + वास = निवास	पृ0 रा0 6/9
(अव्यय)	नि + निमित्त = निमित्त	पृ0 रा0 12/33
(विशेषण)	नि + निछादलं = निछादलं	पृ0 रा 5/41
	नि + माड़ी = निमाड़ी	फा0 श्लोक 94
अभि (विशेषण)	अभि + राम = अभिराम	पृ0 रा0 2/5
(संज्ञा)	अभि + अंतरि = अभ्यंतरि	गो0 बा0 स0 45/2
उ (संज्ञा)	उ + सास = उसास	गो0 बा0 स 52/2

	(कृदन्त)	उ + नव्वि = उनव्वि	पृ० रा० 7/12
	(क्रिया)	उ + ससाइ = उससाइ	बी० रा० 52/4

<u>विशेषता बोधक पूर्व प्रत्यय</u>

<u>प्र</u>	(विशेषण)	प्र + वांणी = प्रवांणी	गो० बा० स० 65/2
	(संज्ञा)	प्र + वेस = प्रवेस	बी० रा० 103/1
	"	प्र + कार = प्रकार	पृ० रा० 4/8
	(अव्यय)	प्र + मान = प्रमान	पृ० रा० 2/1
	(कृदन्त)	प्र + चारि = प्रचारि	पृ० रा० 2/13
<u>पर</u>	(संज्ञा)	पर + मल = परमल	गो० बा० स० रोमा०
		पर + देसै = परदेसै	बी० रा० 68/3
		पर + कीय = परकीय	पृ० रा० 4/20
	(विशेषण)	पर + मांनी = परमांनी	पृ० रा० 5/4
	(क्रिया)	पर + जलै = परजलै	गो० बा० स० 49/1
	(")	पर + जलइ = परजलइ	बी० रा० 74/5
<u>प</u>	(संज्ञा)	प + लंका = पलंका	गो० बा० स० 64/2
<u>वि</u>	(संज्ञा)	वि + ग्यान = विग्यान	गो० बा० स० 201/2
		वि + राम = विराम	पृ० रा० 5/38
	(विशेषण)	वि + चक्षण = विचक्षण	बी० रा० 7/6
		वि + चित्रा = विचित्रा	पृ० रा० 3/2
	(अव्यय)	वि + विच्च = विविच्च	पृ० रा० 3/17

वि + काल = विकाल — नT0 137

सत् 8 संज्ञा 8 — सत् + जन = सज्जन — पृ0 रT0 4/11

सन् 8 संज्ञा 8 — सन् + कृति = संकृति — पृ0 रT 9/7

सन् + ताल = संताप — गो0 बT0 स0 43/1

सहित एवं अच्छा अर्थ द्योतक तत्सम उपसर्ग

सन् 8 अव्यय 8 — सन् + युक्त = संयुक्त — प्रT रT0 5/18

सं 8 संज्ञा 8 — सं + योग = संयोग — गो0 बT0स0 232/1

आ 8संज्ञा 8 — आ + वास = आवास — पृ0 रT0 2/7

अनु 8संज्ञा 8 — अनु + राउ = अनुराउ — पृ0 रT0 2/10

सन् 8 संज्ञा 8 — सन् + ताप = संताप — नT0 211

हीनता अर्थ द्योतक तत्सम उपसर्ग

कु — कु + बुद्धीय = कुबुद्धीय 8 विशेषण 8 — बी0 रT0 57/6

कु + वन = कुव्वन " — पृ0 रT0 2/22

कु + वैरी = कुवैरी 8 संज्ञा 8 — पृ0 रT0 7/6

कु + रंग = कुरंग — नT0 202

अव + घट = अवघट — नT0 120

दुर, दु 8 संज्ञा 8 — दुर + गंध = दुरगंध — गो0 बT0 स0 169/2

दुर + जन = दुज्जन — पृ0 रT0 3/22

दु + काला = दुकाला — गो0 बT0 स0 20/2

दु + रोग = दुरोग — पृ0 रT0 11/8

विरोध एवं अभाव सूचक तत्सम उपसर्ग

अव ॥ संज्ञा ॥ अव + धू = अवधू — गो० बा० स० 68/1

अव + धूत = अवधूत — पृ० रा० 12/13

अप ॥ कृदन्त ॥ ॥अ॥ प + हारे = पहारे — पृ० रा० 6/5

औ ॥ तद्भव ॥

औ औ + गुन = औगुन — को० बा० स० 60/2

सामने तथा विलोम बोधक तत्सम उपसर्ग

वि ॥ संज्ञा ॥ वि + पष = विपष — गो० बा० प० 41

वि + पष्षे = विपष्षे — पृ० रा० 4/83

प्रति ॥ संज्ञा ॥ प्रति + बिंब = प्रतिबिंब — पृ० रा० 3/15

परत ॥ प्रतिबोधक ॥ परत् + अष्षि = परतष्षि — पृ० रा० 3/15

विप् अव्यय विप् + रीत = विपरीत — पृ० रा० 9/8

पर्यन्त अर्थ द्योतक तत्सम उपसर्ग

आ ॥ अव्यय ॥ आ + समुद्र = आसमुद्र — पृ० रा० 2/3

प्रति प्रति + पल = प्रतिपल — ना० 110

पूर्णताबोधक तद्भव उपसर्ग

भरि भरि + पूरि = भरिपूरि — गो० बा० स० 195/2

तत्सम उपसर्ग

परि परि + रंभ = परिरंभ — पृ० रा० 10/28

सम सम + दिष्ट = समदिष्ट पृ0 रा0 10/6

रहित बोधक तत्सम

अण् अण + बाये = अणबाये गो0 बा0 स0 146/1

बि (तद्भव)

बि + योगी = बियोगी गो0 बा0 स0 33/2

नि नि + पाया = निपाया गो0 बा0 पा0 29

अन्य

चिर् चिर + आई = चिराई गो0 बा0 स0 117/2

चिर + जीवे = चिरजीवे बी0 रा 106/6

मान (तद्भव) मान + सरोवर = मानसरोवर गो0 बा0 प0 16

उन (उन) उण + हारि - उणहारि बी0 रा0 95/4

(संज्ञा) उन + हारि = उनहारि पृ0 रा0 5/18

सहि सहि + नाण = सहिनाण बी0 रा0 95/2

सर सर + जीव = सरजीव ना0 47

विदेशी उपसर्ग

दर दर + वाजा = दरवाजा गो0 बा0 प0 27

दर + वेस = दरवेस गो0 बा0 स0 182/1

फर फर + जंद = फरजंद पृ0 रा0 5/18

वै वै + रागी = वैरागी ना0 179

वै वई + राग = वइराग पृ0 रा0 12/19

<u>अर</u> अर + दास = अरदास बी0 रा0 101/2

यहां पर दो उपसर्ग प्रत्यय एक साथ प्रयुक्त हुये है -

<u>अ</u> + प्र + बल = अप्रबल गो0 बा0 ज्ञा0 दी0 बो0

अ + वि + चल = अविचल बी0 रा 24/6

अ + प्र + मान = अप्रमान पृ0 रा0 2/3

क्रिया प्रातिपादिक में भी उपसर्ग योजना मिलती है -

पर + जलै - परजलै गो0 बा0 स0 49/1

पर + जलइ = परजलइ बी0 रा0 74/5

उ + ससाइ = उससाइ बी0 रा0 52/4

ऊ + ऊलथउं = ऊलथउं बी0 रा0 112/5

अ + हुठ्ठिय = अहुठ्ठिय पृ0 रा0 7/22

आ + धारिय = आधारिय पृ0 रा0 3/11

अहि + रपि = अहिरपि पृ0 रा0 2/17

अन + सरइं = अनसरइं पृ0 रा0 5/21

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि गोरख - बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराजरासो, नामदेव में उपसर्ग योजना प्राय: संज्ञा, विशेषण, क्रिया, अव्यय सभी रूपों के साथ हुई है ।

<u>व्युत्पादक पर प्रत्यय</u>

व्युत्पादक पर प्रत्यय किसी संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया प्रातिपदिक में संयुक्त होकर अन्य संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया (धातु) प्रातिपदिक की संरचना करते हैं ।

गोरख - बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो में तद्भव प्रत्ययों का प्रयोग अधिक मिलता है। तत्सम प्रत्ययों का प्रयोग बहुत कम हुआ है देशी अथवा विदेशी प्रत्ययों के कुछ ही उदाहरण मिलते हैं। इसका विवरण इस प्रकार है-

संज्ञा पर प्रत्यय

आ तद्भव -	अहीर + आ = अहीरा	गो० बा० प० 12
	खंड + आ = खंडा	बी० रा० 61/2
	बाल + आ = बाला	पृ० रा० 2/27
	नर + आ = नरा	ना० 117
अक तत्सम -	पाव + अक = पावक	गो० बा० पं० 25
	तिल + अक = तिलक	बी० रा० 1/4
	आखेट + अक = आखेटक	पृ० रा० 3/1
आयन तद्भव -	रस + आयन = रसाइणा	गो० बा० पं० 29
	रस + आइण = रसाइण	बी० रा० 5/1
इक तद्भव -	साध + इक = साधिक	गो० बा० प० 44
	मणि + इक = मणिक	बी० रा० 24/4
	कथ + इक = कथिक	पृ० रा० 5/32
	साध + इक = साधिक	ना० 202
आरी तद्भव -	सोना + आरी = सुनारी	गो० बा० पं० 6
	जुआ + आरी = जुवारी	बी० रा० 61/4
	जुआ + आरी = जुआरी	पृ० रा० 4/23

आरा तद्भव -	वणिज + आरा = वणिजारा	गो0 बा0 प0 15
	गंवार + आरा = गंवारा	ना0 122
औरी -	ठग + औरी = ठगौरी	ना0 140
आर तद्भव -	सोना + आर = सोनार	पृ0 रा0 2/3
अव तद्भव -	शिशु + अव = शैशव	पृ0 रा0 12/8
इनि तद्भव -	कलाल + इनि = कलालिनि	गो0 बा0 प0 28
	विरह + इनि - विरहिनी	पृ0 रा0 2/5
	भेद + इनि = भेदिनि	बी0 रा0 34/3
ई तद्भव -	जोग + ई = जोगी	गो बा0 स0 267/1
	मंजिल + ई = मंजिली	बी0 रा0 15/2
	पच्छिम + ई = पच्छिमी	पृ0 रा0 6/5
	सुन्दर + ई = सुन्दरी	ना0 125
इ तद्भव -	चेतनि + इ = चेतनि	गो0 बा0 स0 150/2
(अव्यय)	पास + ई = पासि	बी0 रा0 116/6
	वाचक + ई = वाचकि	पृ0 रा0 8/24
ईन तद्भव -	कंठ + ईन = कंठीन	पृ0 रा0 6/5
इय तद्भव -	वीणा + इय = वैनिय	पृ0 रा0 5/7
इका तद्भव -	गोरी + इका = गउरिका	बी0 रा0 1/1
	घंटा + इंका = घंटिका	पृ0 रा0 5/38

इनी तद्भव -	जोग + इनी = जोगिनी	गी० रा० 56/9
	नितंब + इनी = नितंबिनी	पृ० रा० 10/11
त तद्भव -	कवि + त = कवित	बी० रा० 4/2
ता तत्सम -(क्रिया)	पीव + ता = पीवता	गो० बा० स० 192/1
	देव + ता = देवता	बी० रा० 12/3
	देव + ता = देवता	पृ० रा० 4/10
ती तद्भव -	जुव + ती = जुवती	पृ० रा० 2/5
त्त तद्भव -	धीर + त्त = धीरत्त	पृ० रा० 6/22
त्तन तद्भव -	मित्त + त्तन = मित्तत्तन	पृ० रा० 12/66
त्तण तद्भव -	कवि + त्तण + उ = कवित्तणउ	पृ० रा० 8/6
य तद्भव -	बूंदी + य = बूंदीय	बी० रा० 20/8
	तंबोल + य = तंबोलय	पृ० रा० 3/4
	नही + य = नहीय	बी० रा० 64/6
इया तद्भव -	भोग + इया = भोगिया	गो० बा० प० 44
(क्रिया)	पलाण + इया = पलाणिया	बी० रा० 59/2
ली तद्भव -	कूंप + ली = कूंपली	बी० रा० 79/1
ल तद्भव -	देव + ल = देवल	गो० बा० प० 42
लौ तद्भव -	मृग + लौ = मृगलौ	गो० बा० प० 26

ला तद्भव -	हंस + ला = हंसला	गो0 बा0 प0 34
	महि + ला = महिला	पृ0 रा0 10/7
	हंसु + ला = हंसुला	ना0 202
लि तद्भव -	देव + लि = देवलि	बी0 रा0 47/5
नी तद्भव -	पद्म + नी = पद्मनी	गो0 बा0 प्रा0 सं0 7
	मन + सिन + उ = मनसिनउ	पृ0 रा0 10/14
वी तद्भव -	नाग + वी = नागवी	पृ0 रा0 5/7
	भाद्र + वइ = भाद्रवइ	बी0 रा0 77/1
वा तद्भव -	घर + वा = घरवा	गो0 बा0 प0 50
णी तत्सम -	(क्रिया) कथ + णी = कथणी	गो0 बा0 प0 44
	पहिराव + णी = पहिरावणी	बी0 रा0 25/5
अण तत्सम -	(क्रिया) मर + अण = मरण	गो0 बी0 स 26/2
आणी तत्सम -	सुरस + आणी = सुरसाणी	गो0 बा0 प0 38
याल तद्भव -	घोड़ + याल = घोड़याल	गो0 बा0 प0 27
डी -	गाव + डी = गावडी	गो0 बारा0 प0 38
	गोर + डी = गोरडी	बी0 रा0 47/5
औती तद्भव -	कठ + औती = कठौती	गो0 बा0 स0 153/1
वारी तद्भव -	बन + वारी = बनवारी	गो0 बा0 प्रा0सं0 7

मा ति तद्भव -\{क्रिया\}	करा + माति = करामाति	गो0 बा0 म0 गो0 गु0
मान तद्भव -	महि + मान = महिमान	पृ0 रा 12/16
डा -	मुह + डा = मुहडा	बी0 रा0 61/8
आई - तद्भव -	काम + आई = कमाई	गो0 बा0 प0 6
द - तद्भव -	बल + द = बलद	बी0 रा0 100/2
अन -	नंद + अन = नंदन	बी0 रा0 1/1
ही -	बाल + ही = बालही	बी0 रा0 108/5
वंता तद्भव	गुण + वंता = गुणवंता सुध + वंत = सुधवंत	गो0 बा0 सं0 107/2 ना0 226

विदेशी प्रत्यय

गर	नाव + गर = नावगर	गो0 बा0 ग्या0 ति0 19
	गुन्हे + गार = गुन्हेगार	ना0 163

लघुता वाचक पर प्रत्यय

रा \{संज्ञा\}	जीय + रा = जीयरा	ना0 164
टी	बहू + टी = बहूटी	फा0 श्लोक 3
	चोर + टी = चोरटी	गो0 बा0 गो0 ग0 गु0

विशेषण बोधक पर प्रत्यय

आ तद्भव -\{क्रिया\}	बैठ + आ = बैठा	गो0 बा0

आइत तद्भव - बिल + आइत = बिलाइत गो० बा० स० 102/1

आयते तद्भव - समुद + आयते = समुदायते पृ० रा० 8/11

इय तद्भव -(क्रिया) झंकुल + इय = झंकुलिय पृ० रा० 7/4

इता तत्सम - (संज्ञा) अन+ मोल + इता = अनमोलिता पृ० रा० 5/10

इणं तद्भव -(क्रिया) रष्ष + इणं = रषिष्षण पृ० रा० 3/17

ईय तद्भव -(क्रिया) मर + ता + ईय = मरतीय बी० रा० 69/2

(संज्ञा) प्रवाल + ईय = प्रवालीय बी० रा० 34/5

गी तद्भव - विसास + घात + गी = विसासघातगी गो० बा० स० 259/2

हीण (संज्ञा) सबद + हीण = सबदहीण गो बा० स० 260/2

बारी तद्भव (संज्ञा) घर + बारी = घरबारी गो० बा० स० 261/2

सरीषा चित्त + सरीषा = चित्त सरीषा गो० बा० स० 189/1

लोयणी (संज्ञा) मृग + लोयणी = मृगलोयणी बी० रा० 3/1

गमणि (संज्ञा) हंस + गमणि = हंसगमणि बी० रा० 5/1

बाहणि (संज्ञा) हंस + बाहणि = हंसबाहणि बी० रा० 4/1

समान तत्सम (संज्ञा) देवन + समान = देवन समान पृ० रा० 2/3

आई (विशेषण) चतुर + आई = चतुराई बी० रा० 33/4

एरिया ३ विशेषण ३ घन + एरिया = घनेरिया — क० श्लोक 105

हार तद्भव - ३क्रिया३ सिरजण + हार = सिरजणहार — बी० रा० 27/4

हारा तद्भव -३क्रिया३ पोषण + हारा = पोषणहारा — गो० बा० प० 47

रचन + हार = रचनहार — ना० 110

हारी तद्भव -३क्रिया३ उपावन + हारी = उपावनहारी — गो० बा० प० 7

पनि + हारि = पनिहारि — पृ० रा० 4/16

ईक ३क्रिया३ अजाच + ईक = अजाचीक — गो० बा० सि० द०

दाई तद्भव ३ संज्ञा ३ सुख + दाई = सुखदाई — पृ० रा० 3/16

वंत तद्भव ३ संज्ञा ३ रितुराज + वंत = रितुराजवंत — पृ० रा० 2/3

ई तद्भव ३संज्ञा ३ दीपकांग + ई = दीपकांगी — पृ० रा० 5/36

कार ३क्रिया३ रूपझुप + कार = रूपझुपकार — बी० रा० 14 / 4

ली तद्भव ३ अव्यय३ छेह + ली = छेहली — बी० रा० 51/6

ईय ३ विशेषण ३ अंधेरा + ईय = अंधारीय — बी० रा० 79/6

इत तत्सम - ३क्रिया ३ जड + इत = जडित — बी० रा० 58/5

३क्रिया३ लिख + इत = लिखित — पृ० रा० 2/1

वानी तद्भव ३ संज्ञा३ भाग + वानी = भागवानी — पृ० रा० 5/36

पनी तद्भव ३विशेषण ३ पीत + पनी = पीतपनी — पृ० रा० 8/9

पन तद्भव 8 सर्वनाम 8 अपनै + पन = अपनैपन   ना० 195

सौं   8 विशेषण 8 अविनासी + सौ= अविनासी सौ   ना० 124

व्याकरणिक प्रत्ययों का विवेचन प्रत्येक अध्यायों में यथा स्थान किया गया है ।

अध्याय - 4

संज्ञा प्रातिपदिक

संज्ञा प्रातिपदिक

किसी व्यक्ति, स्थान तथा पदार्थ के नाम का द्योतक होने वाले पद को संज्ञा पद कहा जाता है -[1]

वाक्य में आये हुए अन्य पदों से संज्ञा पद का सम्बन्ध कराने के लिये लिंग वचन और कारकीय विभक्तियां लगायी जाती हैं। इन्हीं विभक्तियों को संज्ञा की व्याकरणिक कोटियां कहा जा सकता है।[2]

किसी भी भाषा में संज्ञा की व्याकरणिक कोटियां उसकी व्याकरणिक प्रकृति की विशेषता को व्यक्त करती हैं। अतः भाषा की प्रकृति प्रवृत्ति को जानने के लिये इनका विश्लेषण आवश्यक है।

पद ग्रामिक संरचना की दृष्टि से गोरख बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में दो प्रकार के संज्ञा प्रातिपदिक मिलते हैं -

1- मूल संज्ञा प्रातिपदिक

2- व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिक

1- मूल संज्ञा प्रातिपदिक

जिनमें कोई संज्ञावाचक प्रत्यय नहीं जुड़ता।

2- व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिक

एक या एक से अधिक संज्ञा वाचक प्रत्यय जोड़कर व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिक का निर्माण किया जाता है।

1- मानक हिन्दी का ऐतिहासिक व्याकरण- माता बदल जायसवाल, पृ0 32.

2- वही - - - - -

गोरख -बानी, बीसल देव रास तथा पृ० रा० आदि ग्रंथों में संज्ञा, विशेषण और क्रिया प्रातिपदिक में - इक, - इका, इन, - इनो, - इय , - इगा, -अक, -अण, - ई , - अव, - आयण, -इ, - री, - ता, - इत, - इता, -सिन, - आ, - वा, - य, - वी - हार, - वान, त्तण, - ला, - सिन आदि व्युत्पादक प्रत्यय जोड़कर व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण किया गया है । इनका विस्तृत विवेचन " पदग्राम विचार " अध्याय के अन्तर्गत किया गया है ।

अन्त्य ध्वनि ग्राम के अनुसार संज्ञा प्रातिपदिकों का वर्गीकरण

अकारान्त मूल प्रातिपदिक

गगन	गो० बा० स० 12/1
सरीर	गो० बा० स० 10/2
अमृत	गो० बा० स० 23/1
पंडित	गो० बा० स० 22/2
नाथ	गो० बा० स० 8/2
कलस	बी० रा० 17/2
नीर	बी० रा 77/2
चंद	बी० रा० 78/5
दिन	बी० रा० 119/2
हार	बी० रा० 117/4
अत्थ	पृ० रा० 2/1
कनवज्ज	पृ० रा० 2/3
कांत	पृ० रा० 9/13

अकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

दीपक	गो० बा० स० 5/1
दरसण	गो० बा० स० 272/2
रसाइंन	गो० बा० न० बो०
मस्तक	बी० रा० 1/4
माणिक	बी० रा० 95/4
आवेटक	पृ० रा० 3/1
पथिक	पृ० रा० 7/22
वैनिक	पृ० रा० 5/7

आकारान्त मूल प्रातिपदिक

हीरा	गो० बा० स० 60/1
काया	गो० बा० स० 50/2
राजा	बी० रा० 112/2
सोना	बी० रा० 19/3
अंगना	पृ० रा० 6/27
छिकारा	पृ० रा० 6/5
तुपा	पृ० रा० 3/32
बाबा	ना० 24
खटोला	फ० श्लोक 36
बगुला	फ० श्लोक 101

आकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

पंथा	गो० बा० स० 162/1

सिधा	गो0 बा0 स0 3/2
गउरिफा	बी0 रा0 1/1
जोसिया	बी0 रा0 7/3
पुत्ता	पृ0 रा0 2/16
कविता	पृ0 रा0 5/31
फरीदा	फ0 9/1
कुंजड़िया	फ0 आ0 म0 6/3

इकारान्त मूल प्रातिपदिक

अगनि	गो0 बा0 स0 87/2
दिष्टि	गो0 बा0 स0 80/1
जाति	बी0 रा0 10/6
ठांइ	बी0 रा0 2/6
पिहि	पृ0 रा0 3/12
कवि	पृ0 रा0 5/5
गजपति	ना0 158
रति	ना0 56
आलि	ना0 101

इकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

हाथि	गो0 बा0 स0 9/2
भरमि	गो0 बा0 स0 10/2
देसि	बी0 रा0 112/4
असाढइ	बी0 रा0 75/1

धरि	बी0 रा0 120/2
गंगहि	पृ0 रा0 2/11
चातुकि	पृ0 रा0 6/26
जगि	फ0 आ0 म0 10/1

ईकारान्त मूल प्रातिपदिक

मोती	गो0 बा0 स0 5/2
स्वामी	गो0 बा0 स0 30/1
बांदी	बी0 रा0 45/3
आरती	बी0 रा0 16/3
हत्थी	पृ0 रा0 7/17
चीठी	पृ0 रा0 8/2
गौरी	फ0 आ0 म0 9/1
बंदगी	फ0 आ0 म0 5/2

ईकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपादिक

जोगी	गो0 बा0 स0 6/2
पाखंडी	गो0 बा0 स0 47/1
सषी	बी0 रा0 17/2
हिरणी	बी0 रा0 31/2
कुंडली	पृ0 रा0 5/38
प्राणी	पृ0 रा0 8/7
देही	फ0 श्लोक 69
खुदाई	फ0 आ0 म0 108

उकारान्त मूल प्रातिपदिक

बन्धु	गो० बा० स० 86/1
बिसनु	गो० बा० स० 17/1
रितु	बी० रा० 71/3
इंदु	पृ० रा० 7/12
बपु	पृ० रा० 12/7
रेनु	पृ० रा० 10/18
वसतु	ना० 171

उकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

काढउ	बी० रा० 64/2
पंडियउ	बी० ज्ञा० 63/1
धरमु	फ० आ० म० 8/1
जीवु	फ० श्लोक 18
नामु	ना० 157
कुडीनु	पृ० रा० 4/20
धनुहु	पृ० रा० 5/5

ऊकारान्त मूल प्रातिपदिक

तालू	गो० बा० स० 133/2
गुरू	फ० आ० म० 8/1
भौदू	गो० बा० स० 188/2
बहू	गो० बा० प० 47
वरधू	बी० रा० 25/2

हेडाऊ	बी0 रा0 89/2
हिंदू	पृ0 रा0 12/4

ऊकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

मेलू	गो0 बा0 स0 189/2
कंधू	गो0 बा0 भि0 द0
सासू	बी0 रा0 80/1
अढबू	पृ0 रा0 11/12
कंपू	पृ0 रा0 4/20
जिन्दू	फा0 102
कंकरू	फा0 2/2

एकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

पुस्तके	गो0 बा0 स0 6/1
कुराणे	गो0 बा0 स0 6/1
काने	बी0 रा0 58/3
पगे	बी0 रा0 58/4
अमीए	पृ0 रा0 2/20
अंचले	पृ0 रा0 4/14
बाबले	फा0 91
दरवाजे	फा0 41

ऐकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

कूंडै	ना0 26
लोहै	गो0 बा0 स0 9/2

ओकारान्त मूल प्रातिपदिक

गो	ना० 17
कैरो	गो० बा० प० 29

ओकारान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक

सत्यो	गो० बा० स० 258/1
गोल्लो	गो० बा० प० 21
वाणो	बी० रा० 31/4
इंदो	पृ० स० 5/7
सारंगो	पृ० रा० 3/12

औकारान्त मूल प्रातिपदिक

भौ	गो० बा० प० 11

औकारान्त मूल प्रातिपदिक

डोरौ	गो० बा० स० 259/2
पाथरणौ	गो० बा० प० 4
नामौ	ना० 46

व्यंजनान्त

गोरख-बानी मे व्यंजनांत शब्दों का प्रयोग मिलता है लेकिन इनकी संख्या बहुत कम है -

सोनम्	गो० बा प० 6
पुरानम्	गो० बा० प० 38
बिस्	गो० बा० स० 143/1

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वीराज रासो, बीसल देव रास में पद प्रायः स्वरान्त ही हैं। वैदिक और संस्कृत से चले आ रहे प्रातिपदिक के व्यंजनान्त होने की प्रवृति पाली - प्राकृत अपभ्रंश तक आते - आते लुप्त हो गयी। इसका प्रभाव उपर्युक्त रचनाओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। पद्य का अन्त स्वर में ही होता है व्यंजन में नहीं। सम्भवत: स्वरान्त पदों की बहुलता तथा व्यंजनान्त पदों के लोप का यही कारण रहा हो। प्रधानता अकारान्त वा उकारान्त पदों की है।

लिंग

गोरख - बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासोसभीमेंसंज्ञा प्रातिपदिक पुलिंग और स्त्री लिंग दो लिंगों में मिलते हैं जिनका निर्णय अधिकांश स्थलों पर शब्दों के वाक्य प्रयोग (कारक चिन्हों, विशेषणों, क्रियाओं) द्वारा ही संभव नहीं है। अर्थात लिंग निर्णय मात्र रूपात्मक स्तर पर ही संभव नहीं है। अन्त्य स्वर के आधार पर पुलिंग और स्त्री लिंग प्रातिपदिकों का विभाजन इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

पुलिंग प्रातिपदिक

अन्त्य स्वर	प्रातिपदिक	संदर्भ

अ	भवन	गो० बा० स० 5/1
	उदर	बी० रा 1/2
	अर्जुन	पृ० रा० 2/1
आ	कलमा	गो० बा० स० 11/2
	राजा	बी० रा० 15/5
	जीरा	पृ० रा० 5/13
इ	घरि	गो० बा० स० 105/2
	नरपति	बी० रा० 1/5
	अलि	पृ० रा० 2/5
ई	रवी	गो० बा० स० 57/1
	धपी	बी० रा० 13/3
	कदली	पृ० रा० 2/5
उ	गुरु	गो० बा० स० 86/1
	राउ	बी० रा० 12/1
	इंदु	पृ० रा० 7/12
ऊ	अवधू	गो० बा० स० 35/1
	सावटू	बी० रा० 22/4
	राजसू	पृ० रा० 2/1
ए	सास्त्रे	गो० बा० स० 6/1
	कंठे	पृ० रा० 4/23
	x	बी० रा०
ऐ	भाड़ै	गो० बा० स० 37/2

ओ	सत्यो	गो0 बा0 स0 258/1
	वापो	बी0 रा0 31/4
	मनो	पृ0 रा0 6/29
औ	भैरौ	गो0 बा0 प0 ति0

स्त्रीलिंग प्रातिपादिक

अन्त्य स्वर	प्रातिपदिक	संदर्भ
अ	आस	गो0 बा0 स0 19/1
	वेदन	बी0 रा0 128/6
	माल	पृ0 रा0 2/3
आ	सभा	गो0 बा0 स0 65/1
	माता	बी0 रा0 4/3
	कोकिला	पृ0 रा0 5/36
इ	अगनि	गो0 बा0 स0 22/1
	वेटि	बी0 रा0 8/5
	छत्ति	पृ0 रा0 2/5
ई	इंद्री	गो0 बा0 स0 18/1
	होली	बी0 रा0 72/8
	अंगुरी	पृ0 रा0 3/17
उ	रितु	बी0 रा0 71/3
	बाहु	पृ0 रा0 12/35
ऊ	बहू	गो0 बा0 प0 47
	सासू	बी0 रा0 80/1
	वधू	पृ0 रा0 7/22

ए	गोरिए	गो0 बा0 प0 47
	गंगे	पृ0 रा0 4/11
ऐ	स्यै	गो0 बा0 आ0 बो0
ओ	रेष्यो	पृ0 रा0 5/38
औ	{फोली} षीलौ	गो0 बा0 प0 60

पृथ्वी राज रासो और बीसल देव रास में पुलिंग तथा स्त्रीलिंग प्राति-पादिकों के ऐकारान्त तथा औकारान्त रूप नहीं मिलते हैं गोरखबानी में भी औकारान्त प्रातिपादिकों की संख्या बहुत ही कम है ।

स्त्रीलिंग प्रत्यय

हिन्दी में स्वाभाविक लिंग की अपेक्षा व्याकरणिक लिंग विधान अधिक मिलता है। लिंग परिवर्तन अकारान्त संज्ञा, विशेषण तथा कृदन्तीय क्रियाओं में होता है। तिङ् प्रत्ययों से निर्मित क्रियाओं में लिंग परिवर्तन नहीं होता है।[1]
नामदेव,फरीद, गोरख - बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो में निम्नलिखित स्त्रीलिंग प्रत्यय मिलते हैं -

प्रत्यय		मूलप्रातिपदिक + प्रत्यय		व्युत्पन्न प्रातिपदिक	संदर्भ
आ	-	बाल + आ	=	बाला	पृ0 रा0 2/27
इ	-	मालन + इ	=	मालनि	गो0 बा0 प0 20
		कुमर + इ	=	कुमरि	बी0 रा0 20/2
		कुरंग + इ	=	कुरंगि	पृ0 रा0 2/5
		मुक्त + इ	=	मुक्ति	ना0 20
ई	-	कठौता + ई	=	कठौती	गो0 बा0 स0 153/1
		देव + ई	=	देवी	बी0 रा0 4/1
		दास + ई	=	दासी	पृ0 रा0 3/3
		तरूण + ई	=	तरूणी	ना 0 202
नी	-	बाघ + नी	=	बाघनी	गो0 बा0 प0 47
		मान + नी	=	माननी	पृ0 रा0 2/10
		काम + णी (नी)	=	कामणी	बी0 रा0 14/3

1- वर्ण रत्नाकर का भाषा वैज्ञानिक अध्याय - शोध कर्ता - कृष्ण मोहन श्रीवास्तव पृ0 119

	नट + नी	=	नटनी	ना0 71
नि -	संष + नि	=	संषनि	गो0 बा0 स0 गो0 बो0
	पति + नि	=	पतिनि	पृ0 रा0 3/7
	काम + णि ‡नि‡	=	कामणि	बी0 रा0 10/4
इया	डुकरा + इया	=	डुकरिया	गो0 बा0 प0 47
	कुजड़ा + इया	=	कुजड़िया	फ0 आसा महला 6
इका	सास + इका	=	सासिका	पृ0 रा0 5/38
इनि	सुहाग + इणि	=	सुहागिणी	फ0 श्लोक 114
	कमल + इनि		कमलिनि	पृ0 रा0 6/11
	जोग + इणि ‡ इनि ‡	=	जोगिणी	बी0 रा0 44/2
	नाग + णी	=	नागणी	गो0 बा0 प0 47
डी	भील + डी	=	भीलडी	गो0 बा0 प0 26
	गोर + डी	=	गोरडी	बी0 रा0 64/3
इनी	काम + इनी	=	कामिनी	पृ0 रा0 3/17
इनीय	राग + इनीय	=	रागिनीय	पृ0 रा0 3/4
ईय	पक्क + ईय	=	पक्कीय	पृ0 रा0 11/10
वानी	भाग + वानी	=	भागवानी	पृ0 रा0 5/37
आणी	जेठ + आणी	=	जेठाणी	बी0 रा 47/1

वचन

संज्ञा विभक्ति - बहु वचन बोधक विभक्ति

संज्ञा के मूल रूप एक वचन के रूप में बहुवचन बोधक विभक्ति प्रत्यय लगा

कर मूल रूप बहुवचन तथा विकृत रूप बहुवचन के रूप निर्मित होते है । नामदेव ,फरीद, गोरख बानी, बीसल देव रास, पृथ्वी राज रासो में बहुवचन बोधक निम्नलिखित प्रत्यय लगाकर बहु वचन के रूप निर्मित हुए हैं -

मूल रूप बहुवचन

शून्य प्रत्यय

पृथ्वीराज रासो में संज्ञा के एक वचन रूपों में शून्य प्रत्यय लगाकर मूल रूप बहु वचन का बोध कराया गया है । वाक्य स्तर तथा बहु वचन बोधक क्रिया अथवा विशेषण के आधार पर बहुवचन का बोध होता है ऐसे प्रयोग गोरख-बानी और बीसल देव रासो में अधिक मिलते है ।

शून्य प्रत्यय -

0 -	तीरथ + 0 = तीरथ ॥अठसठि॥	गो0 बा0 स0 163/2
	बरस + 0 = बरस ॥ बारह ॥	बी0 रा0 30/3
	दूत + 0 = दूत ॥ मोकले ॥	पृ0 रा0 2/3
	वेद + 0 = वेद	ना0 99
आं-	सिंध + आं = सिंधां	गो0 बा0 स0 77/1
	नइण + आं - नइणां	बी0 रा0 117/3
इयां -	ग्वाल + इयां = ग्वालियां	गो0 बा0 प0 51
	अस्त्री + इयां = अस्त्रियां	बी0 रा 108/2
	चेरी + इयां = चेरियां	ना0 18
ए -	अष्यर + ए = एष्यरे	गो0 बा0 प0 12
	कान + ए = काने	बी0 रा0 58/3
ऐ -	लोहा + ऐ = लोहै	गो0 बा0 स0 9/2

ऐं - आष + ऐं = आषैं गो0 बा0 स0 72/2

<u>विकृत रूप बहुवचन</u>

<u>संज्ञा</u>

अ - सहेली + अ = सहेलीय सात सहेलीय बी0 रा0 18/1

क्ली + अ = कलिय उष्णा लिअ कलिय पृ0 रा0 3/5

{विशेषण} रेसमी + अ = रेसमीय रेस रेसमीयणारी पृ0 रा0 7/10

आ - गयंद + अ= गयंदा कहो संभरे नाथ ठाढे गयंदा पृ0 रा0 9/10

उ - सोना + उ= सोनउ सोलहउ सोनउ बी0 रा 48/9

पत्ता + उ = पत्तु हलिगु पत्तु पृ0 रा0 4/7

आँ लच्छन + आँ = लक्ष्ना ना0 125

ए "ए" प्रत्यय संज्ञा के अतिरिक्त सर्वनाम, क्रिया और विशेषण रूपों का भी प्रमुख प्रत्यय है :-

<u>संज्ञा</u>

संवाद+ए = संवादे न मो राजान संवादे पृ0 रा0 2/19

अष्यर+ए = अष्यरे भिन्न भिन्न अष्यरे गो0 बा0 प0 12

<u>सर्वनाम</u>

त+ए = ते ते गया नहु गया हुंति पृ0 रा0 2/2

त+ए = ते ते जोगी तत्त सारं गो0 बा0 स0 39/2

<u>क्रिया</u>

मोकल + ए = मोकले मोलके दुत तब ही रिसाई । पृ0 रा0 2/3

बैठा + ए = बैठे हम तो निरालंभ बैठे देखत रहे गो0 बा0 स0 118/2

विशेषण

अच्छा + ए = आछे क्हो पैछै भूप अछि तुरंगा पृ0 रा0 4/10

ऊंचा + ए = ऊंचे ऊंचे नीचे परबत गो0 बा0 प0 39

ओ

"ओ" प्रत्यय का प्रयोग बहुत कम मिलता है ।

बाण + ओ = वाणो विंहु वाणो उरि आं हणी बी0 रा 31/5

हाथ + ओ = हथ्थौं दुहथ्थौं पृ0 रा0 7/31

(विशेषण) छः + ओ = छवो पृ0 रा0 5/7

साप + ओं = सापों ना0 172

औ -

बगला + औ = बगलौं गगन मछलडी बगलौ ग्रास्यौ गो0 बा0 प0 60

छत्तीय + औ = छत्तीसौ छत्तीसौ रोग गो0 बा0 स0 147/1

अव

बंधु + अव = बंधव बंधव तीन निवट्टिया पृ0 रा0 7/20

ईय

कुल + ईय = कुलीय छत्तीसइ देवतां बी0 रा0 22/3

इय

पुत्त + इय = पुत्तिय राजनि अनेअ पत्तिय ति संगि पृ0 रा0 2/5

अनि - सन्त + अनि = सन्तनि ना0 25

आन घोड़ + आन = घोडान ना0 39

न -

एक वचन से बहुवचन बनाने के लिये पृथ्वीराज रासो में मुख्यत: "न" प्रत्यय जोड़ा गया है जो ब्रज भाषा की अपनी विशेषता है। मिर्जा खां ने 17 वीं सदी से ही इसे लक्षित किया था। उनके अनुसार कर और पग के बहु वचन रूप करन और पगन होते है।[1]

"न" के अन्य विकृत रूप "नु" और "नि" भी मिलते हैं। बिना भेद के इन सबका प्रयोग सभी कारकों में होता है परन्तु "नु" मुख्यत: कर्म- सम्प्रदान बहुवचन में प्रयुक्त होता है तथा "नि" करण अधिकारण में।

देव + न = देवन	पृ0 रा0 2/3
अधर + नु = अधरनु	पृ0 रा0 2/5
राज + नि = राजनि	पृ0 रा0 2/3

"न" से पूर्व-वर्ती स्वर कभी - कभी अकारण ही दीर्घ कर दिया जाता है। रासो की इस विशेषता को बीम्स ने काफी पहले लक्षित किया था -

मरद + न = मरदान	पृ0 रा0 11/8

या -

कोटि + यां = कोट्यां	गो0 बा0 प0 54
ललित + या = ललितया	पृ0 रा0 9/11

हि, ह

ह, हि, हु, हे, हो ये सब निपात हैं और उनका शब्द प्रकृतियों के साथ सम्बन्ध तत्व के बोधन के लिये विभिन्न कारकों का उपयोग हुआ है। "भिस" से हि का विकास

- -

1- पृथ्वी राज रासो की भाषा - नामवर सिंह पृ0 97

ढूढने की अपेक्षा हि निपात या अव्यय का प्रयोग मानने में कोई आपत्ति न होनी चाहिये। पद पूरणार्थ इसका प्रयोग है ही।[1]

मीन + ह = मीनह		पृ रा० 2/28
कान + ह = कानह	कानह कुंडल झिगमिगइ	बी० रा० 23/3

प्रानेन 6/32, तराजुन्ह 4/25, बिबनं 10/11 रहणों पृ० रा आदि।

संज्ञा शब्द प्रयुक्त बहु वचन बोधक प्रत्ययवत्

गोरख - बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो में कुछ विशिष्ट शब्द ऐसे प्रयुक्त हुए हैं जो संज्ञा रूपों के साथ जुड़कर बहु वचन का बोध कराते हैं। ऐसे शब्दों में समूह वाची संज्ञाओं को भी लिया गया है -

लोई

नर लोई	गो० बा० प० 23

सभा

मूरषि सभा	गो० बा० स० 121/1

दल

कवल दल	गो० बा० प० 10

कुल

अष्ट कुल पर्वत	गो० बा० प० 11
कलिक कुल	पृ० रा० 6/14

लोया

मूरष लोया	गो० बा० प० 43

1- अपभ्रंश भाषा का अध्ययन - वीरेन्द्र श्रीवास्तव पृ० 129.

आदि

इन्द्रादि — गो० बा० म० गो०जु०

आवली

रोमावली - उदबीरज रोमावली बोलिये — गो० बा० रोमावली

लोक

मूरष लोक — बी० रा० 61/3

बहु

बहु नर — बी० रा० 6/2

जी

राणी जी ꠸आदरार्थ꠸ — बी० रा० 6/4

बीसल देव रास में ऐसे प्रयोग बहुतकम मिलते हैं ।

अंजली

पुष्पांजलि — पृ० रा० 5/36

आलमी

दंत आलमी — पृ० रा० 4/14

धरिष्धरि

चली धरिष्धरि बत्तरी — पृ० रा० 3/29

जालं

अलि जालं — पृ० रा० 4/11

जूह

दिनिअर सुय दिन जुथ्य जूह चंपइ — पृ० रा० 7/25

<u>जन</u>

बुधजन — पृ0 रा0 2/3

<u>झौरं</u>

भउरं झौरं — पृ0 रा0 6/15

<u>पास</u>

केस पास — पृ0 रा0 5/38

<u>मंडली</u>

मुग्ध मडली — पृ0 रा0 5/38

<u>मालिनं</u>

मराल मालिनं — पृ0 रा0 5/38

आदि ।

पृथ्वी राज रासो में ऐसे प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलते है ।

कारक रचना

"संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ प्रकाशित होता है उस रूप को कारक कहते हैं।" [1]

संस्कृत काल में जिस एक संज्ञा पद के 24 भिन्न-भिन्न रूप (कारक-8, वचन-3) बनते थे। प्राकृत काल में उसके रूपों की संख्या घटकर 12 हो गयी और अपभ्रंश काल तक आते-आते 5 या 6 ही रह गई। भारतीय आर्य भाषा के विकास के साथ 10वीं शती ई० के पश्चात परवर्ती अपभ्रंश या अवहट्ट भाषा के रूप भी इतने घुल मिल गये हैं कि एक संज्ञा पद के केवल दो रूप मिलते लगे।

1- <u>मूल रूप</u> - या निर्विभक्तिक रूप अथवा शून्य प्रत्यय युक्त रूप जो प्राचीन कर्ता कारक में प्रयुक्त होता रहा है। [2]

2- विकृत रूप- (या विकारी रूप अथवा तिर्यक रूप)

इसमें कारकों की विभक्तियां स्वतंत्र पदग्राम से अलग प्रयुक्त होती रहीं है। विभिन्न कारकों के अर्थ को प्रकट करने के लिये परवर्ती अपभ्रंश काल से विकृत रूप के साथ अन्य पद या पदांश जोड़े जाने लगे। यही पद आगे चलकर आधुनिक हिन्दी के कारक चिन्ह बन गये।

नामदेव, गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो में संयोगी और वियोगी दोनों विभक्तियां मिलती हैं।

(1) संयोगी कारक विभक्ति पद्धति :

इसमें कारकों की अर्थ सूचक विभक्तियां स्वतंत्र पदग्राम से संयुक्त होकर प्रयुक्त होती हैं। जिन्हें हम संयोगी कारक विभक्ति की संज्ञा दे सकते हैं।[1]

(2) वियोगी कारक पद्धति :

इसमें विभक्ति प्रत्यय मूल पदग्राम से संयुक्त होकर नहीं जुड़ता बल्कि वियोगात्मक रूप से जुड़ता है। विभक्ति + मूल पदग्राम मिल कर मिश्रित पदग्राम का निर्माण नहीं करते बल्कि एक ही अनुक्रम में घटित होने पर दोनों की अक्षरात्मक स्थिति अलग-अलग रहती है। सुविधा की दृष्टि से उसको हम कारक परसर्ग कह सकते हैं।[2]

गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो के अन्तर्गत मूल रूप एक वचन तथा विकृत रूप एक वचन दोनों ही स्वरान्त मिलते हैं। मूल रूप एक वचन का विस्तारपूर्वक विवेचन गत पृष्ठो में किया गया है। विकृत रूप एक वचन की रचना अधिकांशतः मूल रूप में शून्य प्रत्यय लगाकर की गयी है -

---

1- वर्ण रत्नाकर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन - कृष्ण मोहन श्रीवास्तव 50 = 129 - 30

2- ---- वही ----

<u>मूल रूप + शून्य प्रत्यय = विकृत रूप -</u>

सुमंत + 0 = सुमंत पुच्छइ सुमंत परिधान तत्व — पृ0 रा0 2/1

बछरा + 0 = बछरा बाधौ बाधौ बछरा पीओ नीर । — गो0बा0पा0 51

ऊषध + 0 = ऊषध ऊषध न षाइ — बी0रा0 8/8

<u>मूल रूप + ए = विकृत रूप</u>

गोरख - बानी में शून्य के अतिरिक्त "ए" प्रत्यय एक वचन में प्रधान रहे है ।

पवन + ए = पवने पवने न पेलंत बाई — गो0बा0स024/1

चतुर + ए - चतुरे चतुरे तुं चतुराय आनन — पृ0रा0 2/20

<u>मूल रूप + उ = विकृत रूप</u>

पृथ्वी राज रासो तथा बीसल देव रास में शून्य के अतिरिक्त एक वचन के लिये "उ" प्रत्यय प्रधान रहे हैं :-

दंत + उ = दंतउ एक दंतउ मुखि झलझलइ — बी रा0 1/3

जग्ग +उ= जग्गु परठिया पुनि राजसु जग्गु — पृ0रा0 2/1

कायर + उ = कायरु — ना0 217

<u>मूल रूप + ऐ - विकृत रूप</u>

सुसला + ऐ = सुसलै सुसलै समदां लहरि मनाई — गो0बा0पा0 57

मूल रूप + आं = विकृत रूप

गाय + आं = गायां गायां बाघ विडाऱ्या जी — गो0बा0प0 57

मूल रूप + ई = विकृत रूप

पाथर + ई = पाथरी अपिसु हीरा पाथरी — बी0रा0 37/5

मूल रूप + ह - विकृत रूप

घर + ह = घरह घरह की चिंत — बी0रा0 88/6

कंत + ह = कंतह दीय दासि करि कंतह — पृ0रा0 3/4

राम - हि= रामहि — ना0 75

पृथ्वी राज रासो में अन्यंत्र प्रत्ययो में हकार की प्रधानता विशेष उल्लेखनीय है ।

मूल रूप + इ = विकृत रूप

बाण + इ = बाणि जिउ घरे आवइ हीरा बाणि — बी0रा0 35/6

देस + इ = देसि गज्जने देसि विच्छोहि जोरी — पृ0रा0 2/7

इन प्रत्ययों के अतिरिक्त पृथ्वी राज रासो में अनेक प्रत्यय ऐसे हैं जो एक वचन और बहु वचन दोनों में समान रूप से प्रयुक्त हुये हैं ।

गुरु + अ = गुरुअ — पृ0रा0 2/3

अस्त्री + अ = अस्त्रीय — बी0रा0 47/4

पुत्त + आ = पुत्ता — पृ0रा0 2/16

सारंग + ओ = सारंगो — पृ0रा0 3/12

चंपक + स्य = चंपकस्य   पृ0रा0 2/24

देव + हि = देवहि   पृ0रा0 2/12

आदि ।

चहुआन + हुं = चहुआनहुं   पृ0रा0 3/20

"हुं" प्रत्यय बहुवचन का प्रत्यय है। पृ0रा0 में कई स्थलों पर अकारण अनुनासिकता के फलस्वरूप एक वचन में भी प्रयुक्त हुआ है ।

कारक विभक्ति

संयोगी विभक्ति

संज्ञा, सर्वनाम संयोगी कारक विभक्ति प्रातिपादिक अपने मूल रूप में ही कर्ता कारक का बोध कराते हैं । "कर्ता, कर्म और संबोधन में शब्द प्रकृति का अविकारी रूप अर्थात शून्य रूप धीरे - धीरे प्रयोग में बढ़ता गया । यह शून्य रूप सम्बन्ध तदनन्तर करण और अधिकरण कारक में भी काम आने लगा । परिणाम यह हुआ कि सभी विभक्तियों में शून्य रूप व्यापक हो गया ।"[1]

फरीद,गोरख-बानी, बीसल देव रास, तथा पृथ्वी राज रासो में शून्य प्रत्यय के अतिरिक्त "आ: "इ", "इ", "इय" "हि", "ए", ऐ, हु आदि प्रत्ययों का प्रयोग संयोगी विभक्ति के लिये हुआ है ।

---

1. अपभ्रंश भाषा का अध्ययन - वीरेन्द्र श्रीवास्तव - पृ0 228.

कर्ता कारक

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
नाथ + 0 = नाथ	नाथ कहै सो काया हमारी	गो0 बा0 स0 20/2
देवर + 0 = देवर	करि धम्म देव देवर अनेय	पृ0 रा0 2/1
राउ + 0 = राउ	बंभण भाट बोलाविया राउ	बी0 रा0 8/1
बिरल + आ = बिरला	बिरला जाणंति अकथ कहाणी	गो0 बा0 स0 66/2
गयंद + आ = गयंदा	कहो संभारेना या ठाढे गयंदा	पृ0 रा0 4/10
लहर + इ = लहरि	लहरि न पसरै सहज समाधि	गो0 बा0 सप्तबार नवग्रह
किरण + इ = किरणि	किरणि त प्रगटि दिसांन दिसांन	पृ0 रा0 12/18
एडी + इया = एयिा	एडिया डंबरं श्रोण वाणि	पृ0 रा0 4/20
अहेडी + य = अहेडीय	एक अहेडीय वनह मंझारि बिहुं वाणो उरि आं हणी	बी0 रा0 31/4
मंत्री + इय= मंत्रिय	उतरु त दीअ मंत्रिय सुजान	पृ0 रा0 2/1
किरण + ईय= किरणीय	कंचन मुहुल्ल किरणीय वंगम	पृ0 रा0 12/13
हीरा + ए = हीरे		गो0बा0पृ054
अन्धा + ए = अन्धे		ना0 142
प्रसंग + उ = प्रसंगु	जल जल गगह लोल प्रतीत प्रसंगु लिय	पृ0 रा0 6/19
भमर + ए = भमरे	झंकारे भमरे उडंति बहुला	पृ0 रा0 2/29
वछ्छ + यो= वछ्छ्यों	अभिभसहि षंजन वछ्छयो	पृ0 रा0 10/11
ललना + नि = ललनानि	कनक कंति ललनानि	पृ0 रा0 9/3

धनु + हु = धनुहु	निध्धनिय धनुहु जांनु गहइ हथ्थ	पृ0 रा0 2/5
रामनाम + 0 =रामुनाम	रामुनाम जपिलेह गंवार	ना0 122
भट्ट + हि = भट्टहि	भट्टहि अप्पइ पान	पृ0 रा0 5/21
राम + हि = रामहि	ऐसे रामहिं जानौ रे भाई	ना0 57

गोरख - बानी, बीसल देव रास तथा ^(पृ०रा में संयोगी कर्म कारक के लिये शून्य,) ऐ, औ, इय, हि , औं, आदि प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है। इनमें से "हि" तो अपभ्रंश काल की संयोगी विभक्ति है। इसी अहिं > ऐं > ऐ से एं का रूप संभव हुआ होगा। इसी प्रकार अपभ्रंश की "अहुँ" विभक्ति से अउँ पुनः अउ>औं > औं का विकास हुआ ।

करण कारक

करण कारण द्योतन के लिये शून्य, इ, ऐं ए, इय, आदि संयोगी विभक्तियों के प्रयोग मिलते हैं।

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
नारायन + 0= नारायन	नामदेव की प्रीति नराइन लागी	ना0 115
आरम्भ + 0= आरम्भ	निसदिन आरम्भ पचि-पचि मरै	गो0 बा0 स0134/2
साध + 0 = साध	साध संगि भैली	फ0 रागसूही 6
उछाह + 0= उछाह	मनिहि आणंदियउ अधिक उछाह	बी0 रा0 10/2
बाहुठ + 0 =बाहुठ	भूप बाहुठ बाजून हकै	पृ0 रा0 7/10
अकल + इ = अकलि	अकलि परि मुसलमानी	बी0 रा0 14/1
हस्त + इ = हस्तइ	आप हस्तइ लिषइ गोरडी	बी0 रा0 88/3
अंजुल + इय = अंजुलिय	मनहु अच्छ दुज दान सुअप्पति अंजुलिय	पृ0 रा 6/14
प्रवाण + ई = प्रवाणीं	अलेष लेषंत ते निज प्रवाणीं	गो0 बा0 स0 91/2

सुंढ + ए = सुंढे	तजने सिंघली सिंव सुंढे प्रहारे	पृ0 रा0 7/10
प्रसाद + ऐ = प्रसादै	गुरु प्रसादैं भौ निधि पार	गो0 बा0 प0 ति0
चमर + एन = चमरेन	स्वेत चमरेन सतुसा किंकिन आंदोलिता	पृ0 रा0 5/10
पवन + हि = पवनहि	पवनाहि दीवलउ नवि बलइ	बी0 रा 80/3
स्रवन + न = स्रवनन	सुनि स्रवनन चहुआन कउ	पृ0 रा 7/3
कटि + रसु = कटिरसु	कटिरसु भेद कट्टरी	पृ0 रा0 7/3

सम्प्रदान कारक

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
परणि + वा = परणिवा	राजा चालियउ परड़िवा	बी0 रा0 15/5
दुष्ष + आय = दुष्षाय	किंकि दुष्षाय दुष्षाय	पृ0 रा0 3/12
युक्ता + नि = युक्तानि	युक्तानि छिद्र्या दिने	पृ0 रा0 9/12
कज्ज + हि =कज्जह	सिर अप्पउ स्वामी कज्जह	पृ0 रा0 8/23
दासी + य = दासीय	जु दे दव दासीय लेहि ढहाय	पृ0 रा0 4/25

अपादान कारक

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
सिर + 0 = सिर	धर सिर छंडि परिंदु	पृ0 रा0 6/82
वइरागर + ए = वइरागरे	लिये वइरागरे सव्व हीरा	पृ0 रा0 5/13
मंडल + म्मि = मंडलम्मि	के के न गया महि मंडलम्मि	पृ0 रा0 2/2
अंदू + न = अंदून	जे न अंदून छूटे जुरंता	पृ0 रा0 7/10

संबंध कारक

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ

लगन + 0 = लगन	लगन सुपारीय दीन्ही पठाइ	बी0 रा0 8/2
पुत्त + 0 = पुत्त	पित्ते पुत्त सनेह गेह भुगता	पृ0 रा0 9/12
सुसबद + ए = सुसबदे	सुसबदे हीरा बेधिलै अवधू	गो0 बा0 स0 60/2
लोहा + ऐ = लोहै	लोहै घड़ी न सार	गो0 बा0 स0 9/2
गोरी + य = गोरीय	आयउ गोरीय पासि	बी0 रा0 63/1
मुत्ति + आ = मुत्तिआ	मुत्तिआ छत्ति दीसइ न छेहं	पृ0 रा0 4/22
सबद + हि = सबदहि	सबदहि सबद सू परचा हुआ	गो0 बा0 स 21/2
लंका + हि = लंकाहि	मनउ वानरा लग्गि लंकाहि गाज	पृ0 रा0 7/6
दरिया + ए = दरियावै	ए फरीद दरियावै इनै बागुला बैठा केलि करे	फ0 श्लोक 100
गोविन्द + अहि = गोविन्दहि	बाल गोविन्दहि न्हाजरियौं	ना0 61
जल + ह = जलह	जलह विहूणा किम जियइ माछ	बी0 रा0 36/6
मुष + ह = मुषह	अंगुलि मुषह पषिंदु	पृ0 रा0 3/25
चंपक + स्य = चंपकस्य	जाता पुल्लित चंपकस्य कलया	पृ0 रा0 2/24
कडि + या = कडिया	उषि रइ कडिया चीर पुषिना रहई ठाइ	बी0 रा0 114/3
प्रवाल + ईय = प्रवालीय	अहर प्रवालीय नइ दाडिम दंत ।	बी0 रा0 34/6
इंद + ओ = इंदो	इंदो मध्य सु विद्यमान	पृ0 रा0 5/7
राम + द = रामद	रामद दल बंनर सयल	पृ0 रा0 7/8
देव + न = देवन	बोलहु त बोल देवन समान	पृ0 रा0 2/3

<u>अधिकरण कारक</u> - अधिकरण कारक द्योतक प्रत्यय निम्न लिखित हैं ।

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
चरन+औ = चरनौ	तेरे चरनौ मेरा माथा	ना0 12
नासिका+0 = नासिका	नासिका अग्रे भ्रूमंडले	गो0 बा0 स0 275/1

धम्म + 0 - धम्म	सत षित्त सेव धरि धम्म चाउ	पृ0 रा0 2/1
सीप + 0 = सीप	चंदन सीप भरी लियइ	बी0 रा0 18/3
हाथ + इ = हाथि	महंमद हाथि करद जे होती	गो0 बा0 स0 9/2
मुख + इ = मुखि	एक दंतउ मुखि झलझलइ	बी0 रा0 1/3
संद्रुख + इ = संद्रुखि	सेस संदेह संद्रुखि मिल्ली	पृ0 रा 7/10
द्वार + ए = द्वारे	पछिम द्वारे पवना बंधि	गो0 बा0 स0 187/1
घर + ए = घरे	घरे आवइ हीरा की षांणि	बी0 रा0 35/6
परसंग + ए = परसंगे	हर सिर परसंगे	पृ0 रा0 4/11
बाल + ऐ = बालै	बालै जोबनि जे नर जती	गो0 बा0 स0 20/1
बैकुंठ + आ = बैकुंठा	मूवा मुकति बैकुंठा थान	गो0 बा0 स0 167/1
नरक + हि = नरकहिं	इकोतर सै पुरषा नरकहिं जाइ	गो0 बा0 स0 164/2
कडि + हि = कडिहि	कडिहि पटोलीय चूनड़ी सार	बी0 रा0 23/2
मास + ह - मासह	कातिग मासह जणह चलाइ	बी0 रा0 88/1

इनके अतिरिक्त पृत्वीराज रासो में निम्न लिखित प्रत्यय प्रयुक्त हैं - 5/40, 4/1, 6/29, 2/11, 4/23, 4/25, 9/12, 70/11 आदि । पृ0 रा0

<u>सम्बोधन कारक</u>

संबोधन हेतु प्राय: कर्ता कारक की विभक्ति का ही प्रयोग हुआ है -

विभक्ति प्रत्यय	उदाहरण	संदर्भ
काजी + 0 = काजी	महंमद महंमद न करि काजी	गो0 बा0 स0 9/1
स्वामी + 0 = स्वामी	स्वामी पूरब देसकउ जनम निवारि ।	बी0 रा0 32/6
देव + 0 = देव	षोडसा दान दिनु देहु देव ।	पृ0 रा 2/1

मानव+आ = मानवा	मानवा मारि नै रे मन द्रोही	गो० बा० स 228/1
जोसी+इया = जोसिया	सुबर सोध महाका जोसिया	बी० रा० 7/3
अछ्छरा+इय = अछ्छरिय	त पुच्छइ अछ्छरिय	पृ० रा० 2/14
संभरिधन+इ = संभरिधनि	गाडउ करि निग्गहउ षनिव षोदइ संभरिधनि	पृ० रा० 3/27
धण+ई = धणी	उलग जाण कहइ धणी कउण	बी० रा० 39/1
बाला+ए = बाले	थिरू बाले वल्लभ मिलन	पृ० रा० 2/22
गोरी+ए = गोरिए	ध्यान दे गोरिए	गो० बा० प० 46
गुरूराज नं = गुरूराजनं	सुनि श्रवण दे गुरूराजनं	पृ० रा० 10/11

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि " गोरख-बानी बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो आदि ग्रन्थों में शून्य प्रत्यय प्राय: सभी विभक्तियों में व्यापक रूप से प्रयुक्त है । पृथ्वीराज रासो में "इय" प्रत्यय का प्रयोग सभी कारकों के लिये हुआ है ।

वियोगात्मक कारक विभक्ति

" कारकीय रूपों में समानता होने के कारण भिन्न अर्थों को स्पष्ट करने में अपस्पष्टता आने लगी । अतएव अभिव्यक्ति की स्पष्टता के लिये अपभ्रंश काल से ही कारक परसर्गों का प्रयोग होने लगा "।[1]

परसर्ग आबद्ध रूप होते है, इसलिये इनका मुक्त प्रयोग कभी नहीं होता । ये संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण के विकारी कारक रूपों के पश्चात उनमें जुड़कर प्रयुक्त होते हैं । गोरख-बानी ,बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो में प्रयुक्त हुये वियोगी कारक परसर्ग इस प्रकार है -

---

1- वर्ण रत्नाकर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन - कृष्ण मोहन श्रीवास्तव शोध प्रबन्ध पृ० 135

कर्ता कारक

1000 से 1400 तक प्राचीन मानक हिन्दी में कर्ता कारक ने परसर्ग का प्रयोग अत्यन्त अल्प है । गोरख बानी पृथ्वी राज रासो, बीसल देव रास में "ने" परसर्ग का कोई भी परसर्ग नहीं मिलता है । जहां कहीं भी ने परसर्ग मिलता है वहां वह कर्म कारक का परसर्ग है । अपवाद स्वरूप नामदेव की बानी में मात्र दो स्थलों पर मिलता है - उनने मारा - - - - - - -- ऐसा राम हमारा नाO 193/6, 184

कर्म कारक

कर्म कारक के लिये वियोगी कारक परसर्ग "कउ" , कूं, कौ, "ने" "नइ" आदि का प्रयोग हुआ है ।

कौ	- अकल पुरिष कौ गहौ	गोO बाO सO 145/2
नै	- सिध नै धैरै	गोO बाO पO 56
नइ	- भुवण नइ देखउं रे रवि तलइ	बीO राO 1/7
कूं	- ता लोगी कूं काल न खाय	गोO बाO सO 220/2
कउ	- रोवती मेल्हि गउ धण कउ रे नाह	बीO राO 65/1
	सुनि स्रवनन चहुआन कउ भयउ निसानहि धाउ	पृO राO 7/3
कहुं	- राह रूप कम धुज्ज गज्जि लग्गउ कहुं	पृO राO 8/30
तकु	- चाहि गहउं चहुआन तकु जु मिट्टई बाला आस	पृO राO 2/27
कु	- काहे कु कीजै ध्यान जपना	नाO 22
को	मुझको दुख सवारी जग	फO श्लोक 81

करण कारक

करण कारक का मुख्य परसर्ग सु है । " सउं" तथा निरनुनासिक " सउ" दोनों का प्रयोग मिलता है । इनका विकास संस्कृत "समस" से हुआ है । इसके अतिरिक्त

सू	नवबत अजी सुबहु सू	फ0 श्लोक 80
स्यूं-	कौण देस स्यूं आये जोगी	गो0 बा0 स0 266/1
स्यउं	बादल धरती स्यउं मिल्या	बी0 रा0 77/5
सउं	सुमनंतरि कवि चंद सउं सरसइ वछि सु आय।	पृ0 रा0 3/14
सूं	तिन सूं नाहिन कामा	ना0 17
सउ	लष्षु सउ भिरइ इकिल्लउ	पृ0 रा0 8/11
सूं	सबदहिं सबद सूं परचा हूआ	गो0 बा0 स0 21/2
स्युं	बाछड्इ स्युं मिली गाइ	बी0 रा0 117/2
सुं	तिण सुं हसीय म बोलिज्यो	बी0 रा0 61/5
सु	लज्जा सु सत	पृ0 रा0 2/5
सम	हसि चक्क चक्किय सम कहिग छंद	पृ0 रा0 11/10
सन	तब सहाब सन सचरयउ मियां मलिक्क जुबांन	पृ0 बा0 12/22
तै	याही तै सब जांणि	गो0 बा0 स0 234/1
ते	कहो माल भूअदंड ते सरोह साधइ	पृ0 रा 4/10
थी	नग्र कोट उरध भी आया	गो0 बा0 स0 74/1
थी	सा क्यउं दूरि थी मेल्हियइ	बी रा0 92/3
हुंती	पलिंग हुंति धण भुइं पडी	बी0 दे0 63/3
सैं	विद्यानग्र सैं।	गो0 बा0 प0 2

करण कारक परसर्ग "ते" में "स" और "त" का विनिमय मिलता है। जो "से" का पर्याय है यह अपभ्रंश की विशेषता है।

सम्प्रदान कारक

कउ - मनउ धार आहार कउ दूध तानी पृ0रा 4/20 "लिये" अर्थ में प्रयुक्त "लउ" परसर्ग भी मिलता है -

लउ - अमु पुछ्छइ लउ पुत्ति पठावइ पृ0 रा0 6/12

इनके अतिरिक्त संबंध सूचक कारण वाचक तथा हेतु वाचक अव्यय भी सम्प्रदानार्थक परसर्ग वत् प्रयुक्त हुए है -

काज 2/3 , करि, कारणि 4/18, हित 5/2, तहं 8/30 पृ0 रा0

अपादान कारक

कारण और अपादान दोनों में "ते" परसर्ग "से" अर्थ में आये हैं। अपादान कारक में इसका आशय पृथक होने से है -

ते - जिसे सेयल ते सिंध गज जूथ पायउ पृ0 रा0 8/10

तइं - पइ - सइ - थइ ये सभी पृथकता बोधक अव्यय अपादान कारक के परसर्गवत् प्रयुक्त हुए है -

तइं 3/11, पइ 5/1, थइ 5/23, सइ 8/4 पृ0 रा0

संबंध कारक

आधुनिक हिन्दी के सम्बन्ध कारक परसर्ग " का", "के" की के अतिरिक्त अपभ्रंश परसर्ग "केरा" " केरउ" , कौ आदि का प्रयोग हुआ है। "नी" "ची" प्रयोग भी मिलते हैं -

"का" के "आ" का ह्रस्वीकरण -

क- सिंध क संकेत बूझिले सूरा, गो0बा0स01 15/1

परिरंभ अनिल कदली क पान पृ0 रा0 2/5

का- महंमद का विषम विचार गो0 बा0 स09/2

छंइया राजा का रणिवास बी0 रा0 62/4

प्रेम पियाला खसम का क0 श्लोक 16

के - मीमा का मारग रोपीलै भाण	गो0बा0स 115/2
तुहे संग संनाह के अंग अंग	पृ0 रा0 11/12
कै - त्रिया कै कारण फेडियउ राज	बी0 रा0 109/6
की - पाताल की गंगा	गो0 बा0 स 2/2
बेटि कहिज्यो राजा भोज की	बी0 रा0 8/5
कौ - मै नाहीं कौ सब कुछ डीठा	फ0 श्लोक

अन्य परसर्ग

कउ - पंच सबद कउ रूपकार	बी0 रा0 14/4
कवि देखत कवि कउ मन रत्तो	पृ0 रा0 5/13
कइ - हिरणी कइ वेस	बी0 रा 31/2
रोस कइ सोस दरिआइ लोरे	पृ0 रा0 5/13
केरा - बांझ केरा बलूडा	गो0 बा0 प0 18
केरी - गुण केरी दासी	बी0 रा 55/1
मनउ नृत्य नइ इंद आरंभ केरी	पृ0 रा0 7/6
नी - पुरिष नी परिषा पाई	गो0 बा0 प0 3
खंडा नी धार	बी0 रा0 61/2
नउ - करति तुरंग सुरंग पुछि ति पछनउ	पृ0 रा0 6/34
चा - काल चा घेरा	गो0 बा0 प0 1
ची - मृत लोक ची नारी	गो0 बा0 प0 46
चै - बाघनी चै बोलै	गो0 बा0 प0 2
रा - जियन किलित रा जंगली	पृ0 रा0 8/4

री - कामनी जेसलमेररी | बी० रा० 33/5
ति 2/5, क्ह 3/4, तन 7/5, तनी 8/9, | पृ० रा०
क्हु 12/40, सु 12/19, ज 3/32 । | पृ० रा०

अधिकरण कारक

अधिकरण कारक द्योतक प्रमुख परसर्ग इस प्रकार हैं -

मांहि -	राम सबल ही मांहि	ना० साखी ।
में -	गगन मंडल में अनहद बाजै	गो० बा० स० 32/2
महि -	गगनि सिषर महि सबद प्रकास्या	गो० बा० स० 4/2
माहि -	गोकुल माहि जिसउ परतिष्य गोविंद	बी० रा० 16/6
महि -	झषत चंदु मन महि तब सुइ अच्छोत विझान	पृ० रा० 12/17
मा -	तिमा मा प्रिरी	फ० श्लोक 88
माहीं -	होय परतीति निरंतर माहीं	गो० बा० स० 201/1
मह -	झरंत ज गंग मह	पृ० रा० 6/7
महिं -	तिन महिं सो जे भय हरण	पृ० रा० 11/4
मांहे -	मन मांहे हरषिउ राजकुमारि	बी० रा० 16/2
मइ -	फिरं कव्य चीनी न मइ रत्त पानी	पृ० रा० 4/20
मां -	नरे नरे नरिंद मां स मेस काम सुष्षेन	पृ० रा 6/7
मझ -	आवइ न माल मझ इह अभेद	पृ० रा० 2/3
मंझ -	फिर चलिंग तव्व कनवज्ज मंझ	पृ० रा० 2/3
माझौ -	षांइतडी माझौ जनम बदीतौ	गो० बा० प० 7
मंझारि -	एक अहेडीय वनह मंझारि	बी० रा० 31/4

अपर - अपर अंगारिका	फ0 श्लोक 25
मझि्झ 2/3, माझी 7/31, मझ्झ 8/31	पृ0 रा0
उप्परि - सेस सिरूप्परि	पृ0 रा0 3/26
भीतरि - द्वादस दल भीतरि रवि सक्ती	को0 बा0 प0 19
अन्य अप्रचलित परसर्ग -	
तइ 4/23, लो 5/38, सु 12/13	पृ0 रा0

अध्याय - 5

सर्वनाम

सर्वनाम

सर्वनाम उस विकारी शब्द को कहते हैं जो पूर्वापर संबंध से किसी संज्ञा के बदले में आता है, जैसे मै (बोलने वाला), तू (सुनने वाला), यह (निकटवर्ती-वस्तु), वह (दूरवर्ती वस्तु) इत्यादि ।[1]

रूपान्तर की दृष्टि से संस्कृत में एक सार्वनामिक रूप के तीन वचन, तीन लिंग 7 कारकों में 63 रूप बनते थे । अस्मद् (मै- हम) युष्मद (तू, तुम) के रूपों को छोड़कर शेष समस्त सर्वनामों मे लिंग परिवर्तन होता था । पाली - प्राकृत - अपभ्रंश में द्विवचन लुप्त हो गया । कारकों की संख्या भी क्रमशः घटती गई । इसके फलस्वरूप सार्वनामिक रूपों की संख्या में कमी हुई और सरलीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप हिन्दी में संज्ञा की भाँति केवल दो वर्ग ही शेष रह गये । (1) मूल रूप कर्ता- कारक में प्रयुक्त (ए0व0,ब0व0) और (2) विकारी रूप (ए0व0,ब0व0) अन्य कारकों के साथ । केवल ..... पुरुषवाचक के उत्तम पुरुष, और मध्यम पुरुष में एक तीसरा वर्ग सम्बन्धकारकीय रूपों का भी मिलता है ।

हिन्दी सर्वनामों का रूपान्तर केवल कारक और एक वचन की दृष्टि से होता है । लिंग की दृष्टि से होता है । लिंग की दृष्टि से हिन्दी में परिवर्तन नहीं होता है । केवल संबंधकारकीय रूपों में लिंग परिवर्तन होता है ।[2]

आदिकाल के इन प्रमुख ग्रंथों गोरख-बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो आदि में रूप, अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से निम्नलिखित सर्वनाम पाये जाते हैं :-

1- पुरुषवाचक सर्वनाम

2- निश्चय वाचक सर्वनाम

1- हिन्दी व्याकरण- पं0 कामता प्रसाद गुरु, पृ0 64

3- अनिश्चय वाचक सर्वनाम

4- निज वाचक सर्वनाम

5- संबंध वाचक सर्वनाम

6- प्रश्न वाचक सर्वनाम

7- अन्य सर्वनाम

8- सार्वनामिक विशेषण

9- सार्वनामिक क्रिया विशेषण

1- पुरुषवाचक सर्वनाम -

आदि काल के हिन्दी काव्यों में गोरखनाथ की " गोरखबानी" नरपति नाल्ह ﴾ लगभग 1400﴿ का " बीसल देव रास " और चंद वरदाई का "पृथ्वीराज रासो " आदि प्रतिनिधि ग्रंथ हैं। जिनमें प्रयुक्त पुरुष वाची सर्वनामों के प्रयोग निम्नलिखित है :-

उत्तम पुरुष ﴾ पुलिंग ﴿

मूल रूप एक वचन

मै -	ताका मै चेला।	गो० बा० प० 12
अमे -	ग्यान षोजि अमे विग्यान पाया	गो० बा० स० 201/2
हूं -	कहै ब्रहमा हूं ताका दास ।।	गो० बा० स० 16/2
हम -	ताथै हम उलटी थापना थापी।	गो० बा० स० 144/2
मइ -	मइ तुम्हे मेल्हीय हे चितोह बिसारि।	बी० रा० 49/2
हूं -	हूं न पतीजउ गोरी थारी पइपि।	बी० रा० 38/1
मइ -	मइ गोरी साहत्वदीन सर साहता।	पृ० रा० 8/2
हउं -	हउं चहुआन समथ्थ हरउं ।	पृ० रा० 6/33

मेरा	- नाथ कहै <u>मेरा</u> दुन्यौं पंथ पूरा ।	गो० बा० स० 269/1
मैं	- नामदेव कहे <u>मैं</u> नरहर माया	ना० 11
हम	- <u>हम</u> तुम दुसह मिलनु ।	पृ० रा० 8/14
(स्त्री लिंग) मोरी	- ढैकर <u>मोरी</u> माया जी	गो० बा० प० 7
मेरी	- मनसा <u>मेरी</u> व्यापार बांधौ,	गो० बा० प० 10
हम्मी	- <u>हम्मी</u> दज्झा	फ० श्लोक 6
हउँ	- <u>हउँ</u> विरह जाली	फ० राग सूही 4

आधुनिक मानक हिन्दी में " हम" बहु वचन का रूप है किन्तु गोरख-बानी और पृथ्वी राज रासो में "हम" एक वचन और बहुवचन दोनों में ही आया है । शून्य प्रत्यय के प्रभाव से संज्ञा की भांति सर्वनाम में भी विभिन्न कारकों में रूप समान रहते हैं ।

<u>मूल रूप बहुवचन</u>

हउं	<u>हउं</u> हमीर हिंदू न,	पृ० रा० 11/8
अम्हें	निज तत निहारतां <u>अम्हें</u> तुम्हें नाही।।	गो० बा० प० 27
हम	<u>हम</u> सउ राजपूत	पृ० रा० 6/23
जब	हरी कृपा करी <u>हम</u> जानी	ना० 17
	जिस आसन <u>हम</u> बैठ केते बैस गहिया	फ० आ० म० 90

<u>विकृत रूप एक वचन -</u>

मुझे	साई <u>मुझे</u> न देह	फ० श्लोक 41
मुनै	आज कोई मिलसी <u>मुनै</u> राम सनेही	ना० 102
मुझ	सतगुर <u>मुझ</u> लखाया	गो० बा० प० 10
मोहि	<u>मोहि</u> भरोसा पड़ीया	गो० बा० प० 58

मांहरा मांहरा रे बैरागी जोगी गो० बा० प० 17

म्हांनू वह म्हांनू तूठउ सिरजणहार बी० रा० 27/4

म्हानह थोड़ा थोड़ा म्हानह दे सहिनाण बी० रा० 96/2

अत्त अत्त अछ्छइ अनाथो पृ० रा० 12/15

मोहि मोहि चंद हंइ विजय मन पृ० रा० 3/21

हमहि हमहि मिलउ जि चंद चरह दलिछी लोभ पृ० रा० 12/24

संबंध कारक – हमारा – जो राषै सो गुरू हमारा गो० बा० स० 142/2

संबंध कारक – महारै– नाद महारै बावै क्वन, गो० बा० स० 106/1

संबंध कारक – म्हा– म्हा धरे साईभरि उग्रहइ। बी० रा० 28/3

" मो– मो सरिषउ नहीं अवर भूआल बी० रा 28/2

मुहुं – मुहुं सिष्य मानि पृ० रा० 2/1

मम – मम हृदय विछारये । पृ० रा० 9/14

मेरे – कहा करौं मेरे बाबुला हो ना० 131

मेरी – फरीदा रोटी मेरी काठ की फ० श्लोक 31

उत्तम पुरूष में कारकों की संयोगी स्थिति ही अधिक मिलती है । 'पृथ्वीराज रासो' में वियोगी कारक के दो उदाहरण मिलते हैं –

वियोगी कारक रूप

मुझ सउं – तुम कहु सच मुझ सउं । पृ० रा० 11/7

हम सउं – हम सउं मिलत न सोभा पृ० रा० 72/24

(स्त्री लिंग) मो नइ – रात दिवस मोनइ धारडी चिंत बी० रा० 83/6

विकृत रूप बहु वचन

संबंध कारक – अम्हारे – ग्यान गुरू दोउ तूबा अम्हारे गो० बा० प० 16

हए – हए बोल रइइ । पृ० रा० 8/1

स्त्रीलिंग

पुरुष वाचक उत्तम पुरुष सर्वनाम में स्त्रीलिंग तथा पुलिंग दोनों के रूप समान है । प्रसंग और प्रयोग से उनका लिंग निर्णय किया गया है । यहाँ उनके कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये गये है -

मूल रूप एक वचन

हूं	न्यंदा वहै हूं करी पिमृती	गो0 बा0 स0 101/2
मै	सुपणी वहै मै अलिया बोलिया	गो0 बा0 प0 45
हूं	हूं थारी गुणकेरी दासि	बी0 रा0 55/1
हउं	हउं पुच्छउं तुम सोइ	पृ0 रा0 2/21
हौं	फरीदा हौ लौंडी सहु आपना	फ0 श्लोक 45

बीसल देव रास में उ0 पु0 एवं व0 "हउं" केवल स्त्रीलिंग के लिए ही प्रयुक्त हुआ है ।

मूल रूप बहुवचन

हम	भए पति पाप हम	पृ0 रा0 10/17
आपे	चालउ सखी आपे षेलण जाइ	बी0 रा0 72/6

विकृत रूप एक वचन

मो	मो नइ मारि कइ सरिसोय लेइ	बी0 रा0 42/2
मोहि	हइ व्रत मोहि	पृ0 रा0 6/13
मय	किम बुध्धीमय तात	पृ0 रा0 2/14

सकिल्लयइ इक्क जिय

संबंध कारकी रूप " हमारा" "तुम्हारा" " मेरा" स्त्रीलिंग ई प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग "हमारी", " मेरी तुम्हारी रूप बने हैं -

मध्यम पुरुष (पुलिंग)

मूलरूप एक वचन

तिधू	- मांस न तिधू खाहि	फ0 श्लोक 73
तू	- तू अविनासी आदू कहिए	गो0 बा0 प0 58
तुम	- नाथ कहै तुम सुनहु रे अवधू	गो0 बा0 स0 27/1
तू	- धन धन तूं ही जगन्नाथ	बी0 रा0 101/6
तइ	- तइ बूडइ स्वामी म्हे बूडी	बी0 रा0 50/3
तै	तै राखउ हिन्दुआन	पृ0 रा0 8/4
तुम	तुम जानउ षित्री हइ न कोइ	पृ0 रा0 2/3
तू	नामा तू ही जल अमर	ना0 193
संबंध कारक- तेरा	मन तेरा की माई मूंडू,	गो0 बा0 स0 265/1
तोरा	कौंण अस्थांन क तोरा बासा	गो0 बा0 प0 16
तेरा	तेरा तूही दिवाना रे,	ना0 193
तुम	हम तुम दुस्सह मिलनु	पृ0 रा0 8/14
तेरी	सच्चे तेरी भरस	फ0 श्लोक 123

मूल रूप बहु वचन

तुम	तुम सा देव और नही दूजा	ना0 41
तुम	नाथ कहै तुम आपा राषौ	गो0 बा0 स0 73/3
तुम्हे	निज तत निहारतां अम्हें तुम्हे नाही	गो0 ब0स0 प0 37
तुम	तुम कूं रैन रैन बिहाई	फ0 श्लोक 33

बीसल देव रास और पृथ्वीराज रासों में मध्यम पुरुष मूल रूप बहुवचन के रूप नहीं मिलते हैं।

विकृत रूप एक वचन

	तुझि	तुझि परि वारी हो अणघड़ीया देवा	गो0 बा0 प0 58
	तोहि	तोहि लंबोदर बीनवउं	बी0 रा0 2/3
	तुम्हे	तउ राजा तुम्हे गम करउ	बी0 रा0 56/11
	तो	कुण रापी तोन्ह पाठव्यउ	बी0 रा0 104/3
	तुम्ह	संजोग जोग वर तुम्ह आज	पृ0 रा0 2/10
(अवधारणा अ)	तुहिं	तुहिं जल्लियहि	पृ0 रा0 12/35
"	तुमउ	तुमउ बतावहु	पृ0 रा0 8/2
	तुम	तुम कैसा भूल पड़ी जो	ना0 192
	तोहि	तामैं तोहि क्या आवै हासा	ना0 122
संबंध कारक	थारी	चरै थारी बुद्धि बाड़ी	गो0 बा0 स0 228/1
(स्त्री लिंग)	तुझ	पउ कि करउं तुझ पारणउ	बी0 रा0 2/5
	थारा	आउ सामी थारा डंक संभलि	बी0 रा 90/8
	तुम्हारडा	- बाजुं हो धणी तुम्हारडा दाम	बी0 रा0 45/6
	तव	तव देव कित्तिय कमलिय कमल	पृ0 रा0 3/33
	तुम्ह	तिहि तजि चिल कियउ तुम्ह पास	पृ0 रा0 रा0 6/23

विकृत रूप बहुवचन

कोई रूप नहीं मिलता । जो रूप मिलते भी है वे आदरार्थ प्रयुक्त हैं ।

स्त्री लिंग

उत्तम पुरुष की भांति ही मध्यम पुरुष में भी स्त्री लिंग और पुलिंग के रूप विभिन्न कारकों में समान मिलते हैं । प्रसंग और वाक्य की क्रिया द्वारा लिंग निर्णय लिया गया है । जिनके कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये गये है :-

मूल रूप एक वचन

तूं	गोरडी तूं घरि जाइ	बी० रा० 98/1
तुं	तुं पत्तीय राइसं थीय	पृ० रा० 2/16
तइं	तइं तूठी अम्बर ज़ुडइ	बी० रा० 4/5

मूल रूप बहुवचन

कोई रूप नहीं मिलता है ।

विकृत रूप एकवचन

तो	गहली है मुंधि तोहि लागो छइ वाइ	बी० रा० 41/1
तुम्है	मइ तुम्है मेल्हीय है चितहि विसारि	बी० रा० 49/2
तव	तव बाले वर तात	पृ० रा० 2/14

विकृत रूप बहु वचन

तुम्हारी कौण तुम्हारी बहण भाण जी — गो० बा० स० 266/1

संयुक्त सर्वनाम

संयुक्त सर्वनामों की विशेषता यह है कि ये एक ही वाक्य में जोड़े के रूप में आते है और एक ही व्यक्ति या वस्तु के स्थान पर प्रयुक्त हुये हैं -

निश्चयवाचक + निजवाचक

ते निज — अलेष लेषंत ते निज प्रवाणीं — गो० बा० स० 91/2

निश्चयवाचक + सम्बन्धवाचक

ते जे- — धूतारा ते जे धूतै आप — गो० बा० स० 43/1

निजवाचक + पुरूषवाचक

आप तूं आप तूं राजा नयर परदेस बी0 रा0 112/2

उत्तम पुरूष + मध्यम पुरूष

हं तुह हं तुह तु तुह अजप जप्पि सरू पृ0 रा0 12/38
बरू करि मिल्लउ ।

मध्यम पुरूष + मध्यम पुरूष

तुं तुह - हं तुह तुं तुह अजप जप्पि सरू पृ0 रा0 12/38
बरू करि मिल्लउ ।

संबंध वाचक + अनिश्चय वाचक

जु कछु - जु कछु इच्छि वच्छनु हुति पृ0 रा0 4/6

प्राचीन मानक हिन्दी में सब कोय, हम सब, सब कंधू, औरन कूं, सब कोऊ, सबहिन, और कोई सोयू जो, अवर कछू आदि का भी प्रयोग हुआ है ।

2- निश्चय वाचक सर्वनाम

पुरूषवाची सर्वनामों के तीसरे रूप " अन्य पुरूष" के अन्तर्गत इस निश्चयवाची सर्वनाम की गणना होती है । इससे कार्य एवं कर्ता की स्थिति का निश्चय होता है । निश्चय वाचक सर्वनामों मे मुख्यत: दो रूप होते हैं - निकटवर्ती "यह" और दूरवर्ती " वह" ।

निकटवर्ती

ए	ए अष्टांग सब झूठा	गो० बा० स० 133/1
यहु	यहु मन पांच तत्त का जीव	गो० बा० स० 50/1
यहो	यही भारे न भाजंत उदके न डूबंत	गो० बा० स० 24/2
इहि	इहि परमारथ श्री गोरष सीधा	गो० बा० स० 174/2
ए	तइ गयइ स्वामी ए घर जाइ	बी० रा० 50/5
एह	राजा भोज की चउरी एह चढ़्या जाइ	बी० रा० 27/6
इह	स्वामी थां घरि छइ किसी इह रीति	बी० रा० 58/8
इह	इह न लथ्थिय प्रथिराज	पृ० रा० 5/27
यह	तत्त धरम्मह मंतु यह	पृ० रा० 5/35
एही	घर घर एही आगू	फ० श्लोक 51

मूल रूप बहु वचन

ये	ये सब वकसि अम्हया स्वामी	ना० 15
ये	ये दुन्यौं बड़ रोग	गो० बा० स० 235/2
ये	ये दो नैना मत छूवो	फ० श्लोक 12

बीसल देव रास और पृथ्वीराज रासो में निश्चयवाची मूल रूप बहु वचन के रूप नहीं मिलते हैं। मूल रूप बहु वचन के लिये केवल "ये" पद प्राप्त मिलता है।

विकृत रूप एक वचन

इस	इस विधि अकल पुरिस कौ गहौ	गो० बा० स० 145/2
या	या पवन कोई जाणै भेव	गो० बा० स० 147/2
याही	घर याही मै सोई	गो० बा० स० 97/1
इस	इस पतिआ का इहै परवानु	ना० 218
इन्नी	इन्नी निज की जंघिए	फ० श्लोक 111

एण	तिम एण संसार मिलिज्यो सहु कोइ	बी0 रा0 128/6
इहु	इहु अपुब्वीरत्त तुहि	पृ0 रा0 6/22
इहि	इहि उप्पउं ढिल्लय तख्त	पृ0 रा0 6/33

विकृत रूप बहुवचन

इन	नाथ कहै रे पूता इनका संग निवारी	गो0 बा0 स0 261/2
इम	इम ही जाउ निरासा	गो0 बा0 प0 3
इणि	इणि दुख झूरइ अबला नी बाल	बी0 रा0 81/8
एनम्	ययउं उच्चारिय भिन्न रस एनम्	पृ0 रा0 2/16
इनकी	जब लगि इनकी आसा	ना0 75

दूरवर्ती

मूल रूप एक वचन

वो	वो हालै वो ठौर न पावै	ना0 74
वोह	न वह छीजै न वोह गलै	गो0 बा0 स0 238/2
सोई	सन्यासी सोई करै सर्वनास	गो0 बा0 स0 103/1
सा	सा धण कुरलइ मोर जिउं	बी0 रा0 65/3
वइ	निसंतान जेठं वइ गया	बी0 रा0 65/5
सा	सा जीव मदनावरे	पृ0 रा0 2/20
ता	ता दंतीनु चंपहि	पृ0 रा0 10/28
ता	ता न्रिपति चाहियं	पृ0 रा0 6/15
सो	(।। बार)	फु0 स0 38

यहां पर अवधारणार्थ दूरवर्ती मूल रूप एक वचन सर्वनाम में "इ" जुड़ा हुआ है-

कर्ता कारक + ही = सोइ हउं पुच्छउ तुम सोइ पृ0 रा0 2/21

कर्ता कारक + हो = सोई सन्यासी सोई करै सर्वनास   गो० बा० स० 103/1

मूल रूप बहु वचन

ते	ते जोगी तत सार	गो० बा० स० 34/2
वे	मरौ वे जोगी, मरौ, मरण है मीठा	गो० बा० स० 26/1
सो	नाथ कहै सो काया हमारी	गो० बा० स० 20/2
वग	वग छुट्टइ महिदान	पृ० रा० 5/19
त	त मेरु भरहिं मनु वच्छ	पृ० रा० 5/30
वे	वे फकीर अरु जाय तप	पृ० रा० 12/21

(आदरार्थ बहुवचन)

वै	वै सब बंध वरग मेरी	ना० 17
ते	प्रेम पियाला खसम का जे पीवै ते देह	फ० स० श्लोक 16

विकृत रूप एक वचन

तिस	मंद पिलन आखिए जा तिस तिन किन कोई नाहि	फ० श्लोक 76
तस	तस वार न पार	गो० बा० स 10/2
तसि	तसि अभिअंतरि पद निरबाण	गो० बा० स० 168/1
ता	ता महि न्यंद्रा आवै जाइ	गो० बा० स० 176/2
तिस	तिस घट पवनां रहै समाइ	गो० बा० स० 32/1
सा	सा किम पगस्थउ ठेलिजइ	बी० रा० 47/3
सो	सो नल राजा मेल्हि गयउ	बी० रा० 64/5
तिण	तिण भुइं पाप न संचरइ	बी० रा० 102/9
उण	उण की विरह वेदन नवि जाणइ कोइ	बी० रा० 128/6
तिहि	मझ्झ पहुर पुच्छइ तिहि पंडिय	पृ० रा० 3/19
सो	जंपिय सच्च सो चंद चंड थप्पियं जाय तिरहुति पिंडि	पृ० रा० 5/13

उहि	उहि कोर असिवन लिअउ	पृ0 रा0 8/21
उस	उस अग़र है मारग मोरा	फ0 श्लोक 7
ताकी	नामदेव कहै हरि ताकी भये	ना0 26

विकृत रूप बहु वचन

तिना	9 बार	फ0 श्लोक 93
तिनि	जिन खेवट्या तिन भरि भरि पीया	गो0 बा0 प0 28
उनहूं	कमाई अपणी उनहूं पाई	गो0 बा0 प0 58
तेणि	तेणि पाया सर्ब निरंतर	गो0 बा0 प0 3
ते	पुनर जनमेजय ते जानि लग्गे	पृ0 रा0 4/20
तिन	तिन परणाम किअउ सिर नायउ	पृ0 रा0 5/4
तांहि	बोलउ न वयण प्रथिराज तांहि	पृ0 रा0 2/3
तिण	तिण सु मीठा बोलिज्यौं	बी0 रा 60/5

आदरार्थ बहु वचन

तिन	तिन सिर की पोट उतारी	गो0 बा0 स0 206/2
ताहि	हिवइ ताहि स्युं हुआ चीटी तिवहार	बी0 रा0 117/6
तिनि	तिनि किन्ति काज त्रैलोक दिनं	पृ0 रा0 2/3

प्राचीन मानक हिन्दी मे निश्चयवाचक दूरवर्ती विकारी रूप के लिए तिन पद ग्राम के रूप में तिन्हा, तिना, तिनि, उनि सहपद के रूप में प्रयुक्त है।

3- अनिश्चय वाचक सर्वनाम

मूल रूप

कोई	कोई बादी कोई बिबादी	गो0 बा0 स 13/1
को	को घट जागत को घट सूता	गो0 बा0 स0 38/1

कछु	मुष मै कछु न कहणां	गो० बा० स० 72/2
कोई	कलंक न कोई सिर चढ्उ	बी० रा० 121/3
कोइ	तुम जानउ त्रिया हइ न कोइ	पृ० रा० 2/3
कछु	नृप अग्गइ कछ्इ न कछु	पृ० रा० 2/26
जो कछु	जो कछु इच्छ्इ चच्छ्छु हुति	पृ० रा० 4/6

विकृत रूप

काहू	मन काहू कै न बावै हाथि	गो० बा० स० 132/2
(स्त्री लिंग) केवि	केवि रहि रहि ति प्रिय प्रिय जंपइ	पृ० रा० 2/7
किनै	उकति किनै चालिए दरवेगावीरीति	फ० श्लोक 108

4- निज वाचक सर्वनाम

गोरखबानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो, में निज वाचक सर्वनाम के रूप में "अप्प" के ही विभिन्न रूप मिलते हैं। स्त्री लिंग बनाने के लिये "ई" प्रत्यय का प्रयोग किया गया है।

प्रयोग में निज वाचक " आप" पुरूष वाचक आप से भिन्न है। पुरूष वाचक "आप" एक का वाचक होकर भी नित्य बहुवचन में आता है, पर निज वाचक आप एक ही रूप से दोनो वचनों में आता है।[1]

मूल रूप एक वचन - पुलिंग

आपा	नाथ कहै तुम आपा राषौ	गो० बा० स० 73/1
आपै	दरसण माही आपै आप	गो० बा० स० 272/1
आप	आप तूं राजा नयर परदेस	बी० रा० 112/2
अप्पु	अप्पु राय चलि चनि गयु	पृ० रा० 3/14

1- हिन्दी व्याकरण- पं० कामता प्रसाद गुरू, पृ० 73

आप	आप आप विछुरे	पृ० रा० 7/14
आपणे	आपणे लिए वान्नु में	फा० श्लोक 9
अपहा आपही	कहे नाम देव आपहा आपही	ना० 183

मूल रूप बहुवचन

	आप्पु अप्पु अप्पु गए गेह परानह	पृ० रा० 3/28

विकृत रूप एक वचन

आपण	आपण ही कछ मछ आपण ही जाल	गो० बा० प० 41
आपणौ	अंदरि बैठी आपणौ साहिब	बो० बा० प० 55
आपणइ	बारइ हो बहते आपणइ	बी० रा० 6/5
आपणउ	इण परि ऊलगुं आपणउ राय	बी० रा० 40/6
आपणउ	मरण अपणउ पहिचानउ	पृ० रा० 8/21
आपियं	आपियं जंम हा भारहुत्तं	पृ० रा० 8/10

स्त्रीलिंग

मूल रूप एक वचन

आप	आप हस्तइ लिषी गोरडी	बी० रा० 88/3
अप्प	अछरू अप्प किय	पृ० रा० 2/14

विकृत रूप एक वचन

अपणी	अपणी आत्मा आप विचारी	गो० बा० स० 83/2
आपणइ	पीहर जाइसुं आपणइ	बी० रा० 37/3
अप्पनी	तपइ मेछु इछ अप्पनी	पृ० रा० 12/5

निज वाचक सर्वनाम में बहु वचन के रूप प्रायः नहीं मिलते । कहीं-कहीं

अपना के लिये निज शब्द सर्वनामवत् प्रयुक्त हुआ है । इसमे लिंग भेद से कोई परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता है -

निज	सिव सक्ती ले निज घरि रहिया	गो० बा० स० 130/2
निजु	नासा अग्र निजु ज्यौं बाई	गो० बा० प० 30
निय	निय मंडन भरतार	पृ० रा० 4/18
नी	उत नी आस सम्माधि रहियं	पृ० रा० 7/10
सोयं	सोयं[1] देषते आप नठ्ठे सरीरे	पृ० रा० 4/10

5- संबंध वाचक सर्वनाम

गोरखबानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो, नामदेव फरीद आदिकाल के इन ग्रंथों मे यत् ﴾ जो ﴿ और तत ﴾ सो ﴿ दो सर्वनाम आते हैं जिनमें यत् को संबंधवाची तथा तत को सह संबंधवाची कहा जाता है । यत् वाले रूपों की प्रधानता है ।

मूल रूप एक वचन - पुलिंग

जो	मद मांस अरु भांगि जो भषै	गो० बा० स० 164/1
जै	यहु मन ले जै उन मन रहै	गो० बा० स० 80/2
जू	आछै सौ रहै जू वा	गो० बा० स० 3/2
जो	जो घरि अविस्यइ जाति पसारि	बी० रा० 26/6
जो	जो थिर रहइ	पृ० रा० 2/21
यो	यो सु वीर संचही	पृ० रा० 6/15
जो	जो तैं कारन कुक्कियां	फ० श्लोक 10
जै	जै रघु तक्यन बढ़ाई	ना० 152

1- यहां सोयं शब्द "स्वयं" के लिये प्रयुक्त माना गया है ।

मूल रूप बहुवचन

जें	इनहीं मारि जें लागै पंथा	गो० बा० प्राससंकली 15
जे	जोगी सो जे मन जोगवै	गो० बा० स० 102/1
जु	पंडरी नाथ कु तेड जु नामा	ना० 25

बीसल देव रास, पृथ्वीराज रासो मे बहुवचन के रूप नहीं मिलते ।

विकृत रूप एकवचन

जिस	जिस मरणी गोरष मरि दीठा	गो० बा० स० 26/2
जासौ	जासौ अब बूझौ के आत्माराम सोइ	गो० बा० प० 41
जिहिं	जिहिं साध्या ते सिधै मिला	गो० बा० स० 181/2
जिण	जिण विणे जडीय न जीवती	बी० रा० 117/5
जिम	वीय चण्उ जीमजो जिम पाये हुवइ प्राण	बी० रा० 97/4
जिउं	जिउं घरे आवइ हीरे की षानि	बी० रा० 35/6
जिहि	जिहि हर सिद्धि सदा वर पायउ	पृ० रा० 5/1
जासु	नवइ ईस सीस धरो जासु गंगा ।	पृ० रा० 7/6
जिस	जिस तूं देवहि तिसहि बुझाई	ना० 152
जिस	जिस तन विरह न उपजे	फ० श्लोक 34

विकृत रूप बहुवचन

जिनना	जिनना तू जान्यो	फ० श्लोक 79
जेणै	आसण इन्ही जेणै नभि रक्ष्या	गो० बा० प० 50
जे	जिति जे षितिराय के सु राहं	पृ० रा० 5/13
जिने	जिने मोहि करि साध्य लग्गे कसंगा	पृ० रा० 7/6
जिहिं	नृप वीर जिहिं	पृ० रा० 11/12

जिन	जिन सिर अरहिं दुधार	पृ0 रा0 11/2
जिनने	जिनने जन्म डारा है तुझकूँ	ना0 192

स्त्री लिंग

मूल रूप एक वचन

जे	महंमद हाथि करद जे होती	गो0 बा0 9/2

मूल रूप बहुवचन

जा	जा दीठां मुनिवर चलइ	बी0 रा0 53/4

विकृत रूप एक वचन

जीण	कडउं जिम जीण बोलियउ	बी0 रा0 84/6
जा	तो जा पुत्तीय	पृ0 रा0 2/18
जास	मंडपं जास सोवन्न गेहं	पृ0 रा0 4/22

विकृत रूप बहुवचन

जिन	जिन जननी संसार दिखाया	गो0 बा0 प0 49
जे	जे ग्रीव ग्रीव तार तार नेन सेन मंडिही	पृ0 रा0 2/13
जिन	जिन कंत दूरि	पृ0 रा0 2/5

संयोगात्मक रूप

जाकै	जाकै घीट परै ।	गो0 बा0 19/2
जिनके	जिनके मुष मुच्छ ति मच्छरियं	पृ0 रा0 7/4

सह संबंधवाची ॥ नित्य संबंधी ॥

वाचक सर्वनाम है, परन्तु संबंध वाचक सर्वनाम के साथ आने पर इसे नित्य संबंधी सर्वनाम कहते हैं।[1]

मूल रूप एक वचन

सो	उच्चरउं कामुं सो करहु देव	पृ0 रा0 2/3
सो	जो निपजै सो होई हमारी	गो0 बा0 स0 37/1
सो	सो जिस तन विरह न उपजे सो तन जान मसान	क0 स0 10
जिस---	जिस तिस मरणी मरौ, जिस मरणी गोरख मरि दीठा।	गो0 बा0 स0 26/2
जिसका___	तिसका गुरू जिसका लषावै नहीं चेला जिसका अंध	गो0 बा0 रोमवली
जेह____	तेह जेह नइ सिरिजियउ तेहीज थाइ।	बी0 रा0 50/5
जेउं___	वइ जोवउ निसंतान जेउं वइ गया।	बी रा0 65/5
जिहि___	सो जिहि कामिनि कहहु किअउ सो कामिनि बिलसंति।	पृ0 रा0 10/4

यहां पर " जिहि --- सो" का नित्य होते हुए भी पहले "जिहि" विशेषण है और दूसरे स्थान पर सो सर्वनाम है। इसके विपरीत -

जि कछु ---- सु जि कछु मोहि अप्पणो कहउ सु बोल रहउ परवांन। पृ0 रा 12/31

यहां पर पहले जि कछु सर्वनाम है तदनन्तर सु विशेषण। पृथ्वीराज रासो में ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

प्राचीन मानक हिन्दी के सभी कवियों ने नित्य संबंधी के रूप में सो का प्रयोग किया है।

1- हिन्दी व्याकरण - पं० कामता प्रसाद गुरु, पृ० 79

6- प्रश्न वाचक सर्वनाम

1- मूल रूप एक वचन

कौन	तुम्हें करहु कौन की सेवा	गो० बा० प० 38
कौण	कौण तुम्हारी बहण भाणजी	गो० बा० स० 266
क्वन	नाद हमारे बावै क्वन	बो० बा० स० 106
कौनु	जोगी था कौनु कहइ बात	बी० रा० 118/1
कउण	उलग जाण कहइ धणी कउण	बी० रा० 39/1
काइं	तिहि धीर उलग काइं करेइ	बी० रा० 75/6
को	कलि महिझ जग्गु को करइ आज	पृ० रा० 2/3
कह	कह मग्गइ मति नट्ठ	पृ० रा० 12/30
कौ	कौ छिपिया टिग वैसल देह	ना० 167
क्वन	सुवर वस क्वन गुन	फ० श्लोक 129

(ii) मूल रूप बहुवचन

क्या	क्या चले विस नालि	फ० श्लोक 11

विकृत रूप एक वचन

किस्स	वैदल कहिए किस्सु	फ० श्लोक 13
कासो	कासो बूझो अवधू राइ	गो० बा० प० 41
कैसा	निसपति जोगी जानिबा कैसा	गो० बा० स० 139
काहु	कन्ह कहइ इह काहु	पृ० रा० 6/21

विकृत रूप बहुवचन

किणि	काने राता ढोरो गाय किणि मीर मूले	गो० बा० प० 54
किन्हूं	जाता जोगी किन्हूं न पावा	गो० बा० प० 52
काहा	किहि निम्मान काहा निम्मयउ	पृ० रा० 10/28
किनि	बरनहि किनि उनहारि रहि	पृ० रा० 5/18

7- अन्य सर्वनाम

सब	नाथ कहंतां सब जग नाथ्या	गो० बा० स० 11/1
सब कछू	नाद ही तो आदै बाबू सब कछु निधाना	गो० बा० प० 12

सारी	दिसटि पड़ै ते सारी कीमति कीमती सबद उचारं ।	गो0 बा0 स 261/1
सरब	सरब सोना की पावडी	बी0 रा0 102/5
सगली	सगली जनमांहि हुअ उछाह	बी0 रा0 27/2
अन्न	मानहि न जग्गु मनि अन्न भूप	पृ0 रा0 2/3
बियउ	बियउ नन कहूं तुझ्झ गिनि ।	पृ0 रा0 5/45
परसपर	परसपर वत्तुं किअ ।[1]	पृ0 रा0 2/4
पर	पर अच्छइ देखन भयु मिलान	पृ0 रा0 2/6
साहि	साहि दिषिष्य मयमत्त	पृ0 रा0 7/9

8- सार्वनामिक विशेषण

पुरुष वाचक और निज वाचक सर्वनामों को छोड़कर शेष सर्वनामों का प्रयोग विशेषण के समान होता है । जब ये शब्द अकेले आते हैं तब सर्वनाम होते हैं और जब इनके साथ संज्ञा आती है तब ये विशेषण होते है ।[2]

गोरख-बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वी राज रासो में सार्वनामिक विशेषणों के पर्याप्त प्रयोग मिलते हैं ।

सार्वनामिक विशेषणों की रचना दो प्रकार से होती है -

1- मूल सर्वनाम पदग्राम ही संज्ञा के पूर्व आकर विशेषण का कार्य करते हैं । यथा -

---

2- हिन्दी व्याकरण - पं0 कामता प्रसाद गुरु पृ0 - 89.

1- निज वाचक सर्वनाम " अप" का एक रूप " आपस " भी है । इसमें परस्परता-बोध के लिये परस्पर शब्द का प्रयोग भी किया जाता है । इसका प्रयोग केवल अधिकरण कारक में ही होता है ।

निश्चय वाचक, अनिश्चय वाचक, संबंध वाचक, प्रश्नवाचक, सार्वनामिक पदग्राम संकेत वाचक विशेषण का निर्माण करते हैं।[1]

2- वे सार्वनामिक विशेषण जो मूल सार्वनामिक पदग्रामों में अन्य प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं।[2]

मूल सार्वनामिक विशेषण

निश्चयवाचक निकटवर्ती - एक वचन

इहि	इहि परमारथ श्री गोरष सीधा	गो0 बा0 स0 174/2
यहु	यहु मन पांच तत्त का जीव	गो0 बा0 स0 50/1
ए	ए घर जाइ	बी0 रा0 50/3
इह	इह रमनि	पृ0 रा0 10/25
आ	आ वत्त	पृ0 रा0 10/20

बहु वचन

इणि	इणि दुषि	बी0 रा0 81/8
ये	ये नृप	पृ0 रा0 2/3
इन	इन लष्षन सब सहित	पृ0 रा0 6/13

निश्चय वाचक दूरवर्ती- एक वचन

सो	सो सन्यासी	गो0 बा0 स0 103/2
सु	सु ग्यान मुष रहिया	गो0 बा0 प0 48
सो	सो नल राजा	बी0 रा0 64/5
तिहि	तिहि घरि	बी0 रा0 75/6

1- कबीर की भाषा- डा0 माता बदल जायसवाल पृ0 115

तिण	तिण भुइ	बी० रा० 102/5
ता	ता नगर	पृ० रा० 4/22
उह	उह नर	पृ० रा० 8/21
तिहि	तिहि तप	पृ० रा० 3/1

बहु वचन

ते	ते सुरिवां	गो० बा० स० 114/2
	ते मुहु	पृ० रा० 11/6

अवधारणार्थ ई का प्रयोग भी मिलता है -

सोई	सोई निरंजन	गो० बा० स० 111/2
सोइ	सोइ वयन	पृ० रा० 3/28

अनिश्चय वाचक

कोई	कोई जोगी	गो० बा० स० 56/2
कोई	कोई कलंक	बी० रा० 121/3
कछु	कछु दान	पृ० रा० 12/21
किंचित	किचिंत किसोर	पृ० रा० 2/5

पृथ्वी राज रासो में एक स्थल पर सम्बन्धवाची सर्वनाम अनिश्चयवाची सर्वनाम एक साथ विशेष्यवत् प्रयुक्त हुये हैं। वह दोनों मिलकर अनिश्चय वाची सर्वनाम हैं -

जु कछु	जु कछु इच्छि	पृ० रा० 4/6

संबंध वाचक - एक वचन

जो	जो चोर	बी० र० 26/6
जु	साल जु	पृ० र० 12/29
जिहि	जिहि करवर	पृ० र० 11/18

बहु वचन

जे	जे नर जती	गो० बा० स० 20/1
जे	जे भर	पृ० र० 11/1
जिने	जिने सुपंग	पृ० र० 5/13
जिन	जिन जननी	गो० बा० प० 49

प्रश्न वाचक

कोण	कोण देस	गो० बा० स० 266/1
किणि	किणि दुष	बी० र० 46/6
क्वनु	क्वनु कम्मु	पृ० र० 3/31

यौगिक सार्वनामिक विशेषण

इनमें दो वर्ग है -

1- प्रणाली या गुणबोधक सार्वनामिक विशेषण

ऐसा	ऐसा अलष बिनाणी	गो० बा० स० 105/2
आइसौ	आइसौ षेल पारधी	गो० बा० प० 26
इसीय	इसीय अस्त्रीय	बी० र० 47/4
किसउ	किसउ दोष	बी० र० 42/6
अस	अस भूप	पृ० र० 5/42

केपि   केपि जुवती   पृ0 रा0 5/5

आदि काल के इन ग्रंथो, गोरखबानी, बीसलदेव रास और पृथ्वीराज रासो में गुण बोधक सर्वनामों का प्रयोग कम हुआ है ।

सर्वनामवत्प्रयुक्त सार्वनामिक विशेषण -

इतना   इतना त्यागि रहो निराला   गो0 बा0 स0 259/260

एसे   एक एक्क ऐसे कोटि नर   पृ0 रा0 6/10

जिसी   जिसी षडा नी धार   बी0 रा0 61/2

2- परिमाण बोधक सार्वनामिक विशेषण

बीसल देव रास में परिमाण बोधक सार्वनामिक विशेषण का मात्र एक प्रयोग मिलता है -

एतीय   एतीय   बी0 रा0 119/6

जितिय   जितिय नयरि सुंदरि   पृ0 रा0 4/16

इतउ   इतउ बोझ अप्पन धरहु   पृ0 रा0 8/2

जितना   जितना लाइक बासणा होवै   गो0 बा0 स0 254/2

एतें   एतें कछू कथीला गुरु   गो0 बा0 प0 2

इत्ती   सहा न इत्ती दुःख   फ0 श्लोक 77

येवढा   येवढा अपना दीठा   ना0 101

स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त परिणाम बोधक सार्वनामिक विशेषण - यहां ये संज्ञा है -

येता   येता कहिये प्रतषि काल   गो0 बा0 न0 बो0 10

एता   एता जोग न पाया   गो0 बा0 स0 39/2

यतनां	यतनां मै नहीं निपजै जोगी	गो० ब० स० 214/2
जिते	जिते स्वामि कज्जे सपर्प सुघट्टं	पृ० रा० 7/7
इत्ते	इत्ते सहित्त भुजपति चलउ	पृ० रा० 4/1
कतं	कतं स्याम स्वेत कतं नीर पारें	पृ० रा० 7/17

अन्य विशेषण

सोइ एकु   सोइ एकु बान   पृ० रा० 12/45

व्याकरण के अनुसार " वह " और "एक" मिलकर अनिश्चय सिद्ध करते हैं। किन्तु पृथ्वी राज रासो में यहां पर " सोइ एकु" निश्चय वाचक पद है।

येता एक   येता एक पंच मात्रा का उचार,   गो० बा० पंच मात्रा 23

9- सार्वनामिक क्रिया विशेषण

अर्थ के अनुसार क्रिया विशेषण के चार प्रमुख वर्ग हैं -

1- काल वाचक

2- स्थान वाचक

3- परिमाण वाचक

4- रीति वाचक

रूप रचना की दृष्टि से क्रिया विशेषण के दो वर्ग बनते हैं -

1- सर्वनाम मूलक - जो सर्वनाम के मूल + प्रत्यय लगाकर बनते हैं।

2- क्रिया मूलक + संज्ञा मूलक = क्रिया विशेषण मूलक।

प्रस्तुत अध्ययन रूप ग्रामिक अध्ययन है, एतएव दूसरा वर्ग (रूप रचना के अनुसार) अधिक महत्वपूर्ण है। क्रिया मूलक + संज्ञा मूलक = क्रिया विशेषण

मूलक पदों का अध्ययन " अव्यय" के विवेचन में किया गया है । यहां सर्वनाम मूलक क्रिया विशेषणों का संक्षिप्त विवरण है -

1- काल वाचक सार्वनामिक क्रिया विशेषण

जब	किरणि प्रगटि जब आई	गो० बा० 53/2
अब	जीत्या गोरष अब नहीं हारै ।	गो० बा० प० 57
कबहूं	कबहूं न होइगा रोगी ।	गो० बा० 33/1
जां	जां नवि देखउं अपणइ नइणि।	बी० रा० 38/2
तिहां	मेल मिली तिहां हरषियउ राउ	बी० रा० 12/1
तब	तब दूतनि उत्तर करिय पंग पुत्ति परवांन।	पृ० रा० 2/26
यावत्	तस्य कार्य विनस्यति यावत् चंद दिवाकर।	पृ० रा० 6/29

2- स्थान वाचक सार्वनामिक क्रिया विशेषण

तह	तह बूझै अलष बिनाणी	गो० बा० स० 4/2
वहां	वहां भ्रमै रे भाइ	गो० बा० स० 163/2
इहां	इहां ही आछै इहां ही अलोप	गो० बा० स० 3/1
जठइ	जठइ भाणिजइ बलद नइ हल बहइ गाइ	बी० रा० 100/2
तठइ	तठइ लाल विद्रुमी बाजइ घांटि	बी० रा० 100/4
यत्र	त्यजति ग्रहं न यत्र ग्रहनी	पृ० रा 7/24
इत	इत उपहास बिलास न प्रान पमूविहइं	पृ० रा 3/43

3- परिमाण वाचक सार्वनामिक क्रिया विशेषण

तैतै	तैतै तामै मेल्हं	गो० बा० स० 254/2
इतना	इतना त्यागि रहो निराला	गो० बा० स० 259-60/4
सरब	एक ही अक्षर सरब विणास	बी० रा० 5/6

सगल	जिहित्ताया सयल हय बाल प्रयान	पृ० रा० 2/1
इलनिइ	इलनिइ वहत भुअपति चढउं	पृ० रा० 5/48

4- रीति वाचक सार्वनामिक क्रिया विशेषण

जिम	जिम जिम बेली दाझबा लागी	गो० बा० प० 17
क्यूं	फूल्या फूल पली क्यूं होई,	गो० बा० 86/2
जिम	रतन कचोलइ जिम पाडइ भीष	बी० रा० 47/2
जे	कहाउ हमारउ जे सुणउ	बी० रा० 57/3
तिम	पंडिया तिम कहेज्यो जिम प्रीय निरिसाइ	बी० रा० 94/1
ज्यंउ	तिमिर तजि तेज भिय ज्याउं कुरंग	पृ० रा० 5/13
किम	तिहि केथि रीस किम जग्ग होइ	पृ० रा० 2/3
एम	एम रिपु खानि प्रथीराज केमइ	पृ० रा० 2/7

अध्याय - 6

विशेषण

विशेषण

जिस विकारी शब्द से संज्ञा की व्याप्ति मर्यादित होती है, उसे विशेषण कहते है, जैसे - बड़ा, काला, दयालु, भारी, एक , दो सब ।[1]

गोरख-बानी, बीसल देव रास, पृथ्वीराज रासो आदि ग्रन्थों के अन्तर्गत आये विशेषणों का विश्लेषण करने के उपरान्त यह तथ्य प्रकाशित होता है कि विशेषण योजना व्याकरण के नियमों के अनुसार ही है ।

विशेषणों में रूपात्मक योजना संज्ञा की तरह ही है । शनै: शनै : विशेषण विशेष्य के अनुरूप लिंग, विभक्ति, और वचन का अनुसारण न कर शून्य रूप धारण करने लगे हैं ।[2]

ऐसे सामान्य विशेषणों का प्रयोग बहुत अधिक है - पृ० रा०

" मन मस्त हस्ती मिलाई अवधू " गो० बा० स० 77/2

" विकल सरीर " बी० रा० 63/6

" कल अट्ठ पथ्थ कनवज्ज राउ " पृ० रा० 3/17

एक विशेषण के लिये एक से अधिक विशेषणों का भी प्रयोग मिलता है -

" विमल विमल जल पीया" गो० बा० स० 2/2

" कनवक सा विपच्चया
सुराग सीस दिठ्ठया । " पृ० रा० 3/17

कहीं-कहीं विशेषण अकेला ही प्रयुक्त हुआ है उससे पदार्थ का बोध होता है,

---

1- हिन्दी व्याकरण पं० कामता प्रसाद गुरु, पृष्ठ 87

वहां वह संज्ञा है -

येकै	येकै कोह दूसरै मानी गोरख कहै वो बड़ो ग्यानी	गो0 बा0 स0 243/2
मीठै	अवधू षारै षिरै षाटै झरै	गो0 बा0 स0 140/1
	मीठै उपजै रोग	
लाषा	लाषां माहि पिछाणिजइ	बी0 रा0 95/10
इयर	इयर जिम द धरणि रहइ	पृ0 रा0 8/28
सत्तहु	पुरमान साहि सत्तहु बधहु	पृ0 रा0 12/40

विशेषण में होने वाले रूपात्मक परिवर्तन का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है -

कारकानुसारी परिवर्तन

विशेषण और विशेष्य दोनों की कारक विभक्ति एक ही हो ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलते हैं

काचै भाडै रहै न पाणी	गो0 बा0 स0 36/2
सब्बु कव्वु	पृ0 रा0 3/11

अधिकांशत: विशेषण विशेष्य की विभक्ति मे असमानता ही मिलती है -

युक्तानि दिव्या दिने	पृ0 रा0 9/12

लिंगानुसारी परिवर्तन

अकारान्त विशेषणों में स्त्रीलिंग प्रत्यय "इ" "ई" लगाकर इकारान्त स्त्रीलिंग विशेषण बनाये गये हैं -

काची बाइ काचा जिंद	गो0 बा0 स0 156/1
बनषंड काली कोइली	बी0 रा0 81/5

इस प्रकार के परिवर्तन गोरख - बानी, पृथ्वी राज रासो में बहुत कम मिलते हैं इनकी अपेक्षा बीसलदेव रास में ऐसे प्रयोग अधिक मिलते हैं। अनेक स्थलों पर स्त्री लिंग विशेष्य के साथ शून्य प्रत्यय युक्त विशेषण भी प्रयुक्त हुए हैं। कहीं-कहीं अकारान्त विशेषण भी मिलते हैं -

अध राति गई — गो0 बा0 स0 262/1

कोमल कुरंगि — पृ0 रा0 2/5

दासि के आस लग्गे सस्पा — पृ0 रा0 4/25

<u>वचनानुसारी परिवर्तन</u>

एक वचन संज्ञा के साथ बहु वचन प्रत्यय युक्त विशेषण -

ए- बिरलै अवधू पाया — गो0 बा0 स0 131/2

इयां- कहत चंद रत्तियां — पृ0 रा0 4/14

ए - ऊंचे नीचे परबत — गो0 बा0 39

बहु वचन संज्ञा के साथ शून्य प्रत्यय युक्त विशेषण -

पव्वय पीन कुचानि — पृ0 रा0 9/14

अनंत सिधां की बाणी — गो0 बा0 स0 107/1

बहुवचन संज्ञा के साथ संख्यावाची विशेषण -

इयां - सहस अस्त्रियां — बी0 रा0 108/2

आं - बारां बरसां — बी0 रा0 128/1

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य उदाहरण भी लक्षित होते हैं -

अठसाठि तीरथ — गो0 बा0 स0 162/2

नउ लख्ख तुरिय — पृ0 रा0 12/13

इह चरित्त दीषत नयन — पृ0 रा0 12/6

गोरख-बानी, पृथ्वीराज रासो, बीसल देव रास, नामदेव, तथा फरीद में प्रयुक्त विशेषण पदग्रामों का विभाजन निम्नलिखित है -

1- गुणवाची विशेषण -

क- दिशा सूचक

ख- काल सूचक

ग- गुण सूचक

घ- दशा सूचक

ङ- रंग सूचक

च- आकार सूचक

2- संख्यावाची विशेषण

1- निश्चित संख्यावाची

क- पूर्णांक बोधक

ख- संयुक्तात्मक

ग- अपूर्णांक बोधक

घ- क्रमवाची

ङ- समुदायवाची

च- आवृत्तिवाची

2- अनिश्चित संख्यावाची

4- परिमाण वाची विशेषण

5- तुलनात्मक विशेषण

6- कृदन्तीय विशेषण

7- प्रत्येक बोधक विशेषण

8- सामासिक विशेषण

1- गुणवाची विशेषण -

गुणवाची विशेषणों की संख्या अन्य विशेषणों की अपेक्षा अधिक है, अतः इनके कुछ मुख्य अर्थ सूचक विशेषण ही प्रस्तुत किये गये हैं निम्नलिखित सूची में कोष्ठक में उनके विशेष्य भी दिये गये हैं :-

क- दिशा सूचक

पछिम ﴾देस﴿	गो० बा० स० 267/1
दाहिणे	गो० बा० स० गो०गु०
दखिणी ﴾जोगी ﴿	गो० बा० स० 41/1
अवली सवली ﴾आरती﴿	बी० रा० 17/5
दक्खिनी ﴾देस ﴿	पृ० रा० 5/13
पश्चिम ﴾दिसि ﴿	पृ० रा० 5/29

ख- काल सूचक

अध ﴾राति﴿	गो० बा० स० 262/1
अर्ध ﴾निसि ﴿	पृ० रा० 3/13
भोग समया ﴾वसंतोत्सवे ﴿	पृ० रा० 2/24

झूठा § जोगी §	गो० बा० स० 104/2
अटल § अकास §	गो० बा० स० 123/1
विकल §सरीर§	बी० रा० 63/6
कडुवा § बोल §	बी० रा० 49/1
सुरँग § पिंडुरी §	पृ० रा० 3/17
नव § विरही §	पृ० रा० 7/23
बाल § मराल §	पृ० रा० 3/17
निदोसा	फ० श्लोक 41
बड़ठिआँ	फ० श्लोक 24
अमल	फ० श्लोक 99
भ्रष्ट § विभचारी §	ना० 18
निर्मल	ना० 22

घ- दशा सूचक

मस्त §हस्ती§	गो० बा० स० 77/2
मातुी माती §अपनी§	गो० बा० प० 45
मइमत § हस्तीय§	बी० रा० 9/4
मुच्छि § काम §	पृ० रा० 2/12
संकुलिय §ग्राम§	पृ० रा० 2/5

ङ- रंग सूचक

सेत §फटक§	गो० बा० स० 174/2
काली §हांडी§	गो० बा० स० 250/2
रातइ §फूंदा§	बी० रा० 15/3

कालउ	§साप§	बी0 रा0 92/8
नारंग	§पीडी§	पृ0 रा0 4/20
नील	§अंबरं§	पृ0 रा0 4/20
काला		फा0 श्लोक 62

च- आकार सूचक

आड़ै	§ आसडि §	गो0 बा0 स0 49/2
ऊँचे नीचे	§परबत §	गो0 बा0 प0 39
चौंड्ड	§उरि§	बी0 रा0 95/7
ऊँचा	§ तोरणि§	बी0 रा0 102/6
विसाल	§ तार §	पृ0 रा0 4/25
उच्च	§ आवास§	पृ0 रा0 2/27

2- संख्यावाची विशेषण

गोरख बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो मे आये हुए संख्यावाची विशेषण के भेद उपभेद निम्नलिखित है :-

1- निश्चित संख्यावाची विशेषण

क- पूर्णांक बोधक विशेषण

एक	§ सबद §	गो0 बा0 स0 86/1

पूर्णांक " एक" के अन्य रूप भी मिलते है :-

पंच	ना0 19

इक 5/1, यैकै 243/1 येक प0 38	गो0 बा0 स0
दोइ 5/1 - बै प0 58, दै प0 38	गो0 बा0 स0
तीन 5/1 - त्रिय 94/2, तिहुं 100/2	गो0 बा0 स0
चारि 89/1, - चौ प0 13	गो0 बा0 स0
पंच 48/1 - पांच 50/1	गो0 बा0 स0
छह 5/19 - छौ 5/7	पृ0 रा0
सत 2/1 - सत्त 12/27	पृ0 रा0
दस 5/44 - दह 12/27	पृ0 रा0
द्वादस 102/2 - बारां 22/6	बी0 रा0
सोरह 7/30 - षोडसा 2/1	पृ0 रा0
चउसठ्ठि 8/26	पृ0 रा0
पचास	गो0 बा0 प्राणसंकली 5
अठसाठि 13/1	गो0 बा0 स0
बहतरि 53/1	गो0 बा0 स0
असीय 83/1	बी0 रा0
कोटि 53/1	गो0 बा0 स0
सहस्त्र 93/1	गो0 बा0 स0
हजारे 7/16	पृ0 रा0
सउ - 4/1 - सत 5/44, सतु 12/35	पृ0 रा0
बतीस	ना0 125

ख- संयुक्तात्मक विशेषण

जहां पूर्णांक बोधक दो संख्याएं मिलकर एक नयी संख्या का निर्माण करती हैं उन्हें संयुक्तात्मक विशेषण के अन्तर्गत रखा गया है। -

निनांणवै कोडि ﴾ राजा ﴿	गो० बा० 129/2
नव लष ﴾ बाण ﴿	गो० बा० स० 127/1
नौ सै ﴾ नदी ﴿	गो० बा० प० 10
लख चौरासी	ना० 124
सौ जोजन	ना० 77
सात सउ ﴾ कोसकउ ﴿	बी० रा० 89/3
सात सहस ﴾ नेजा ﴿	बी० रा० 13/3
नव लषइ ﴾ राजा ﴿	बी० रा० 96/9
सउ च्यारि ﴾ सादिया ﴿	बी० रा० 110/1
षट दह ﴾ सामंत ﴿	पृ० रा० 2/15
एक सयं ﴾ देह ﴿	पृ० रा० 2/19
असी लष्ष ﴾ पल्लाविइहि ﴿	पृ० रा० 5/45

कोष्ठक मे उपर्युक्त विशेष्यों की संज्ञाएं है ।

विशेष्यवत् प्रयुक्त सर्वनाम -

सै पंच ﴾ ते ﴿ - कर वज्जइ वज्जइ सहइं ते से पंच अच्छामि ।	पृ० रा 11/3
सट्ठि जहार ﴾सा ﴿ - सट्ठि हजारषी । पवंग सा पारषी ।।	पृ० रा० 7/15

संज्ञावत् प्रयुक्त संयुक्त संख्याएं -

सहस पचास - पालषी बइठा छह सहस पचास	बी० रा० 13/4
एक लष्ष - एक लष्ष सउं भिरइ	पृ० रा० 8/11

संयुक्त विशेषण के अन्तर्गत वे अंश भी सम्मिलित किये गये हैं जहां एक से

रंगा चंगा (जोगी) — गो0 बा0 स0 41/1

भर पूर (भंडार) — गो0 बा0 स0 159/2

गहर गंभीर (नांद) — गो0 बा0 स0 12/1

विमल विमल (जल) — गो0 बा0 स0 2/1

षरीय सुचंग (पाइल) — बी0 रा0 58/4

भला अछ्ड (पुरूष) — बी0 रा0 36/6

सुरंग चंग (पिंडुरी) — पृ0 रा0 3/17

धुम्मिल धुधलीय (धर) — पृ0 रा0 7/28

ग- <u>अपूर्णांक बोधक विशेषण</u>

एक पाव — ना0 193

असंष (दल) — गो0 बा0 सि0 द0

सकल (संसार) — गो0 बा0 स0 60/2

लाख (तुरीया) — बी0 रा0 28/5

आधी (चादर) — बी0 रा0 109/3

अध्ध (धर) — पृ0 रा0 8/32

आधा — ना0 21

घ- <u>क्रमवाची विशेषण</u>

पहलै — ना0 61

पहिल — ना0 206

दूसरौ (धीर) — गो0 बा0 स0 178/1

दसवीं (द्वारी) — गो0 बा0 प0 19

पहिलइ (फेरइ) — बी0 रा0 19/5

पंचमी (मंजली) — बी0 रा0 15/2

छेहली	{भेंटि}	बी०रा० 51/6
दूसरइ	{कडवक}	बी० रा० 2/1
दुतीय	{ससि}	पृ० रा० 7/28
बीय	{कैलास}	पृ० रा० 2/3
अन्यन	{कर}	पृ० रा० 12/36
तीअउ	{ सबद}	पृ० रा० 12/48

ड॰– समुदायवाची विशेषण

दोउ		ना० 111
पाचौं	{इन्द्री}	गो० बा० स० 18/1
छतीसौ	{ रोग }	गो० बा० स० 147/1
दसौ	{ दिसि}	गो० बा० प० 45
दुअनय	{ राजा}	बी० रा० 106/1
चिहुं	{ दिसइ }	बी० रा० 28/4
जोरि	{ कलयंठि}	पृ० रा० 2/5
बिहु	{भुज}	पृ० रा० 8/34
चावद्द	{दिसि}	पृ० रा० 7/30
पंचहु		ना० 201

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त समुदायवाची विशेषण –

दहूं – दहूं निरंतर जोगी बिलवै बिंद बसै तहा ज्यंद । — गो० बा० स० 57/2

दुहुं – दुहुं विच्चिय एक दासिय संग समानयउ — पृ० रा० 3/8

च– आवृत्ति वाची विशेषण

तीनि - तीनि बार काया पलटिबा	गो0 बा0 स0 92/2
दूणउ ʃ मान ʃ	बी0 रा0 13/2
सउ सउ बार ʃ हाथ ʃ	बी0 रा0 48/8
दून - प्रजंक त दून तस	पृ0 रा0 9/6
उभयत्रियत- उभय त्रियत वड गुज्जर	पृ0 रा0 8/35

2- अनिश्चित संख्यावाची विशेषण

एकलौ	ʃबीर ʃ	गो0 बा0 स0 178/1
नाना	ʃबणियां ʃ	गो0 बा0 प0 42
अनेक	ʃजनम ʃ	गो0 बा0 प0 13
आन	ʃदेव ʃ	गो0 बा0 प0 9
सगली	ʃधार ʃ	बी0 रा 25/5
सरब	ʃभंडार ʃ	बी0 रा0 20/4
बहु	ʃनर ʃ	बी0 रा0 6/2
दीह	ʃदीहाइ ʃ	पृ0 रा0 2/2
सघन	ʃ मुत्तिअ ʃ	पृ0 रा 5/44
विविच्च	ʃ रोम ʃ	पृ0 रा0 3/17
सब	ʃ राउ ʃ	पृ0 2/3
सकल		ना0 1
अनेक		ना0 26
अनंत		ना0 14

3- अति समीपात्मक विशेषण

1- अनुकूल स्थिति

इसमे संज्ञा के बाद स्वतंत्र संख्या आती है -

सबद एक - सबद एक पूछिबा कहौ गुरु दयाल,	गो0 बा0 स0 86/1
मास च्यारि - मास च्यारि विलंबा विज्यौं	बी0 र0 55/3
सुंदरि एग - हम सउ राजपूत सा सुंदरि एग	पृ0 र0 6/23

2- <u>प्रतिकूल स्थिति</u>

इसमें स्वतंत्र संख्या के बाद संज्ञा आती है -

सत्प धात - सप्त धात का पींजरा	गो0 बा0 प0 22
दुनिउ होठ - नास सरीसा काटउ दोनिउ होठ	बी0 र0 54/6
षोडसा दान - षोडसा दान दिनु देहु देव	पृ0 र0 2/1

4- <u>परिमाण वाचक विशेषण</u>

अति	(अहार)	गो0 बा0 स0 36/1
बहु	(जल्प)	गो0 बा0 स0 65/1
अलप	(अहारी)	गो0 बा0 स0 20/2
घणेरी	(बासण)	गो0 बा0 स0 255/2
अधिक	(तत्त)	गो0 बा0 स0 161/1
थोडा थोड़ा	(सहिनाण)	बी0 र0 95/2
घणउ	(घीय)	बी0 र0 97/4
लघु	(लोह)	पृ0 र0 2/1
सब्बु	(जल)	पृ0 र 8/3
समुदायते	(सलिला)	पृ0 र0 9/11
थोर	(बलिअ)	पृ0 र0 2/5
रत्त		फ0 श्लोक 53
बहुत		फ0 रागसूही 1/7

धनै	ना० 81
अन्य	ना० 14

5- तुलनात्मक विशेषण

तुलना के विचार से विशेषणों की तीन अवस्थाएं होती हैं -

1- मूलावस्था

2- उत्तरावस्था

3- उत्तमावस्था । [1]

1- मूलावस्था

विशेषण के जिस रूप से किसी वस्तु की तुलना सूचित नहीं होती, उसे मूला-वस्था कहते हैं। [2]

गोरख - बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो नामदेव तथा फरीद इन काव्य रचनाओं में प्रयुक्त सभी सामान्य गुणवाची विशेषण मूलावस्था में है ।

2- उत्तरावस्था

विशेषण के जिस रूप से दो वस्तुओं में किसी एक के गुण की अधिकता या न्यूनता सूचित होती है, उस रूप को उत्तरावस्था कहते हैं। [3]

जिन विशेषणों की तुलनात्मक स्थिति मिलती है वह उत्तरावस्था की ही है -

षरतर	सबद हमारा षरतर षांडा,	गो० बा० स० 264/1
अर	मन गुब्भर सिर हल्ल हइ	पृ० रा० 3/43
तर	तेह तर जोर	पृ० रा० 7/10

1- हिन्दी व्याकरण - पं० कामता प्रसाद गुरु - पृ० 215

2- वही - - - - - - - -

3- वही - - - - - - - -

निम्नलिखित उदाहरणों में भी तुलनात्मक स्थिति स्पष्ट है -

घाडे थे घुरसाप दुहेला	गो0 बा0 स0 61/2
सरवा रे सखा त्रिभुवन ते गरवा	गो0 बा0 स0 50
एक एकां थी आगली	बी0 रा0 108/3
भोली तोथी भलीय दवदंती है नारि	बी0 रा0 64/4
जीवत डी मूयां बडइ	बी0 रा0 45/5
एक अंकेक ताजी	पृ0 रा0 6/5
जु सउ भूत मझ्झि एक भूत होइ	पृ0 रा0 6/23

इष्ठ प्रत्यय के योग से मूल विशेषण में विकार -

वसिठ्ठ आदरह मंद उठि गयु वसिठ्ठ	पृ0 रा0 2/3

वसुमत + इष्ठ = वसिष्ठ वसिठ्ठ ।

6- कृदन्तीय विशेषण

वे कृदन्तीय पद जो विशेषणवत् प्रयुक्त हुए है -

बैठा	पृथ्वी का बैठा सुभाव	गो0 बा0 स0
जीवता	जीवता जोगी अमीरस	गो0 बा0 स0 192/1
मरतीय	थण मरतीय को नही दोयउ दोस	बी0 रा0 67/2
करामति	हम करामाति सुरतांन	पृ0 रा0 12/21

7- प्रत्येक बोधक

आछा आछा	आछा आछा मद ना प्याला	गो0 बा0 प0 28

इन पंक्तियों मे संज्ञा की पुनरुक्ति से प्रत्येक का बोध हो रहा है -

घरि घरि गूडी उछलइ	बी0 रा0 10/3
रंग तीय तीय अंबर सुरंग	पृ0 रा0 12/13

8- सामासिक विशेषण

निरमल	(जल)	गो0 बा0 प0 45
अखंडित	(पीर)	गो0 बा0 म0 गो0 बो0 120
निरजल	(एकादसी)	बी0 रा0 31/3
अलेस	(रूप)	बी0 रा0 34/1
निरूपम	(रूप)	बी0 रा0 34/2
नित्तीरे	(कर)	पृ0 रा0 3/2
कुव्वन	(तन)	पृ0 रा0 2/22
अनग्गु	(हयगय)	पृ0 रा0 2/1

अध्याय - 7

क्रिया

क्रिया

क्रिया वह पद है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति, वस्तु और स्थान के विषय में विधान किया जाता है । इसीलिये क्रिया वाक्य में प्रधान विधेय पद है । यह विधान प्रधानतया करने - होने से सम्बन्धित होता है । क्रिया पद वाक्य का शीर्ष है । बिना क्रिया के कोई वाक्य पूर्ण नहीं हो सकता । क्रिया पद के द्वारा ही वाक्य का मुख्यार्थ ज्ञात होता है ।

मानक हिन्दी क्रिया में निम्नलिखित आठ व्याकरणिक कोटियों के द्वारा विकार व परिवर्तन होता है -

1- काल (भूत, भविष्य, वर्तमान)

2- अर्थ (निश्चयार्थ, संभावनार्थ, आज्ञार्थ)

3- अवस्था (सामान्य, पूर्ण, अपूर्ण)

4- वाच्य (कर्तृ, कर्म, भाव)

5- प्रयोग (कर्तरि, कर्मणि, भावे)

6- लिंग (स्त्रीलिंग, पुल्लिंग)

7- वचन (एक वचन, बहु वचन)

8- पुरुष (उत्तम पुरुष, मध्यम, अन्य)[1]

क्रिया की इन व्याकरणिक कोटियों को ध्यान में रख कर ही गोरख-बानी बीसल देव रास, फरीद, नामदेव तथा पृथ्वी राज रासो की क्रियाओं का विवेचन किया गया है ।

हिन्दी रचना में सहायक क्रिया तथा कृदन्त का महत्वपूर्ण स्थान है । इसलिये सर्व प्रथम इन्हीं दोनों का विवेचन किया गया है ।

सहायक क्रिया

प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं में सहायक क्रिया का उतना ही महत्व है जितना की आज है । आलोच्य ग्रंथ गोरख - बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो मे "ह" - "भू" एवं "रह" तीन रूप मिलते हैं । पृथ्वीराज रासो में कहीं - कहीं पूर्वी हिन्दी का " आहि" रूप भी मिलता है । बीसल देव रास में सहायक क्रिया "छइ" का प्रयोग अधिक मिलता है । अछ वाले रूपों का प्रयोग भी तीनों ग्रन्थों में मिलता है ।

वर्तमान काल

उत्तम पुरूष एक वचन

(संभावनार्थ) रहूं - बरस दिन रहूं	बी0 रा0 43/2
हउं - हउं सु जोगिय हउं	पृ0 रा0 12/8

उत्तम पुरूष बहुवचन

हइ - हम देव हइ	पृ0 रा0 12/4
रहै - हम देखत रहैं	गो0 बा0 स0 118/2

मध्यम पुरूष एक वचन

हौ - भूलत हौ	गो0 बा0 प0 14
छै - करइ छै	बी0 रा 40/1
(संभावनार्थ) होयउ - होयउ कालउ साप	बी0 रा0 92/8
हुवइ - गुण हुवइ	बी0 रा0 52/2
(आज्ञार्थ) रहि - सकारह भिक्षुक रहि	पृ0 रा0 5/45

§संभावनार्थ§ अछ्छउ	पृ0 रा0 6/1

प्रधान क्रियावत प्रयुक्त

वर्तमान नि0 उ0 पु0 ए0 व0

रहूं - बरस दिन रहूं	बी0 रा0 43/2

पूर्वकालिक कृदन्त के रूप में प्रयुक्त सहायक क्रिया

होइ - जोगिणि होइ सेवउं वनबास	बी0 रा0 44/2
हुइ - उलगाणउ हुइ गम करउ	बी0 रा0 38/3

अन्य पुरूष एक वचन

है - जात है	गो0 बा0 स0 234/2
रहै - रहै समाइ	गो0 बा0 स0 32/1
हइ - तूठी हइ	बी0 रा0 5/2
आसि - मारन आसि	पृ0 रा0 5/17
है - उवइ है	पृ0 रा0 4/8

प्रधान क्रियावत् प्रयुक्त

है - यहु जग है कांटे की वाषी	गो0 बा0 स0 73/2
रहै - छाडै आसा रहै निरास	गो0 बा0 स0 16/2
आस्ति - आस्ति कहूं तौ कोइ न पतीजै	गो0 बा0 प0 15
होइ - सो जोगेस्वर निरभै होइ	गो0 बा0 स0 102/2
अछइ - काजउ तिलक अछइ भमर जिसउ	बी0 रा0 96/6
अछइ - सु मनु भट्ट सधिथहि अछइ	पृ0 रा0 5/26

संभावनार्थ

(स्त्री लिंग) होती - महंमद हाथि करद जे होती — गो० बा० स० 9/2

होता - यांन गुरु का आगे ही होता — गो० बा० स० 131/2

होइ - प्यंड होइ तौ मरै न कोई — गो० बा० स० 60/1

अन्य पुरुष बहु वचन

है - नाद बिंद है फीकी सिला — गो० बा० स० 181/2

हइ - सपि भूम हइं — पृ० रा० 5/18

हुंति - ते गया नहु गया हुंति — पृ० रा० 2/2

रहन्ति - रहंति लज्ज कोकिले — पृ० रा० 5/24

अछ्छइ - अछ्छइ सुरेण पंखी पुकार — पृ० रा० 11/10

अच्छामि - ते सै पंच अच्छामि — पृ० रा० 11/3

भूतकाल

अन्य पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

था - अभरा था ते सूभर भरिया — गो० बा० स० 61/1

(स्त्री लिंग) हुई - हुई पहिरावणी हरिखयउ राउ — बी० रा० 25/1

यउ - धूम जगायउ थउ बंभणा — बी० रा० 86/5

(स्त्री लिंग) थी - चालतां गोरडी दीधी थी सीख — बी० रा० 99/4

भयउ - जोगिनी पुरेस सुनि भयउ भेद — पृ० रा० 2/3

(स्त्री लिंग) भयी - दरबार भयी इत्ती कउ पुकार — पृ० रा० 2/10

अन्य पुरुष बहुवचन निश्चयार्थ

हुउ	- समली जनमाहि हुउ उछाह	बी0 रा0 27/2
रहि	- थरहरित थकि रहि झीन लंकी	पृ0 रा0 2/7
भये	- मुरे मोरिआ सब्ब भये जात सूने	पृ0 रा0 11/12

स्वतन्त्र क्रियावत् प्रयुक्त

अन्य पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

हूआ	- सबदोहिं सबद सूं परचा हूआ	गो0 बा0 स0 21/2
भया	- सुनि कै परचे हुआ सथीर	गो0 बा0 स0 231/1
हुयउ	- देषतां मंदिर हुआ मसांण	बी0 रा0 69/6
हुआ	- हिवइ ताहि स्युं हुआ चीरी विवहार	बी0 रा0 117/6
भयु	- भयु विहान	पृ0 रा0 12/18
हुअ	- राज सगुन समुह हुअ	पृ0 रा0 4/2

अन्य पुरुष बहु वचन

हूवा	- ता कारण अनंत सिधा जोगेस्वर हूवा	गो0 बा0 स0 3/2
भए	- गोड़ भए डगमग	गो0 बा0 प0 43
थे	- अपा अपा भपंति थे अपंति जनि योजने	पृ0 रा0 5/38
भए	- भिरइ भति भए विप्पहर	पृ0 रा0 7/25

बीसल देव रास में एक स्थल पर दो सहायक क्रियाएं एक साथ प्रयुक्त हुई है :-

हूया छइ - एह दिव सुर नर हूया छइ छार   बी0 रा0 43/6

उत्तम पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

हुवा - यूं मन हुवा थीरं — गो० बा० स० 67/2

भई - तब सर्व भई परतीति — गो० बा० स० 80/2

भयउं - अविहीन दोउ भयउ — पृ० रा० 12/37

होना क्रिया पूर्वकालिक कृदन्त के रूप में आयी है -

हुइ - धंड धंड हुइ तुंड मुंड हर हार सु मंडहु — पृ० रा० 8/14

भविष्य काल

अन्य पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

होई - करवै होई सु निकसै टोटी — गो० बा० स० 122/2

होइगी - अंतिकालि न होइगी भारी — गो० बा० स० 108/2

होइ - कहि न सकीय नीदं किसी परि होइ — बी० रा० 67/6

हुस्यइ - तिम तिम हुस्यइ हेतु — बी० रा० 88/4

होइ - वयन गए मृत होइ — पृ० रा० 2/21

होइबा - बिरधि पै क्यूं करि होइबा बाल — गो० बा० स० 86/1

होसी - तिहि घरि होसी उजियारा — गो० बा० प० 5

मध्यम पुरुष एक वचन

होइबा - अभिय पीवत तब होइबा बाल — गो० बा० स० 87/1

होइगा - कबहूं न होइगा रोगी — गो० बा० स० 33/1

होयसि - बदंती गोरख नाथ पूता न होयसि मन भंग — गो० बा० स० 166/2

कृदन्त

गोरख - बानी, पृथ्वीराज रासो तथा बीसल देव रास, नामदेव, फरीद में निम्नलिखित कृदन्तों का प्रयोग हुआ है -

1- वर्तमान कालिक कृदन्त -

प्राचीन मानक हिन्दी में वर्तमान कृदन्त के लिए + ता, + तां, + त (मतृ) + ती आदि प्रत्यय मिलते है -

धातु		प्रत्यय		सिद्धरूप	संदर्भ
काट	+	त	=	काटत	गो0 बा0 प0 17
नृख	+	त	=	नृखत	ना0 224
असीस	+	त	=	असीसत	बी0 रा0 24/5
दे	+	ता	=	देता	गो0 बा0 प0 31
धर	+	ता	=	धरता	ना0 58
झूर	+	तां	=	झूरतां	बी0 रा0 3/6
देख	+	ता	=	देखता	फ0 रागसूही 3
कथ	+	अंत	=	कथंत	गो0 बा0 स0 78/2
कहि	+	अत	=	कहिअत	ना0 207
चर	+	अंता	=	चरंता	बी0 रा0 52/5
बोल	+	अंत	=	बोलंत	पृ0 रा0 4/23
रम	+	अंति (अंत+इ)		रमंति	गो0 बा0 स0 183/1
हस	+	अंति (अंत + इ)		हसंति	पृ0 रा0 6/5
दह	+	अंती (अंत+ई)		दहंती	बी0 रा0 70/3
जड	+	इत	=	जडित	बी0 रा0 58/5

चल +	ती ॥ त+ई॥ चालती		गो0 बा0 स0 268/2
कर +	ती =	करती	ना0 19
गह +	इता ॥इत आ॥ गहिता		पृ0 रा0 5/40

गोरख-बानी और पृथ्वीराज रासो में वर्तमानकालिक कृदन्त बनाने में सर्वाधिक प्रयोग "अंत" प्रत्यय का हुआ है। इनके अतिरिक्त वर्तमान क्रिया द्योतक कृदन्तों का निर्माण "त" वाले रूप में शून्य प्रत्यय तथा "ए" प्रत्यय लगाकर किया गया है -

वर्तमान क्रिया द्योतक

जाग	+ त =	जागत -	जागत रैणि बिहांणी	गो0 बा0 स0 107/2
सुन	+ त =	सुनत	सुनत राइ अचरजि भयउ	पृ0 रा0 2/12
कर	+ अत =	करत		ना0 206
हो	+ ते =	होते		फ0 श्लोक 126
सू	+ ते =	सूते -	भोगिया सूते अजहुं न जागे	गो0 बा0 प0 44
बोल	+ ते =	बोलते	बोलते न लखी	पृ0 रा0 7/15

2- भूतकालिक कृदन्त

धातु		प्रत्यय		सिद्धरूप	संदर्भ
बईठ	+	आ	=	बईठा	गो0 बा0 प0 6
लगे	+	ए	=	लगे	ना0 229
जल्	+	या	=	जाल्या	गो0 बा0 स0 167/2
बैठ	+	आ	=	बैठा	फ0 श्लोक 46
कह	+	इया	=	कहिया	गो0 बा0 स0 22/2
हस्	+	ऐ	=	हसै ॥ ब0व0॥	गो0 बा0 स0 8/2

दग्ध	+	आ	=	दाधा	बी0 रा0 49/5
छंड	+	या	=	छंड्या	बी0 रा0 62/1
ऊभ	+	ई	=	ऊभी	बी0 रा0 79/2
चंप	+	इया	=	चंपिया	बी0 रा0 39/4
नचा	+	ये	=	नचाये	ना0 137
दग्ध	+	ओ	=	दाधो	बी0 रा0 94/5
ग	+	या	=	गया	पृ0 रा0 2/2
विवह	+	आ	=	विवहा	पृ0 रा0 6/32
बन	+	ई	=	बनी	पृ0 रा0 4/25
सोभ्	+	इय	=	सोभिय	पृ0 रा0 12/33
उड्ड	+	इयं	=	उड्डियं	पृ0 रा0 7/6
झूल	+	उ	=	झूलउ	बी0 रा0 2/6

भूत कालिक कृदन्त के लिये प्रत्यय के रूप में + आ, इया, इय, ई, उ का तथा "ए" "एं" का प्रयोग बहुवचन के लिये प्रयुक्त हुआ है।

भूत क्रिया द्योतक विकारी कृदन्त

बैठ	+	ए	=	बैठे	गो0 बा0 स0 118/2
ग	+	ए	=	गए	पृ0 रा0 2/21

3- क्रियार्थक संज्ञा

धातु		प्रत्यय		सिद्धरूप	संदर्भ
ले	+	ण	=	लेण	गो0 बा0 प0 15
लुका	+	ना	=	लुकाना	ना0 23

कथ्	+ अणी	=	कथणी	गो० बा० प० 44
रह्	+ अनी	=	रहनी	गो० बा० प० 6
निवार	+ अन	=	निवारन	ना० 15
जा	+ ण	=	जाण	बी० रा० 37/2
खेल	+ अण	=	खेलण	बी० रा० 72/6
रूद्	+ अन	=	रूदन	बी० रा० 83/6
मर	+ अन	=	मरन	पृ० रा० 8/21
पेष	+ अन	=	पेषन	पृ० रा० 4/1
कह	+ अणो	=	कहणो	पृ० रा० 8/7
वल	+ अनि	=	वलनि	पृ० रा० 6/7
नट्ट	+ अने	=	नट्टने	पृ० रा० 5/38
चल्	+ अन	=	चलन	फा० श्लोक 80

क्रियार्थक संज्ञा के लिये ना, ण, अन,अनी, अणों, अनि, अने प्रत्यय का प्रयोग मिलता है ।

4- कर्तृवाचक कृदन्त

यह कृदन्त संज्ञा अथवा विशेषण की भांति प्रयुक्त है तथा इससे कभी-कभी आसन्न भविष्य का अर्थ सिद्ध होता है । गोरख - बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वी रास रासो आदि में कर्तृवाचक कृदन्त दोनों लिंगों में है ।

धातु	प्रत्यय		सिद्धरूप	संदर्भ
पोषण	+ हारा	=	पोषणहारा	गो० बा० प० 47
पनि	+ हारी	=	पनिहारी	गो० बा० प० 47
मत	+ वाला	=	मतवाला	गो० बा० स० 78/2

दा	+	ता	=	दाता	ना0 126
बोलन	+	हारा	=	बोलनहारा	ना0 77
सिरजण	+	हार	=	सिरजणहार	बी0रा0 26/4
स्नझुण	+	कार	=	स्नझुनकार	बी0 रा0 14/4
कर	+	तार	=	करतार	बी0 रा 82/2
हर्	+	अण	=	हरण	पृ0 रा0 11/4
पन	+	हारि	=	पनहारि	पृ0 रा0 4/16
कत्त	+	रि	=	कत्तरि	पृ0 रा0 4/18
दम	+	नोइ	=	दमनोइ	पृ0 रा0 3/12

आदिकाल मे कर्तृवाचक कृदन्त के लिये मुख्य प्रत्यय - हार, हारि, हारी, अण प्रमुख प्रत्यय है ।

5- पूर्वकालिक कृदन्त

धातु		प्रत्यय		सिद्धरूप	संदर्भ
ले	+	0	=	ले	ना0 218
लै	+	0	=	लै	गो0 बा0 स0 34/2
रच	+	इ	=	रचि	ना0 214
भर	+	इ	=	भरि भरि	गो0 बा0 स0 23/2
हठ	+	करि	=	हठकरि	गो0 बा0 स0 73/1
ले	+	करि	=	लेकरि	बी0 रा0 98/2
जोड़	+	ई	=	जोड़ी	बी0 रा0 1/5
मुरड	+	ईय	=	मुरडीय	बी0 रा0 42 /5
सुन	+	इ	=	सुनि	पृ0 रा0 2/3
कर	+	इ	=	करि	फ0 सही 6

समझ्	+	आय	=	समझाय	पृ0 रा0 5/15
बोल	+	इव	=	बोलिव	पृ0 रा0 3/19
छोड़	+	कर	=	छोड़कर	ना0 193
लग्ग	+	वि	=	लग्गवि	पृ0 रा0 10/25
कर	+	कर	=	करकर	फ0 श्लोक 32

पूर्वकालिक कृदन्त का प्रमुख प्रत्यय "इ" है इसके अतिरिक्त + 0, कोर, ई, आय, इव, वि, के आदि प्रत्ययों का भी प्रयोग मिलता है ।

तत्कालिक कृदन्त

नवावत	+	0	=	नवावत	गो0 बा0 स0 222/2
फूटते	+	ही	=	फूटते ही	पृ0रा08/10
झूझंति	+	ही	=	झूझंति ही	पृ0 रा0 रा0 8/35

आदि काल के ग्रन्थों में इसका प्रयोग बहुत ही कम मिलता है ।

काल रचना

साधारण काल अथवा मूलकाल

क्रिया के उस रूपान्तर को काल कहते हैं, जिससे क्रिया के व्यापार का समय तथा उसकी पूर्ण वा अपूर्ण अवस्था का बोध होता है । काल (समय) अनादि अनंत है वह अखण्डनीय है । तथापि वक्ता व लेखक की दृष्टि से काल के तीन भाग किये गये हैं ।-

1- वर्तमान काल

2- भूत काल

3- भविष्यत् काल

वर्तमान काल निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन

+ ऊँ	–	पावऊँ	ना० 201
+ ऊं	–	रमूं	गो० बा० प० 53
+ उं	–	षाउं	गो० बा० स० 30/2
+ औ	–	निवारौ	गो० बा० स० 249/2
+ औ	–	जानौ	ना० 126
+ ऊं	–	तेडूं	बी० रा० 38/4
+ उं	–	लागुं	बी० रा० 2/2
+ सुं	–	आवसुं	बी० रा० 40/2
+ अउं	–	करउं	बी० रा० 215
+ औं	–	करौं	क० रागसूही ।

गोरख-बानी का उ० पु० ए० व० का प्रमुख प्रत्यय ऊं, है बीसल देव रास मे उ, ऊं और अउं प्रत्यय मिलते हैं ।

+ अउं- अउं प्रत्यय पृथ्वीराज रासो का प्रमुख प्रत्यय है इसमे लिंग संबंधी कोई विकार नहीं होता -

(स्त्री०)	पुच्छउं	पृ० रा० 2/21
	चलउं	पृ० रा० 3/39

अउं के अतिरिक्त अहि और मि प्रत्यय भी उ० पु० ए० व० में मिलते है -

+ अहि	–	पमुक्कहि	पृ० रा० 3/32
+ मि	–	पश्यमि (संस्कृत प्रयोग)	पृ० रा० 9/11

मध्यम पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

+ ऐ	- जानै	ना० 146
+ अहु	- करहु	गो० बा० प० 38
+ असि	- करसि	गो० बा० स० 219/2
+ औ	- मरौ	गो० बा० स० 134/1
+ अइ	- धरइ	बी० रा० 48/6
+ अउ	- जानउ	पृ० रा० 2/3
+ अहुं	- जानहुं	पृ० रा० 3/20
+ इ	- गिनि	पृ० रा० 5/45
+ ई	- जानी	पृ० रा० 10/3
+ इला	- पूणिला	गो० बा० प० 37
+ अहिं	- भवहि	फ० श्लोक 22
+ एहिं	- ढूढेहि	फ० श्लोक 22

अन्य पुरुष एक वचन निश्चयार्थ

गोरख- बानी में अन्य पुरुष एक वचन के लिये सर्वाधिक प्रमुख प्रत्यय "ऐ" है । पृथ्वीराज रासो तथा बीसल देव रास का प्रमुख प्रत्यय "अइ" है । इसका प्रयोग एक वचन तथा बहुवचन दोनों रूपों में मिलता है "अइ" > अति का ही विकसित रूप है ।

+ ए	- कहे	ना० 23
+ ऐ	- करै [स्त्री]	गो० बा० स० 19/2
	बहै	गो० बा० स० 128/1
+ अइ	- भणइ	बी० रा० 1/5
	[स्त्री] जोवइ	बी० रा० 3/4

आवइ	पृ0 रा0 2/3
+ अहि - धरहि	पृ0 रा0 5/3
+ ए - पीवए	बी0 दे0 63/4

अन्य प्रत्यय

+ वै - जोगवै	गो0 बा0 स0 102/1
जगावै (स्त्री0)	गो0 बा0 स0 175/1
+ य - पाय	गो0 बा0 स0 208/1
+ इया - कहिया	गो0 बा0 स0 22/2
+ इ - जाइ	बी0 रा0 3/6
+ अति - विहरति	पृ0 रा0 4/11
+ वाति - वरवति	पृ0 रा0 2/4
+ त - देत	पृ0 रा0 6/15
+ त - देत	पृ0 रा0 6/15

अन्य पुरुष बहुवचन निश्चयार्थ

+ ऐं - हँसैं	ना0 220
+ ऐं - दोसैं	गो0 बा0 प0 40
+ एं - त्यागें	गो0 बा0 स0 102/2
+ आई - लाई	गो0 बा0 स0 6/2
+ अइ - जुडइ	बी0 रा0 4/5
+ आइ - वंदाइ	बी0 रा0 17/2
+ अन्ति - करंति (सर्वाधिक प्रयुक्त प्रत्यय)	पृ0 रा0 2/5
+ अहि - देषहि	पृ0 रा0 2/5
+ अहिं - मिलहि	ना0 92

वर्तमान आज्ञार्थ

वर्तमान अज्ञार्थ के रूप प्राचीन तिङन्त रूपों से विकसित हुए हैं। उसमें लिंग सम्बन्धी विकास नहीं मिलता क्रिया के रूप दोनों लिंगो में समान होते हैं।

उत्तम पुरुष

उत्तम पुरुष में आज्ञार्थक क्रियाएं नहीं मिलती । पृथ्वीराज रासो में स्वयं के लिये आज्ञा मांगने के मात्र दो प्रसंग मिलते हैं :-

+ अहुं - करहुं	पृ0रा0 2/3
+ अउं - कहउं	पृ0रा0 3/22

मध्यम पुरुष एकवचन

आज्ञा अधिकांशतः मध्यम पुरुष में ही होती है। इसके लिये प्रधान प्रयुक्त प्रत्यय "इ", "हु" है। इसके बाद "अहु", "अउ", "औं", "ए", "वि", "वु", "तु", "ओ" आदि प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है ।

+ इ - करि	गो0बा0 स 9/1
सुणि	बी0 रा0 48/1
कहि	पृ0रा0 3/19
गुजरि	फ0 श्लोक 72
+ हु - सुनहु	गो0बा0स 29/1
+ अहु - चलहु	पृ0रा0 4/21
सुनहु	ना0 208

+ अउ - हसउ — बी० रा० 60/6

बरनउ — पृ०रा० 5/9

+ औं-सुणौं — गो०ब०ग्र० 74/2

+ ओ-कहौं — गो०ब०ग्र० 113/2

+ बी - फेरबी (फेर जाओ) — बी०रा० 70/8

+ इलै - करिलै — गो०ब०ग्र० 60/2

भराइलै — रा० 19

+ उ - सोध — बी० रा० 6/3

+ ए - कहे — बी०रा० 86/1

मारे — फा० श्लोक 10

बहु वचन

आदि काल की रचनाओं में आज्ञार्थ बहुवचन के रूप बहुत कम मिलते हैं-

+ उं - सुणउं - सात सहेलीय सुणउ म्यारीय बात — बी० रा० 53/1

+ इज्यो - सुणिज्यो - नाल्ह भणइ सुणिज्यो सहु कोइ — बी० रा० 49/6

+ अहुं - कहहु - कहहुं कहा कय मास — पृ० रा० 3/21

आदरार्थ आज्ञा :

आदरार्थ आज्ञा के लिये "इय", "इये", "इयइ", "इज्ज", "इज्यो" "ये", "इअ" आदि प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है ।

+ इये - बोलिये — को०ब०रा० स० 202/1

+ इये -कहीये — गो०ब०ग्र० 195/1

+ इय - निदरिय   पृ0रा0 67/12

+ इयै - संधियै   पृ0रा0 12/45

+ इज्यो - अपिज्यो   औ0 रा0 2/6

इत्यादि ।

अन्य पुरूष एक वचन

+ उ-करू   पृ0रा0 11/17

बहुवचन

+ अइं - अनसरइं   पृ0रा0 5/21

+ इयतु - दिपिष्ययतु   पृ0रा0 4/7

वर्तमान संभावनार्थ (अन्य पु0ए0व0)

वर्तमान संभावनार्थ के रूप प्राचीन तिङन्त रूपों के तद्भव रूप हैं। इसमें लिंग सम्बन्धी परिवर्तन नहीं होता है। अर्थ और प्रयोग में भिन्नता होने पर भी रूप रचना की दृष्टि से वर्तमान निश्चयार्थ और संभावनार्थ में कोई विशेष अन्तर नहीं है ।

+ एहि - देहि   ना0 152

+ आई - पतिआई   गो0बा0म0 24/2

+ अइ - मोहइ   बी0 रा0 7/5

+ औ - करौ	गो0बा0स0 8
+ उ - जाउं	गो0बा0स0 30/1
म0पु0ए0व0-इ-बोलि	ना0 105

भूतकाल निश्चयार्थ

गोरखबानी में भूत निश्चयार्थ के क्रिया रूपों में "ई", "इया", "या", का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो में अपभ्रंश की उकार बहुलता का सर्वाधिक प्रभाव भूतकालिक क्रियाओं में दिखता है। "अउ" प्रत्यय सर्वाधिक प्रयुक्त प्रत्यय है। इसके अतिरिक्त "इयउ", "अयउ", "ई", "इय" "न्हा", "या" आदि प्रत्ययों का प्रयोग मिलता है। प्रत्ययों के अनियमित प्रयोग भी मिलते हैं।

उत्तम पुरुष एकवचन

इआ - देखिया	फ0 श्लोक 82
ई - पाई	गो0बा0 प0 23
यौ लाइयौ	ना0 141
या -पसारया	गो0बा0 स0 99/2
इया - उतरिया	गो0बा0स0 104/2
अउ - कह्यउ	बी0 रा0 51/5
इय - याकिय	बी0 रा0 91/6
अयउ - अलुझ्झयउ	पृ0रा0 8/4
अइयौ - समझइयौ	ना0 175

मध्यम पुरुष एकवचन

ईया - पिरीया	ना० 94
या - देख्या	गो०बा०प० 58
इया-घड़ीया	गो०बा०प० 58
ई-गिणी	डी०रा० 45/3
इयउ - जाणियउ	बी०रा० 36/4
अउ - बिठ्ठउ	पृ०रा० 2/7
उहु - गुहुहु	पृ०रा० 12/15
इयो - पतजियो	फ० श्लोक 74

अन्य पुरुष एक वचन

इया - उतरिया	गो०बा०प० 29
आ - दीठा	गो०बा०स० 26/2
ओइ -समोइ	गो०बा०स० 88/1
यउ - धरयउ	बी० रा० 14/5
औ - गयौ	ना० 196
न्ही-कीन्ही	ना० 166
इया - मोहिया	फ० श्लोक 17
इयऊ - चालियऊ	बी० रा० 67/1
न्हा - दीन्हा	बी०रा० 47/7
या - गया	बी०रा० 65/5
अउ - बोलउ	पृ०रा० 2/3

इआ - परठिआ पृ०रा० 2/1

इयउ - चहियउ पृ०रा० 3/7

इय - बोलिय पृ०रा० 3/35

स्त्रीलिंग

"ई" प्रत्यय सर्वाधिक प्रयुक्त प्रत्यय है।

ई - गई बी० रा० 67/5

ये - भाये गो० बा० प० 17

इली - मारिली गो०बा०प० 46

आ - निपाया गो०बा० प०48

आई - निपाई बी० रा० 47/7

न्ही - दीन्ही छ बी० रा० 97/1

ई - आई पृ० रा० 3/16

अन्य प्रत्यय

"इग" प्रत्यय पृथ्वीराज रासो की भूत कालिक क्रियाओं की अपनी विशेषता है -- "चलिग" - 2/3, 2/22, 3/30, 7/14, 8/9, 7/6, 5/40 पृ०रा० रा० 3/15, 2/5, 12/33, 2/2, 8/14, 8/11 इत्यादि । 204/2, प॰52, 3/1, प० 20, प० 7 आदि । गो० बा०

अन्य पुरुष बहुवचन

अन्य पुरुष बहु वचन के लिये निम्नलिखित प्रत्यय दोनों वचनों में समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं :-

इयां - पिसरियां	फ0 आसा महला
आ - बिलूधा	गो0बा0प0 10
ईया - पलापीया	बी0 रा0 24/1
ई - बहई	गो0बा0 पा0 सं0 6
इया - कंपिया	बी0 रा0 71/1
इग - परिग	पृ0रा0 7/25
न्हीं - कीन्ही	ना0 118

पृथ्वीराज रासो में "ए" प्रत्यय अन्य पुरुष बहुवचन का प्रधान प्रत्यय है। इसमें कहीं-कहीं रे का प्रयोग भी मिलता है।

ए - गए	पृ0 रा0 3/28
रे - मुक्करे	पृ0 रा0 3/17

भविष्य काल

उत्तम पुरुष एक वचन

गा - बाधूंगा	गो0बा0 स0 264/1
स्यूं - घटिस्यूं	गो0बा0प0 6
हूं - निरबहूं	बी0रा0 40/3
स्यां - चालिस्यां	बी0रा0 59/5
सूं - देसूं	बी0 रा0 55/5
इहउं - निरषिहउं	पृ0रा0 12/2
अहु - देहुं	पृ0रा0 6/23
अइं - बिलइं	पृ0रा0 12/15
एस - कहेस	पृ0रा0 3/36

बा - बतउबा	ना0 19
ऐहौं - बैहौं	ना0 147
इहूँ - करिहूँ	ना0 173

उत्तम पुरूष बहु वचन

अहि - देहि	पृ0 रा0 8/1

मध्यम पुरूष एक वचन

गा - पस्तायेगा	ना0 178
गौ - जाइगौ	गो0 बा0 स0 99/2
स्यौ - करेस्यौं	गो0 बा0 प0 55
गे - धरोगे	गो0बा0स0 266/2
हिइ - मंगहिइ	पृ0रा0 5/28
अउ - जानउ	पृ0रा0 12/25
सी - जासी	फ0 रा0 सू0 2/1

अन्य पुरूष एक वचन

गो - जायगो	ना0 192
बा - कहिबा	गो0बा0स0 64/2
गा - चलैगा	गो0बा0स0 81/2
सी - लगाइसी (स्त्री 0)	गो0बा0स0 250/2
इ - जाइ	गो0बा0स0 155/2
स्यइ - आविस्यइ	बी0 रा0 26/6
सि - मरेसि	बी0 रा0 105/6

अहि - भेदहि	पृ०रा० 4/4
इहि - करिहि	पृ० रा० 4/3
इवि - देषिवि	पृ०रा० 8/28
इला - आइला	ना० 31
इहैं - पढ़िहैं	ना० 127

अन्य पुरूष बहुवचन

एं - विचारैं	गो०ब०स० 153/2
सी - भाजसी	गो०ब०स० 235/2
इहिं - लिइहिं	पृ०रा० 4/7
इहइं - विहंडिहइं	पृ०रा० 3/43
इहैं - हंसिहैं	ना० 194
गे - बिनसेगे	ना० 174

संयुक्त काल

संयुक्त काल की रचना सहायक क्रिया की सहायता से होती है। इनसे क्रिया की पूर्णता, अ-पूर्णता आदि अर्थ प्रकट होते हैं। संयुक्त काल को आधुनिक आर्य भाषाओं की विशेषता कह सकते हैं। आदिम काल में ये प्रयोग बहुत कम मिलते हैं। संयुक्त काल दो प्रकार के होते हैं -- वर्तमान काल और भूतकाल। इनके भी दो भेद होते हैं पूर्ण और अपूर्ण

अपूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ

उत्तम पुरूष एक वचन

देखत रहै	गो०ब०स० 118/2
परतु है	ना० 178

मध्यम पुरूष एक वचन

भूलत हौ	गो0बा0प0 14
कहता है	ना0 178

अन्य पुरूष एक वचन

करत है	ना0 140
जात है	गो0बा0 234/1
बहत रहे	गो बा0पं0 तिथि
होता है	ना0 193
फूट रहि	पृ0रा0 2/7
रही लपटाइ	पृ0रा0 4/25
छिपायउ रहइ	बी0रा0 41/5
देखता ¶है¶	फ0 रा0 सू0 1/6

अन्य पुरूष बहु वचन

खोजत रहैं	गो0बी0स0 118/2
रही समझाइ ¶स्त्री0¶	बी0रा0 52/1
थाके रही	पृ0रा0 2/7
भुल्ले रहे	पृ0रा0 4/83
कहत हैं	ना0 131

पूर्ण वर्तमान निश्चयार्थ - उ0पु0ए0 व0

उत्तम पुरूष एक वचन

आयो हूँ	ना0 53
बैठा रहूं	ना0 53

अन्य पुरूष एक वचन

माइया है	गो0 बा0 प0 37
लागउ छइ	बी0 रा0 74/1
उवइ आसि	पृ0 रा0 5/17
छावै हो	ना0 155
गाइ थिआ	प0 श्लोक 123

अन्य पुरूष बहुवचन

माइया है	गो0 बा0 प0 37
षडठा छइ	बी0 रा0 13/4
गया हुंति	पृ0 रा0 2/2

अपूर्ण भूत निश्चयार्थ

अन्य पुरूष एक वचन

झरता रहिया	गो0 बा0 स0 61/1
दीन्ही छइ	बी0 रा0 97/1
जीती थी	ना0 208
हौंदी होय	प0 श्लोक 106

पूर्ण भूत निश्चयार्थ

अन्य पुरूष एक वचन

गवाई थी	ना0 208
रहि गया	गो0 बा0 प0 28

हो जाय — फ0 श्लोक 27

भसु मिलान — पू0 रा0 2/3

जगायउ थउ — बी0 रा0 86/2

अन्य पुरूष बहु वचन

भइ लीन — पू0 रा0 2/3

मध्यम पुरूष एक वचन

दीधी थी — बी0 रा0 86/5

प्रेरणार्थक क्रिया

प्रेरणार्थक क्रिया वह क्रिया है जो यह स्पष्ट करता है कि कर्ता को कार्य के लिये प्रेरित किया गया है । आना, जाना, सकना होना, रूचना, पाना आदि धातुओं को छोड़कर शेष सभी धातुओं से दो प्रकार के प्रेरणार्थक धातु बनते है :-

1- प्रथम प्रेरणार्थक

2- द्वितीय प्रेरणार्थक

प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया में कर्ता किसी की प्रेरणा से प्रेरित होकर कार्य करता है तथा द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया में किसी दूसरे से कार्य करवाता है ।

हिन्दी में प्रथम प्रेरणार्थक के लिये - आ तथा द्वितीय प्रेरणार्थक के लिये- अव प्रत्ययों का प्रयोग होता है, गोरख - बानी में अव प्रत्यय युक्त द्वितीय प्रेरणार्थक क्रियाएं नहीं मिलती है यहाँ व्यंजनान्त प्रातिपदिकों का - आ प्रत्यय लगने से प्रथम प्रेरणार्थक प्रातिपदिक ही निष्पन्न हुए है यथा -

मिल > मिला - मिलाया फ0 सदी - 5

देख > दिखा - जिन जननी संसार दिखाया गो0 बा0 प0 49

चढ़ > चढ़ा - पाताल की गंगा ब्रह्मंड गो0 बा0 स0 2/2
चढ़ाइबा

लख > लखावै - सतगुरु होइ लखावै गो0 बा0 प0 42

दीख > दिखलावै - एकै सूत्रे नाना बणियां गो0 बा0 प0 42
बहु भांति दिखलावै

यहां अन्तिम दो उदाहरणों में - आ - प्रत्यय ही है - आव नहीं है। वर्तमान कालिक -'ऐ'- प्रत्यय लगाने पर स्वरान्त धातुओं में " व " विकरण का आगम हो जाता है। अन्तिम उदाहरण में - आ - प्रत्यय से पूर्व " ल " विकरण का आगम हुआ है।

अर्थ की दृष्टि से यह - आ - प्रत्यय सर्वत्र प्रेरणार्थक नहीं है उदाहरण में कर्म कर्तृ प्रयोग है।

अन्य

परचा नै 168/2, परसाइ 169/2 गो0 बा0 स0
भसका वै 208/1,

इन उदाहरणों मे परचा, परसा, भसका प्रातिपदिक प्रेरणार्थक नहीं है फिर भी - आ प्रत्यय अधिकांश रूप मे प्रेरणार्थक ही प्रयुक्त हुआ हैं अतः हमने इसे प्रेरणार्थक ही माना है।[1]

1- गोरखनाथ की भाषा का अध्ययन - डॉ0 कमल सिंह पृ0

पृथ्वी राज रासो में प्रथम प्रेरणार्थक तथा द्वितीय प्रेरणार्थक दोनों के प्रयोग मिलते है । मूल धातु मे अन्तर के लिये " आव " - "आ" - " आओ " विकरण का सहारा लिया गया है । धातु स्वर के दीर्घीकरण की प्रवृत्ति अधिक मिलती है ।

प्रथम प्रेरणार्थक क्रियाएं -

अन्य पुरूष धातु + आ -

विसर् + आ - विसराई पृ0 रा0 3/18

तिहि महिला महिला

विसराई ।

समझ + आ- समझा + यौ पृ0 रा0 3/18

सांमि वयन सुंदरि समझायो ।

काम + आ - कमावती बी0 रा0 82/2

मूल धातु के स्वर का दीर्घीकरण

नायउ - सिर नायउ पृ0 रा0 5/4

जालहि - मृत जालहि पृ0 रा0 3/31

धातु + अइ - (यह प्रवृत्ति अधिक मिलती है)

कढ्ढ + अइ = कढ्ढइ कसिक्क कसि हेम ति पृ0 रा0 4/25

कढ्ढइ तार

धातु + इआ

पर + बोध + इआ = परबोधिया पृ0 रा0 2/3

धातु + ओ

ब + ओ - बोल + उ = बोलउ पृ0 रा0 12/23

स्वक + यउ = स्वकयउ पृ0 रा0 12/13

यहां ओ के स्थान पर व्यंजन द्वित्व हुआ है ।

द्वितीय प्रेरणार्थक

धातु + अव -

लर्ष + अव + अइ = लर्षवइ पृ0 रा0 4/1

धातु + आव -

चर् + आव + अति = चरावति पृ0 रा0 2/5

मध्यम पुरुष - धातु + आव -

बत् + आव + अहु = बतावहु पृ0 रा0 8/2

अन्य पुरुष - धातु + आव -

सुन + आव + इयउ = सुनावियउ पृ0 रा0 3/6

पढ् + आव + उं = पढावउं बी0 रा0 84/3

वाच्य

वाच्य क्रिया का वह रूप है, जिससे यह जाना जाता है कि वाक्य मे कर्ता प्रधान है अथवा कर्म व भाव ।

वाक्य प्रयोग मे वाच्य तीन प्रकार के होते है -

कर्तृवाच्य, कर्म वाच्य, भाव वाच्य ।

कर्म वाच्य

कर्मवाचीय प्रकृति - इय { ईज } प्रत्यय युक्त गो० बा०

संस्कृत क्रियते, दीयते आदि रूपो से अपभ्रंश में इज्जइ और आगे चलकर आ० आ० भाषाओं में " ईए " प्रत्ययों का विकास माना जाता है किन्तु वस्तु स्थिति यह है कि " बोलिये " तथा " भणीजै " में क्रमशः - " इय " तथा " ईज " प्रत्यय तो कर्म वाचीय है और " ए " तथा " ऐ " प्रत्यय वर्तमान कालिक है । इस प्रकार कर्मवाचीय प्रकृति " बोलिय " " भणीजै " आदि मानी जायेगी और इन आधारो में ही काल पुरुष वचन - सूचक प्रत्यय लगेगें । इसी प्रकार अन्य उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते है -

दुःख सुष नांव न जानिये गो० बा० प०

दृष्टि कहै क्यूं लीजै दीजै गो० बा० रोमा०

इन उदाहरणों मे जानिय, लीज, दीज कर्मवाचीय प्रकृति है ।

कर्मवाच्य

संस्कृत मे तव्यत् प्रत्यय कर्म वाच्य और भाव वाच्य मे प्रयुक्त होता था उसी का विकसित रूप यह - इवा प्रत्यय है जो गोरख बानी मे " चाहिये " अर्थ से युक्त है और कर्मवाचीय भाव वाचीय मे सहायक है ।

छै छमासै काया पलटिबा गो० बा० स० 33/2

अवधू अहार कूं तोड़िबा पवन कूं मोडिबा गो० बा० स० 215/2

यहां दृष्टव्य है कि - इबा प्रत्यय के साथ अधिकांशतः कर्ता अप्रयुक्त रहता है और कर्म/क्रिया के करने का उपदेश दिया है इसलिये प्रकार्य मे कर्मवाचीय प्रकट होती है । इन्हे कर्म कर्तृ प्रयोग भी कहा जा सकता है ।

- इणां (णां) प्रत्यय

- इबा की भांति ही और ठीक अर्थ मे यह प्रत्यय भी कर्मवाचीयता प्रकट कर रहा है -

मन मे रहिणां भेद न कहिणां   गो० बा० स० 63/1

- इय / ईज प्रत्यय

गोरख - बानी मे ये दोनो ही प्रत्यय प्राप्त होते है -

अवधू ईश्वर हमारै चेला भणींजे   गो० बा० स० 144/1

जिभ्या कहै क्यूं षाटी मीठी षाइये   गो० बा० रोमा 0

+ ज्यो - नाई साहुणी को देज्यो मान   बी० रा० 60/5

+ इज्यो - ढूलउ जी अक्षर आणिज्यो ठांइ   बी० रा० 2/6

+ इजइ - हर तूठइ वर पामिजइ   बी० रा० 51/3

+ इये - कि चरू छत लगाइयो   फ० श्लोक 29

+ इए - वेद कहिए   फ० श्लोक 13

पृथ्वी राज रासो का प्रधान कर्म वाच्य प्रत्यय " इअ " है -

+ इअ - जिनिअ जगत   पृ० रा० 2/9

+ इअइ - जानियइ चंदु संग्रहन मत्ति   पृ० रा० 11/10

+ इये - दिष्षिये कोटि कोटिन्न नंगा   पृ० रा० 4/23

+ इजे - स्रवन सुनिजे सुलीय लिय   पृ० रा० 7/28

+ इज्जइ - मध्य ता नयर किज्जइ पिचारं   पृ० रा० 4/22

+ ज्ज - दक्खिन करि कनवज्ज कउ पुंनि समुह मरणज्ज   पृ० रा० 6/3

+ ये - सा जंम सूर चहुवान मान इंद इम जानये — पृ० रा० 6/15

+ ते - संवादेव विनोदेव देव देवेन रक्षते — पृ० रा० 2/25

+ यते - दीपंानि वर दायते — पृ० रा० 9/12

कर्मणि प्रयोग

कर्मणि प्रयोग क्रिया का वह रूपान्तर है जिससे यह जाना जाता है कि क्रिया का अन्वय (लिंग वचन सहयोग) कर्म के अनुसार है। कर्मणि प्रयोग के कुछ ही उदाहरण मिलते हैं -

स्त्री लिंग कर्म के अनुसार स्त्री लिंग क्रिया

सबै कमाई खोई गुरु	गो० बा० प० 2
धरती उलटि गगनि कूं दौरी	गो० बा० प० 56
रहि गई छोई	गो० बा० प० 2
काइं सिरजी उलगाणांरी नारि	बी० रा० 3/5
जाणि करि बाछडउ स्यु मिली गाइ	बी० रा० 117/2
मइ छंडी हो स्वामी थारी आस	बी० रा० 44/1
रमा रमै सा मतीनृ	पृ० रा० 3/2
गज्जने देसि विच्छोहि जोरी	पृ० रा० 2/7
दरबार भयी इत्ती जउ पुकार	पृ० रा० 2/10
सम्भल वपमझरी	फा० श्लोक 7

पुलिंग कर्म के अनुसार पुलिंग क्रिया

सुपिनैं मे धन पाया पड़ा	गो० बा०
किय कव्वु सव्वु सरसह	पृ० रा०
एक दंतउ मुरिव झलझलइ	बी० रा०
सोम अम्रत कम्मल तुम्ह न हवै	पृ० रा०

नाम धातु

गोरख-बानी, बीसल देव रास, पृथ्वी राज रासो में नाम धातुओं के निर्माण की प्रक्रिया कम मिलती है ।

+ ए	- ग्रास + ए = ग्रासे	गो०बा०स०229/1
+ऐ	- बणिज+ ऐ = बणिजै	गो०बा०प०3
+ ई	- बिचार + ई = बिचारी	गो०बा०स०82/2
+ अहि-	अकुर + अहि = अंकुरहि	पृ०रा० 2/5
+ इत	- कुसुम + इत = कुसमित	पृ०रा० [illegible]
+ वइ	- भोग + वइ = भोगवइ	पृ०रा० 10/13
+ उ	- उप्पज + उ = उप्पजउ	बी० स० 2/3
+ आवती	- काम + आवती = कमावती	बी०रा० 82/2
+ णा	- कुमला + णा = कुमलाणा	बी० रा० 74/2

अनुकरण धातु

किसी पदार्थ की ध्वनि के अनुकरण पर जो धातु बनाये जाते हैं उन्हें अनुकरण धातु कहते हैं। अपभ्रंश में शब्दानुकरण धातुओं की योजना का प्रचार हुआ था । इसका थोड़ा प्रभाव आदिकालीन ग्रंथों परभी पड़ा है ।

भरहर	गो०बा०प० 47
झिलमिल	गो०बा०स० 54/1
फरहरइ	बी०रा० 71/6
झिगमिगइ	बी०रा० 58/3
कनंकई	पृ०रा० 7/25

संयुक्त क्रिया

संयुक्त क्रिया आधुनिक आर्य भाषा की प्रमुख विशेषता है। गोरख-बानी, बीसलदेव रास तथा पृथ्वी राज रासों में संयुक्त क्रियाओं का निर्माण नाम बोधक धातुओं तथा कृदन्तीय क्रियाओं की सहायता से हुआ है। कृदन्तीय क्रियाओं का प्रयोग अधिक हुआ है ।

नाम बोधक संयुक्त क्रिया

संज्ञा + वर्तमान कालिक क्रिया अन्य पुरुष

गोता षाई	गो0पद0स0 118/1
तप करइ	बी0 रा0 101/3
रक्षा करे	पृ0रा0 3/6

संज्ञा + भूतकालिक क्रिया अन्य पुरुष

चीरा लगा	गो0बा0प्रा0सं0 6
कियउ जुहार	बी0रा0 106/4
आरंभ कीनउ	पृ 0 रा0 2/3

कृदन्तो के योग से बनी संयुक्त क्रिया

पूर्वकालिक कृदन्त + वर्तमान कालिक क्रिया - अन्य पुरुष

बैसि षाइला	गो0बा0प0 34
ढलकि करि आवइ (स्त्री0)	बी0रा0 85/6
मिलि षिलहिं	पृ0रा0 2/5
जाय लगइ	पृ0रा0 8/14

पूर्वकालिक कृदन्त + भूतकालिक क्रिया – अन्य पुरुष :

लड़ि लड़ि मुये (ब0व0)	गो0बा0पा0 29
जाइ बइठी (स्त्री0)	बी0रा0 116/3
चलि गये	फ0 श्लोक 78
मरि गई	ना0 141
आइ पहुतउ	बी0रा0 32/2
उठि गयु	पृ0रा0रा0 2/3

पूर्वकालिक कृदन्त + भविष्य कालिक क्रिया –उत्तम पुरुष

लेकरि आवउं	बी0रा0 98/2
बहि संवरउ	पृ0रा0 2/11
मिलि जाऊंगा	ना 99

अन्य पुरुष

टलि जाहि	पृ0रा0 2/3
भुलइ पडेसि	बी0दे0 112/6

पूर्वकालिक कृदन्त + प्रेरणार्थक क्रिया – अन्य पुरुष

पाया पड़ा	गो0बा0 सं0 154/1
बनी दिखइ	पृ0रा0रा0 4/25
भरी लियइ	बी0 रा0 18 /3

उत्तम पुरुष

लेष्यउ लाध्यउ — बी0रा0 27/5

भूतकालिक कृदन्त + वर्तमान कालिक क्रिया-उत्तम पुरुष

दइ लियउं बताइ — पृ0रा0 6/23

वर्तमान कालिक कृदन्त + वर्तमान कालिक क्रिया -अन्य पुरुष

भटकत फिरहीं — गो0बा0स0 150/2

झूलती आवै (स्त्री0) — गो0बा0 प0 16

क्रियार्थक संज्ञा + वर्तमान कालिक क्रिया-अन्य पुरुष

पुजावण जाइ — बी0रा0 18/2

गहिहि चाहि — पृ0 रा0 6/24

उत्तम पुरुष

षेलण जाइ — बी0 रा0 72/6

क्रियार्थक संज्ञा + भूतकालिक क्रिया - अन्य पुरुष

बाजन लागी — गो0बा0प0 16

लिषन कीन — पृ0रा0 2/5

दीषन लागा (उत्तम पुरुष) — गो0बा0स0 80/2

पूर्व क्रियाद्योतक कृदन्त + भूतकालिक क्रिया

बांटि लियं	पृ०रा०रा० 7/4
सूक गया	बी०रा० 74/2
सूकट लिया	बी०रा० 64/3
रहि गईला	गो०बा० प० 2

क्रियार्थक संज्ञा से बनी अवकाश बोधक क्रियाएं

न देई जाण	गो०बा०प० 27
जाण न देइ	बी० रा० 42/1
कहउ न जाइ	पृ०रा० 3/22
छंडि न जाइ	पृ०रा० 3/27

क्रियार्थक संज्ञा + भविष्य कालिक क्रिया-अन्य पुरुष

सहणा जाइ	बी०दे०रा० 77/6

अन्य संयुक्त क्रियाएं

लूटि लै	गो०बा०स० 77/2
चले चलि	गो०बा०स० 163/1
पाया लो	गो०बा०स० 80/1
गउ भुलइ पडेसि	बी० रा० 112/6
रुक्कउ लेहि	पृ०रा० 8/19
जाउ सु जाइ	पृ०रा० 10/7

रुक्कि सक्किय न	पृ०रा० 3/33
डारत फिरै	ना० 58
भरमतो फिरयाँ	ना० 49
सहया न जाई	फा० श्लोक 28
जाय मिला	फा० श्लोक 28
आई बैठा	फा० 50
उडनि जरहि	फा० 93

+++++++++

अध्याय - 8

अव्यय

अव्यय

जिन पदों में सामान्यतया लिंग, वचन, कारक,पुरुष सम्बन्धी कोई विकार नहीं होता है उन्हें अव्यय कहा जाता है।[1] रूप और अर्थ की दृष्टि से अव्यय चार प्रकार के होते है -

1- क्रिया विशेषण

2- संबंध सूचक

3- समुच्चय बोधक

4- विस्मयादि बोधक

आदि काल के इन प्रतिनिधि ग्रंथों गोरख - बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो, नामदेव,फरीद में चारों प्रकार के अव्यय पाये जाते हैं।

1- क्रिया विशेषण

जिस अव्यय से क्रिया की कोई विशेषता मानी जाती है, उसे क्रिया विशेषण कहते है।[2]

अर्थ की दृष्टि से क्रिया विशेषण को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है -

1- काल वाचक

2- स्थान वाचक

3- परिमाण वाचक

4- रीति वाचक

रूप रचना की दृष्टि से इनके दो मुख्य वर्ग बनते हैं -

1- मानक हिन्दी का ऐतिहासिक व्याकरण- डा0 माताबदल जायसवाल पृ0 = 57

2- हिन्दी व्याकरण - पं0 कामता प्रसाद गुरु - पृ0 117

1- सर्वनाम मूलक - जो सर्वनाम के मूल + प्रत्यय लगाकर बनते हैं।

2- क्रिया मूलक - संज्ञा मूलक + क्रिया विशेषण मूलक ।[1]

यहां पर क्रिया विशेषण पदों का विश्लेषण अर्थ और रूप दोनों दृष्टिकोणों का समन्वय करके किया गया है -

1- काल वाचक क्रिया विशेषण

काल वाचक क्रिया विशेषण के तीन भेद होते हैं -

समय वाचक, अवधि वाचक, पौन: पुन्य वाचक ।

क- समय वाचक - (सर्वनाम मूलक)

किथरू (कब तक)	फरीदा कोपे आड रखिए किथरू नरि	फ0 श्लोक 97
जब	किरपि प्रगटि जब आदं	गो0 बा0 स0 53/2
तब	तब गगन भया मैदान	गो0 बा0 स0 76/2
अब	जीत्या गोरष अब नहीं हारै	गो0 बा0 प0 57
कबहूं	कबहूं न होइगा रोगी	गो0 बा0 स0 33/1
तिहां	मेल मिली तिहां हरषियउ राउ	बी0 रा0 12/1
जां	जां नवि देखउं अपणइ नइपि	बी0 रा0 38/2
तउ	तउ कहि नइ कागल किमनइ देस	बी0 रा0 112/4
अब्ब	कनवज्ज नाथ करि जग्गु अब्ब	पृ0 रा0 2/3
तब	तब दूतिन उत्तर करिय	पृ0 रा0 2/6
जबह	जबह राइ जानइ संमुह हुअ	पृ0 रा0 3/39
कब	कब हउं नयन निरषिष हउं	पृ0 रा0 12/2
अबहूं	अबहूं न टरिअ	ना0 211

कुछ क्रिया विशेषण ऐसे भी हैं जहां संबंधवाची सर्वनाम और सह संबंधवाची

1- कबीर की भाषा - डा0 माता बदल जयसवाल - पृ0 169-70.

सर्वनाम एक ही वाक्य में नित्य संबंधी रूप में प्रयुक्त हुए हैं -

जाम - - - - ताम मंत्रीनु राउ परबोधिया जांम पृ० रा० 2/3

धुम्मिआ बार नीसान ताम

(संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक) -

अहनिसि	अहनिसि कथिबा ब्रम्ह गियांन	गो० बा० स० 8/1
ततषिन	परचा ह्वै तौ ततषिन निपजै	गो० बा० ग्या० ति० 8
अंति कालि	अंति कालि होयगी भारी	गो० बा० स० 216/2
आज	तेहू बंभण दिन गिणउ आज	बी० रा० 38/4
ततषिणि	ततषिणि अभी छइ राजदुवारि	बी० रा० 3/3
अबहुँ	अबहुँ न आइक त्रिभुवन धणी	ना० 218
छिनछिन	छिन-छिन जात न लागै बार	ना० 166
नित नित	नित नित दुखिये काने	फ० श्लोक 88
अजौ	तू अजौ न पतीणायौ	फ० श्लोक 74
अजु	कबु आवही अजु	फ० श्लोक 70
काल्ह	काल्ह ही उलगाणउ हुइ गम करउं	बी० रा० 38/3
अंत	अंत डढ्ढइ डर डरयउ	पृ० रा० 3/32
तषिन	पल्लाणि अस्स तषिन	पृ० रा० 3/4

ख - अवधिवाचक - (सर्वनाम मूलक)

जब लग	जब लग सिध दुर्लभ जोग	गो० बा० स 188/2
जावत	जावत प्रिथमी तावत कंध	गो० बा० स० 49/2
तेतलइ	तेतलइ ल्यउंगी म्हाकउ प्रीय समझावि	बी० रा० 55/4
जां लगि	गंग जमुन जां लगि बहइ नीर	बी० रा 103/4

जब लग्गि	जब लग्गि गहिहि चहुआन चाहि	पृ0 रा0 2/3
यावत्	यावत् चंद दिवाकर	पृ0 रा0 6/29

{संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक}

सदा	रिजक रोजी सदा हुजूर	गो0 बा0 स0 159/2
निसदिन	निसदिन आरम्भ पचि पचि मरै	गो0 बा0 सं0 134/2
नितु	सीस तिलक नितु नवइ रे विहाण	बी0रा0 95/6
सदा	जिहि हर सिद्ध सदा वर पायउ	पृ0 रा0 5/1
निति	निति वर सबल रिपु	पृ0 रा0 2/9

ग- पौनः पुन्यवाचक - { सर्वनाम मूलक }

इणी परि	इणी परि चैत्र जावो	गो0 बा प0 31
उहि बार	पंड भारथ्थ उहि बार सज्जी	पृ0 रा0 4/22

{संज्ञा, क्रिया, विशेषण मूलक }

तीनि बर	बरस दिन मै तीनि बर काया पलटिबा	गो0 बा0 स0 92/2
एक सरां	एक सरां घरि आविज्यो	बी0 रा0 93/3
दु बार	करण डाहल्ल दुबार बांध्यउ	पृ0रा05/13
पुनर	पुनर जनमेजय ते जानि जग्गे	पृ0रा0 4/20

{संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक }

पुनिर	पुनिर गिर पड़सै	गो0 बा0 प0 40
फिर	देव सतावौ तू फिर आउ	गो0 बा0 स0 126/7
पुनरपि	पुनरपि जनम न आऊँगा	ना0 99

2- स्थान वाचक क्रिया विशेषण - (सर्वनाम मूलक)

जहियां	आसा करि मन पइये जहियां	ना० 123
जहां	जहां अनंत सिधा मिलि आरति गाइ	गो० बा० प० 61
तहां	सुनिमंडल मे तहां नीझर झरिया	गो० बा० स० 55/2
कहां	कहां भ्रमै रे भाइ	गो० बा० स० 163/2
इहां	इहां ही रचिले तीनि त्रिलोक	गो० बा० स० 3/1
तटइ	तटइ चीटीय न आवइ न चालए बार	बी० रा० 68/6
जठइ	जठइ मानिजइ बलद नइ हल बहइ गाइ	बी० रा० 100/2
इत्त	सु इत्त चंद दरबार	पृ० रा० 5/3
कहां	कहहुं कहां कयमास	पृ० रा० 3/21
यतो	यतो नीरे ततो नालिनी	पृ० रा० 7/24
जॉ	फरीदा जॉ लौ ना नेह कर	फ० श्लोक 11

(संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक)

पीछै	आगे पीछै जाना ही जाना	ना० 122
पीछै	पीठि पीछै घाव यतनां	गो० बा० स० 210/2
अपूठौ	ज्यूं उलटि अपूठौ आंणि	गो० बा० स० 234/2
दूरि	सा क्यउं दूरि थी मेल्हियइ	बी० रा० 92/3
पासि	जाणि करि बाइठी छइ प्रीयतणं पासि	बी० रा० 116/6
अग्गइ	कर पग्ग मग्ग अग्गइ सुवार	पृ० रा० 2/10
समीपनि	भूषन सोभ समीपनि	पृ० रा० 7/23
पिच्छल	फरीदा पिच्छल रात न जाणियौ	फ० श्लोक 107

3- परिमाण वाचक क्रिया विशेषण

नामदेव, गोरख बानी, बीसल देव रास तथा पृथ्वीराज रासो आदि ग्रंथो

प्रयुक्त हुए क्रिया विशेषण पदों के आधार पर इसके निम्नलिखित भेद बनते हैं -

क- अधिकता बोधक - (सर्वनाम मूलक)

सरब	जिभ्या जीती जिन जीत्या सरब	गो बा० स० 219/2
सहु	जल थल महीयल सहु भरया नीर	बी० रा० 77/2
सरब	एक ही अक्षर सरब विणास	बी० रा० 5/6
सयल	जित्तिया सयल हय बल प्रमान	पृ० रा० 2/1
सब	जित्तिया राउ सब सिंधु आर	पृ० रा० 2/3

(संज्ञा, क्रिया, विशेषण मूलक)

बहु	कैसे तिरत बहु कुटिल मरयौ	ना० 43
गुरूय	भृंगी सुपंति गुन गुरूय गाजि	पृ० रा० 2/5
पंखिआं	पंखिआं मखिआ नई बहिन	फ० 70

(संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक)

पूरा	बैसंत पूरा रमंति सूरा	गो० बा० स० 183/1

ख- न्यूनता बोधक- (सर्वनाम मूलक)

कछु	काया तै कछु अगम बतावै ताकी मूढ़ माई	गो० बा० स० 224/2
जु कछु	जु कछु भुम्मि पर गिद्द	पृ० रा० 12/10

(संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक)

थोड़ा	थोड़ा बोलै थोड़ा खाइ	गो० बा० स० 32/1
रंचउ	जउ सरसइ अरू जानहु रंचउ	पृ० रा० 5/6
बहु अरप	जाय मुनिक न बहु अरप	पृ० रा० 12/40

ग- तुलनात्मक (सर्वनाम मूलक)

सरबा	सरबा रे सरवा त्रिभुवन ते गरवा	गो० बा० प० 50
इस उप्पर	इहि उप्परि कहा करहि कवि	पृ० रा० 12/35

4- रीति वाचक क्रिया विशेषण

नामदेव, फरीद, गोरख बानी, बीसलदेव रास और पृथ्वी राज रासो

में रीति वाचक क्रिया विशेषण के निम्नलिखित प्रकार मिलते हैं।

क- प्रकार बोधक (सर्वनाम मूलक)

जथा	पहुप मैध्य जथा बास	गो० बा० म० गो०बो०50
तथा	देही मधे तथा देवता	गो० बा० म० गो० बो० 50
एण	एण सतगुरि अम्हे परणाव्या	गो० बा० प० 17
यूं	यूं मन हुवा थीरं	गो० बा० स०,67/2
क्यूंकरि	क्यूंकरि पाकै क्यूंकरि सीझै	गो० बा० स० 156/2
जिम	अरजन जिम धण करइ सिंगार	बी०रा० 122/2
	जिम के अतिरिक्त "जिउं" 52/3, जिसी 113/3 रूप मिलते हैं। बी० रा०	
किम	रतन क्योलइ किम पाडइ भीष	बी० रा० 47/2
इम	अंचल ग्रहि धण इम कहइ	बी० रा० 42/3
तिउ	..हउं रि कहउं बीरा तिउ रि कहेसि	बी० रा० 93/2
तिम	पंडिया तिम कहेज्यों जिम प्रियःन रिसाइ	बी० रा० 93/2
किम	असमथ्य सेव किम भूमि खाइ	पृ० रा० 2/3
तिम	जिम तिम संकर सिर धुन्यउ	पृ० रा० 8/24
जिहि विधि	ढिल्लय पति जिहि विधि रहइ	पृ० रा० 5/15
जिउं	जिउं सूर तेज तुच्छत जल मीनह	पृ० रा० 2/28

(संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक)

बहु भांति	एक पुरिष बहु भांति नारी	गो० बा० आ० बो०
विणि	विणि बैसंदर ज्योति बलत है	गो० बा० स० 139/1
हबकि	हबकि न बोलिबा	गो० बा० स० 27/1
निरंतरि	अंतर पवना रहै निरंतरि	गो० बा० स० 130/1
क्यूंकरि	बिरधि थै क्यूंकरि होइबा बाल	गो० बा० स० 86/1

किउ	अभोय मेल्हि किउ चालियउ	बी0 रा0 36/ 3
काइं	काइं सिरजी उलगाणारी नारि	बी0 रा0 3/5
क्यउं	क्यउं उच्चरिय भिन्न रस.एनम्	पृ0 रा0 2/16
किन	जो थिर रहइ सु कहहुं किन	पृ0 रा0 2/21
ज्यों	ज्यों पंडित वेद भणै रे	ना0 168

ङ·– निषेध वाचक {अव्यय}

न   मन मे रहिणा भेद न कहिणां   गो0 बा0 स0 63/1

म प0 1, मति प0 22, नहीं 43/1,   ”

नाही 151/1, ना 104/2, नी 269/1,   ”

जिनि न0 बो0 आदि ।   ”

यहां पर निषेध वाचक क्रिया विशेषण संज्ञा के रूप मे प्रयुक्त हुआ है –

निषेद पढिलै संतवेद । कारिलै विधि विषेद   गो0 बा0 प0 33

कइ धण धारइ हियइ न रामाइ   बी0 रा0 46/4

नहीं 13/6, नहु 47/3, नवि 45/3   ”

नू 69/5, म 29/1, मत 61/7   ”

बोलउ न वयण प्रथीराज तांहि   पृ0 रा0 2/3

नहीं 2/1, नहु 2/2, नहि 3/15,   ”

नि 3/32, नधि 3/41, नह 12/45,   ”

मम 3/36, मां 9/12, जिनि 5/48   ”

नाही 76, ना 32, न राग सूही 1/6 नु 28   फरीद

नकार आदि न के ही रूप हैं जो ग्रंथों में नहीं

के अर्थ मे प्रयुक्त हैं ।

च- अवधारण बोधक (सर्वनाम मूलक)

त	लभ त कूडा नेह	फ0 17
त	नग्री जाउं त माया	गो0 बा0 स0 30/1
ज	सुंनि ज माई सुनि ज बाप	गो0 बा0 स0 231/1
तो	बन खंड जाउं तो षुध्या व्यापै	गो0 बा0 स0 30/1
तउ	बरस दिन रहूं तउ धारडी आंण	बी0 रा0 54/5
तु	विग्गरइ तु बहु विधि हसइ लोग	पृ0 रा0 2/3
स	देवहि अवर स भाउ	पृ0 रा0 2/12
जत्तह सा	जीवन जत्तह वयनु	पृ0 रा0 2/21
सहजि	सहजि सुनि गुड मेला	ना0 65

अव्यय

हि	तू हि बकरी काटी	ना0 193
ही	कठौती ही गंगा	गो0 बा0 स0 153/1
भी	षाये भी मरिये अणषाये भी मरिये	गो0 बा0 स0 146/1
ही	काल्ह ही उलगाणउ हुइ गम करउ	बी0 रा0 38/3
एव	संवादेव विनोदेव देव देवेंन रक्षते	पृ0 रा0 2/25
अपि	देयोडपि रक्षा करे	पृ0 रा0 3/6
ही	धीर ही सुआंन षडिही	पृ0 रा0 3/6
भी	सिर भी मिट्टी खाद	फ0 श्लोक 29

छ- कारण वाचक (सर्वनाम मूलक)

ऐसा,	दास, नामदेव को ऐसा ठाकुर	ना0 168
तातै	तातै गोरष भांग न षाई	गो0 बा0 स0 208/1

§संज्ञा, क्रिया, क्रिया विशेषण मूलक§

काहे	काहे भूलत हौ अभिमान	गो0 बा0 प0 14
क्यों	तामें तोहि क्यों आवे हाँसा	ना0 17
क्त	जीवन जाई जनम क्त हारौं	ना0 34

संयुक्त क्रिया विशेषण

खिचि खिचि	खिचि खिचि लागी नौ नौ कली	गो0 बा0 स0 203/2
जुगि जुगि	जरणा जोगी जुगि जुगि जीवै	गो0 बा0 स0 252/1
जोउ जोउ	जोउ जोउ जांपं सुजाण	गो0 बा0 प0 17
हलवइ हलवइ	हलवइ हलवइ पग ठवइ	बी0 रा0 99/3
झनंझनं	रणंकि झंकि नूपुरं बुलंति जे झनझनं	पृ0 रा0 5/38
छिन छिन	छिन छिन जात न लागै बार	ना0 166

अन्य अव्यय

सूनां	संसार सूनां मरै	गो0 बा0 प0 5
पण	हुं पण आवसु रावलइ साथि	बी0 रा0 40/2
सूने	मुरे मोरिया सब्ब भये जात सूने	पृ0 रा0 11/12

2- संबंध सूचक अव्यय

जो अव्यय संज्ञा § अथवा संज्ञा के समान उपयोग में आने वाले शब्द § के बहुधा पीछे आकर उसका संबंध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ मिलाता है उसे संबंध सूचक कहते है ।[1]

1- हिन्दी व्याकरण - पंडित कामता प्रसाद गुरु - पृ0 132-33

क- काल वाचक संबंध सूचक अव्यय

आगै	यान गुरु का आगै ही होता	गो० बा० स० 131/2
तब	तब लूटिलै आपै भंडार	गो० बा० स० 77/2
पाछइ	आकुली बोलि पाछइ पछिताइ	बी० रा० 51/1
पहिलइ	पहिलइ दिवसि तउ महतत निवट्टिया	पृ० रा० 7/20
तच्छु	तच्छु कवि उच्चरिउ	पृ० रा० 3/43

ख- स्थान वाचक संबंध सूचक

अंदर	सबर अंदर सावरी	फ० श्लोक 116
बिचि	अरध उरध बिचि धरी उठाई	गो० बा० स० 78/1
अग्रे	दृष्टि अग्रे दृष्टि लुकाइबा	गो० बा० स० 75/1
तहां	सुनि मंडल तहां नीझर झरिगा	गो० बा० स० 55/2
तलि	जीवता कै तलि मूवा पिछायबा	गो० बा० स० 193/2
भीतरिये	गुरु देव स्वयं सरीर भीतरिये	गो० बा० प० 9
पासि	जापि कोर बइठी छइ प्रीयतर्ण पासि	बी० रा० 116/6
ऊपर	कीडी ऊपर कटकी किसी	बी० रा० 36/3
मझ्झ	मित्त महोदधि मझ्झ दिसंत ग्रसंत तम	पृ० रा० 7/22
दूर	तिनि दूर दूत जइ कहिग वयन	पृ० रा० 2/3
लग्ग	मीच लग्ग निअ पायि	पृ० रा० 8/6
तर	कष्ष तर चुकक्उ	पृ० रा० 3/27
मंझि	फरीदा भूमि रंगावली मंझि विसूलाबाग	फ० श्लोक 83

ग- दिशा वाचक संबंध सूचक अव्यय

वार न पार	नाथ कथै अगोचर वाणी ताका वार न पारं	गो० बा० स० 263/3

पार	जापि कर उतरी समंद कउ पार	बी0 रा0 121/2
तकु	चाहि गहउं चहुआन तकु	पृ0 रा0 2/27
तनु	काम मुच्छि कयमास तनु दिठ्ठि विलग्गी तास	पृ0 रा0 3/3

घ- साधन वाचक संबंध सूचक अव्यय

मिस	सकति अहैडै मिस रिध, कौस बस क्यूं बागो	गो0 बा0 स0 268/1
मिसि	ऊलग के मिसि गरम करउ	बी0 रा0 35/5
सउं	समुनंतरि कवि चंद सउं सरसइ वछि सु आय	पृ0 रा0 3/14

ड·- हेतु वाचक संबंध सूचक अव्यय

कारणि	आछै सैं रहै जु वा । ता कारणि अनंत सिध जोगेश्वर हूवा	गो0 बा0 स0 3/2
कारणि	त्रिय कारणि राम बांधियउ सेत	बी0 रा0 87/8
काज	कित्ति काज त्रैलोक दिन	पृ0 रा0 2/3
लउ	अमु पुछ्छइ लउ दुत्ति पठावइ	पृ0 रा0 6/12

च- पार्थक्य वाचक संबंध सूचक अव्यय

तइं	इम परउ अयास अवास तइं	पृ0 रा0 3/11

छ- व्यतिरेक वाचक संबंध सूचक अव्यय

हींण	बोलिये हींण तंत ते चेला	गो0 बा0 स0 161/1
विण	प्रिय विण जीविजइ किसइ अधारि	बी0 रा0 72/2

बिनु — सु जोविष गति उपाय बिनु नहि देष्यउं — पृ० रा० 3/15

ज- सादृश्य वाचक संबंध सूचक अव्यय

सरीषा	ग्यांन सरीषा गुरु ने मिलिया चित सरीषा चेला	गो० बा० स० 189/1
समउ	पुरुष समउ निगुणी नहीय संसार	बी० रा० 64/6
जोग	कलि मझिझ जग्गु को करण जोग	पृ० रा० 2/3
प्रकार	रतन जि किरन प्रकार	पृ० रा 4/9

झ- विरोध वाचक संबंध सूचक अव्यय

विपरीत	भई विपरीत गति	पृ० रा० 9/8

ञ- सहचार वाचक संबंध सूचक अव्यय

सहेती	बास सहेती सब जग बास्या, स्वाद सहेता मीठा	गो० बा० स० 227/1
साथि	हूं पण आवसुं रावलइ साथि	बी० रा० 40/2
संग	सइंवरइ संग अरु जग्ग काज	पृ० रा० 2/3
सहेता	कौनौ जन परिवार सहेता	ना० 23

ट- संग्रह वाचक संबंध सूचक अव्यय

अनिअं	सिंगिनि सु अनिअं	पृ० रा० 12/13

3- समुच्चय बोधक अव्यय

जो अव्यय (क्रिया की विशेषता न बताकर) एक वाक्य का संबंध दूसरे वाक्य से मिलाता है, उसे समुच्चय बोधक कहते है ।1

1- हिन्दी व्याकरण पं० कामता प्रसाद गुरु - पृ० 143.

समुच्चय बोधक के दो भेद होते है -

1- समानाधिकरण 2- व्याधिकरण

वैयाकरणों के इन भेदों के भी अनेक उपभेद किये गये है ।

1- समानाधिकरण

क- सयोजक

फुनि	फुनि मुनि वरनि धर्म मति चोथी	ना0 198
अरु	बोल्या अरु लाधा	गो0 बा0 स0
अरु	किन्हां रे उडीसउ अरु जगन्नाथ	बी0 रा0 30/4
अनइ	डाबी देवी अनइ दाहिणी मात	बी0 रा0 66/6
सु	कलि अच्छि नहीं अर्जुन सु भीव	पृ0 रा0 2/1
होर	जिन मनु होर मुख होर	फा0 आसा महला

ख- विभाजक

भावै	भावै तो गई भावै मति गावै राम	ना0 171
सोजे	जोगी सो जे मन जोगवै	गो0 बा0 स0 102/1
कि	जापि कि सागर उलंद्यउ	बी0 रा0 66/8
कइ	कइ लेष मोकलइ कइ मिलइ नाह	बी0 रा0 114/3
अथवा	अन्य प्राणेडथवा प्राणे प्राणेश	पृ0 रा0 2/25

दिल्लीश्वर:

कि	नर कि देव	पृ0 रा0 6/9
तां	जे जाल न डला तां थोड़ा मरी	फ0 श्लोक 6

ग- परिणाम दर्शक

सु- एह चरित्र कह लग्गि कहउं सु चलहु संदेह दुआर पृ0 रा0 4/21

घ- विरोध दर्शक

पै	पै र जोड़ नै एहा पुरिष पधार्या	गो0 बा0 प0 4
पै	रमना तो पै मांगू दान	ना0 177

2- व्याधिकरण

क- कारण वाचक

ताथैं	आवै संगै जाइ अकेला ताथैं गोरष रमै रमेला	गो बा0 प0 52
तउ	प्रिय प्रथीराज रिपु किअ तउ विपरित कीन विरचि	पृ0 रा0 2/8

ख- उद्देश्य वाचक

जु	चाहि गहउं चहुआन तकु जु मिट्टइ वाला वास	पृ0 रा0 2/27

ग- संकेत वाचक

जे	तन मन सूं जे परचा नाही	गो0 बा0 प0 22
जउ	जउ रे तू आज न चालियउ तउ घण हियडलउ फूटि मरेसि	बी0 रा0 105/5
जो	लहु लोह अब्ब जो लहुं अयान	पृ0 रा 2/1
जा	फरीदा जा तू खटल बेला	फ0 श्लोक 11

घ- स्वरूप वाचक

मानै	निसपति जोगी जानिबा कैसा अगनी पांणी लोहा मानै जैसा	गो0 बा0 स0 139

जाणे	जाणे हियडइ हरिणी हणी	बी० रा० 63/5
मनु	मनु सज्जिआ बंभ केलास बीय	पृ० रा० 2/3

4- विस्मयादि बोधक

जिन अव्ययों का संबंध वाक्य से नहीं रहता, जो वक्ता केवल हर्ष शोकादि भाव सूचित करते हैं उन्हें विसमयादि बोधक अव्यय कहते है ।[1]

सम्बोधन बोधक

रे	गोरष कहै सुणौ रे अवधू	गो० बा० स० 140/1
हो	ले राह चीन्हो हो काजी मुलां	गो० बा० स० 14/2
बाबलि	बाबलि । होई सो सहु वाले	क० रागसूही 9/1
अहो	कुसल कुसल अहो देवता	बी० रा० 103/3
हे	मागि हे हिरणी मनह विचारि	बी० रा० 32/4
हो	गरब म करि हो सइंभरि वाल	बी० रा० 29/1
अहो	अहो चंद वरदाई कहावहु	पृ० रा० 5/9
रे	रे क्षत्रिय कर पग गहु न	पृ० रा० 11/18
हो	सुनउ सबै सामंत हो	पृ० रा० 6/1

हर्ष बोधक

हयौ हयौ	हयौ हयौ मृगलौ बेधियौ बाण	गो० बा० प० 27
धनि धनि	धनि धनि हो बीसल चहुआण	बी० रा० 12/5
कुसल कुसल	कुसल कुसल अहो देवता	बी० रा० 103/3

1- हिन्दी व्याकरण - पं० कामता प्रसाद गुरु पृ० = 157.

आदर सूचक

जी-	तिहां हूं हो ज हिडोलन हारी जी	गो० बा० प० 7
जी-	राजा जी पूछइ मरम कइ बात	बी० रा० 61/6

अनुमोदन बोधक

भले	परस्व मंडि प्रथिराज कउ कहई	पृ० रा० 5/48

भले राजपूत सउ ।

सम्बोधन बोधक शब्दों का प्रयोग अधिक मिलता है ।

अध्याय - १
- - - - - - - - - - -
समास

समास

दो या दो से अधिक शब्दों के बीच से परस्पर सम्बन्ध बताने वाले शब्दों अथवा प्रत्ययों का लोप होने पर, उन दो या दो से अधिक शब्दों से जो एक स्वतन्त्र शब्द बनता है, उस शब्द को समासिक शब्द कहते हैं और उन दो या अधिक शब्दों का संयोग होता है, वह समास कहलाता है।[1]

गोरख-बानी, पृथ्वीराज रासो तथा बीसल देव रास आदि ग्रन्थों में प्राय: सभी प्रकार के समासों का प्रयोग मिलता है। उनमें से कुछ संस्कृत से प्रभावित हैं तो कुछ का रूप आधुनिक हिन्दी के निकट है। द्वन्द्व समासों की प्रधानता है। प्राय: दो ही पदों की समास योजना मिलती है -

उपर्युक्त ग्रन्थों में निम्नलिखित समास पद्धतियां मिलती हैं -

1- तत्पुरुष समास

2- कर्मधारय समास

3- द्विगु समास

4- द्वन्द्व समास

5- बहुव्रीहि समास

6- अव्ययी भाव समास

1- तत्पुरुष समास

जिस समास में दूसरा पद प्रधान होता है उसे तत्पुरुष समास कहते हैं।[2]

1- हिन्दी व्याकरण - पं0 कामता प्रसाद गुरु, पृ0 330

2- वही - - - - - - - - - - - - - - - पृ0 333

तत्पुरुष के मुख्य दो भेद हैं -

1- व्याधिकरण तत्पुरुष

2- समानाधिकरण "

सम्प्रदान तत्पुरुष के उदाहरण नहीं मिलते है। नञ् तत्पुरुष, प्रादि समास, अलुक समास की योजना भी मिलती है -

1- व्याधिकरण

क - कर्म तत्पुरुष समास

त्रियाजित	259/1	गो0 बा0 स0
जलहर	प0 18	गो0 बा0
व्रतधारी	प0 38	गो0 बा0
गदाधरो	32/3	बी0 रा0
विषहर	90/7	बी0 रा0
छत्रबंध	2/1	पृ0 रा0
पवनापिता	5/40	पृ0रा0

ख - करण तत्पुरुष समास

गहर गंभीर	12/1	गो0 बा0 स0
नष सष	217/1	गो0 बा0 स0
मइमत्त	9/4	बी0 रा0
मयमत्ता	8/2	पृ0 रा0
मदनावरे	2/20	पृ0 रा0

ग- अपादान तत्पुरुष समास

कुलहीण	4/2	बी0 रा0

जसहीन	8/28	पृ0 रा0
अंगिष्ठीन	12/37	पृ0 रा0

घ - संबंध तत्पुरुष समास

सिवपुरी	43/2	को0 बा0 स0
भेदानिभेद	66/1	गो0 बा0 स0
उमापती	प0 12	गो0 बा0
नरनाथ	113/1	बी0 रा0
मूंगफली	113/3	बी0 रा0
त्रिभुवनधणी	32/5	बी0 रा0
कनवज्जराउ	2/1	पृ0 रा0
गुरूदार	3/36	पृ0 रा0

ड·- अधिकरण तत्पुरुष समास

वनबास	44/2	बी0 रा0
धरारत	3/2	पृ0 रा0
जलगिरोष्ट	2/17	पृ0 रा0

नञ् तत्पुरुष

अभाव अथवा निषेधात्मक प्रत्यय से बना प्रातिपदिक नञ् तत्पुरुष कहलाता है -

अपरचै	216/2	गो0 बा0 स0
अप्रबल	ग्या0दी0बो0	गो0 बा0
निगुणी	52/2	बी0 रा0
निसंतान	65/2	बी0 रा0
अदेव	3/17	पृ0 रा0

अगनित	7/5	पृ0 रा0

प्रादि समास

जिस तत्पुरुष के प्रथम स्थान पर उपसर्ग आता है उसे संस्कृत व्याकरण में प्राति समास कहते हैं -

प्रतिबिम्ब	10/11	पृ0 रा0
सज्जन	4/11	पृ0 रा0

अलुक् समास

संखधुनि	5/11	पृ0 रा0
कलिक् कुल	6/19	पृ0 रा0

2- समानाधिकरण समास

समानाधिकरण तत्पुरुष के विग्रह में उसके दोनों शब्दों में एक ही विभक्ति लगती है। इसका प्रचलित नाम कर्मधारय है। कर्मधारय समास का ही एक उपभेद है।

2- कर्मधारय समास

कर्मधारय समास के दो प्रकार है -

1- विशेषता वाचक

2- उपमा वाचक

1-विशेषता वाचक कर्मधारय

क- विशेषण पूर्व पद

परमगति	78/2	गी0 बा0 स0
औगुंन	60/1	गी0 बा0 स0
सुदिन	56/3	बी0 रा0

विष कंद	3/24	पृ0 रा0
सगुन	4/3	पृ0 रा0

ख- <u>विशेषण उत्तर पद</u>

नावगर	ग्या0ति0 17	गो0 बा0
असिवर	8/17	पृ0 रा0

ग- <u>अव्यय पूर्व पद</u>

सुमति	16/2	गो0 बा0 स0
दुरगंध	167/2	गो0 बा0 स0
सुमंत	2/1	पृ0 रा0 रा0
कुव्वन	2/22	पृ0 रा0 रा0

घ - <u>मध्यम पद लोपी</u>

आनंदगान	2/5	पृ0 रा0
देव देवा	4/10	पृ0 रा0

2- <u>उपमा वाचक कर्मधारय</u>

जहां उपमान उपमेय भाव हो -

क- <u>उपमानोत्तर पद</u>

दांत दाडिम	113/6	बी0 रा0
मुख कमल	8/26	पृ0 रा0

ख- <u>उपमान पूर्व पद</u>

नलिनाभ	10/11	पृ0 रा0

ग- अवधारण पूर्व पद

सारंसार	12/1	गो० बा० स०
रघुपति राउ	7/7	पृ० रा०

3- द्विगु समास

त्रिलोक	3/1	गो० बा० स०
त्रिभुवन	प० 11	गो० बा०
त्रिभुवन	32/2	बी० रा०
त्रिवल्ली	4/12	पृ० रा०
त्रैलोक	2/3	पृ० रा०

4- द्वन्द्व समास

मात पिता	180/2	गो० बा० स०
जरामृत	प० 50	गो० बा०
देव दाण	229/1	गो० बा० स०
सुरनर	16/5	बी० रा०
कुलह कबाइ	11/2	बी० रा०
हय गय	2/1	पृ० रा०
राम रावन्न	7/6	पृ० रा०

5- बहुब्रीहि समास

संबंध बहुब्रीहि

निसनेही	195/2	गो० बा० स०
पूरणकाम	4/25	पृ० रा०
मतिनठ	12/30	पृ० रा०

सह बहुब्रीहि

बहुब्रीहि का एक भेद है -

सबल	2/10	पृ० रा०
सबद्दल	4/3	पृ० रा०

6- अव्ययी भाव समास

निरास	16/2	गो० बा० स०
सगुरा	23/2	गो० बा० स०
निसंक	8/16	पृ० रा०
अजानु	7/6	पृ० रा०
अविध्धा	2/3	पृ० रा०

अध्याय - 10

पुनरुक्ति

पुनरुक्ति

पुनरुक्त शब्द तीन प्रकार के हैं - पूर्ण पुनरुक्त, अपूर्ण पुनरुक्त और अनुकरण वाचक ।[1]

गोरख-बानी, बीसलदेव रास, पृथ्वीराज रासो आदि ग्रन्थों में तीनों प्रकार की पुनरुक्तियां प्रयुक्त हुई हैं । ये पुनरुक्त शब्द संज्ञा+ संज्ञा, सर्वनाम + सर्वनाम क्रिया + क्रिया, विशेषण + विशेषण, अव्यय + अव्यय, कृदन्त + कृदन्त आदि के संयोग से निर्मित हुए हैं -

1- पूर्ण पुनरुक्त

महंमद	महंमद	9/1	गो0 बा0 स0
घटि	घटि	170/1	गो0 बा0 स0
बनि	बनि	170/1	गो0 बा0 स0
पगि	पगि	121/6	बी0 रा0
प्रीय	प्रीय	76/5	बी0 रा0
अवासि	अवासि	4/17	पृ0 रा0
हंस	हंस	10/25	पृ0 रा0
कला	कला	5/38	पृ0 रा0

स्त्रीलिंग संज्ञा + पुलिंग संज्ञा

अरधंगी	अरधंग	पृ0 रा0 12/32

पृथ्वीराज रासो में एक स्थान पर हरि शब्द का प्रयोग चार बार हुआ है-

हरि + हिर + हरि + हरि 12/1

1- हिन्दी व्याकरण - पं0 कामता प्रसाद गुरु, पृ0 = 350

पूर्ण पुनरुक्त पदों का अतिशय प्रयोग हुआ है । पृ० रा०

सर्वनाम + सर्वनाम

को को	33/2	गो० बा० स०
उहि उहि	10/14	पृ० रा०
अप्पु अप्पु	3/28	पृ० रा०

विशेषण + विशेषण

बड़े बड़े	107/1	गो० बा० स०
विमल विमल	2/2	गो० बा० स०
थोड़ा थोड़ा	77/3	बी० रा०
एकु एकु	4/1	पृ० रा०
तुछ तुछ	4/24	पृ० रा०

क्रिया + क्रिया

मरि मरि	252/1	गो० बा० स०
चालू चालू	58/7	बी० रा०
पलटउ पलटउ	11/16	पृ० रा०
जयति जयति	6/17	पृ० रा०

क्रिया विशेषण + क्रिया विशेषण

फिरि फिरि	138/2	गो० बा० स०
बिच बिच	प्रा० सं० 13	गो० बा०
धनि धनि	12/7	बी० रा०
अरीत अरीत	8/24	पृ० रा०

तिल	तिल	8/28	पृ0 रा0
संग	संग	12/33	पृ0 रा0
बे	बे	12/30	पृ0 रा0

कृदन्त + कृदन्त

लड़ि	लड़ि	प0 29	गो0 बा0
भरि	भरि	प0 28	गो0 बा0
पैसत	पैसत	155/2	गो0 बा0 स0

गोरख - बानी में एक सबदी में पूर्वकालिक कृदन्त "पढि" "बढि" और "कथि" पद तीन बार प्रयुक्त हुए हैं -

पढ़ि	पढि	पढि	248/1	गो0 बा0 स0
बढि	बढि	बढि	248/1	"
कथि	कथि	कथि	"	"
हसि	हसि		59/6	बी0 रा0
कसि	कसि		4/25	पृ0 रा0
कहि	कहि		12/42	पृ0 रा0

2- अपूर्ण पुनरुक्ति

संज्ञा + संज्ञा

जप	तप	253/1	गो0 बा0 स0
अरस	परस	91/1	गो0 बा0 स0
जल	थल	77/2	बी0 रा0
अरथ	दरब	50/2	बी0 रा0
अयन	मयन	10/11	पृ0 रा0
चित	चित्ति	10/11	पृ0 रा0

विशेषण + विशेषण

अगम	सुगम	पृ० सं० 4	गो० बा०
रंगा	चंगा	41/1	गो० बा० स०
अवली	सवली	17/5	बी० रा०
अभिराम	रम्भ	2/5	पृ० रा०
चलु	चालु	5/7	पृ० रा०

संज्ञा - कृदन्त

बुद्धि	सुद्धि	2/13	पृ० रा०
गयण	प्रयण	3/4	पृ० रा०

कृदन्त + कृदन्त

रचि	पचि	2/27	पृ० रा०

3- अनुकरण वाचक पुनरुक्ति

संज्ञा शब्द

सारमसार	12/1	गो० बा० स०
बुद्धि बुद्धि	66/2	गो० बा० स०
ठामोठामि	24/1	बी० रा०
तलत्तल	5/38	पृ० रा०
डह डह	7/6	पृ० रा०

विशेषण शब्द

लड़बड़ा	152/2	गो० बा० स०
तलबल	166/2	गो० बा० स०

लटपटा	5/4	पृ0 रा0

क्रिया शब्द

थरहर	प0 47	गो0 बा0
झिलमिल	54/1	गो0 बा0 स0
फरहरइ	71/6	बी0 रा0
झिगमिगइ	58/3	बी0 रा0
झलमलइ	102/7	बी0 रा0
थरहर	2/28	पृ0 रा0
झननंकहि	8/9	पृ0 रा0

क्रिया विशेषण

क्यूकरि	156/2	गो0 बा0 स0
बरबर	3/38	पृ0 रा0

अध्याय - 11

उपसंहार

उपसंहार

आदिकाल के हिन्दी काव्य में गोरखबानी (गोरखनाथ), बीसलदेव रास (नरपति नाल्ह), पृथ्वीराज रासो (चंद वरदाई), नामदेव की हिन्दी पदावली और बाबा फरीद की बानियां प्रतिनिधि काव्य हैं। इन्हीं काव्य रचनाओं के आधार पर आलोच्य युग की भाषा का अध्ययन किया गया है।

आदिकालीन काव्य के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के उपरान्त निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य का आदिकाल भाषाई विविधता लिए हुए है, साथ ही इसमें आधुनिक मानक हिन्दी (खड़ी बोली) के विभिन्न रूप प्राप्त, होते हैं जो परम्परागत रूप से विकसित होते हुए आधुनिक युग में परिमार्जित हो गए। इस दृष्टि से आदिकालीन काव्य का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि इनके माध्यम से आधुनिक मानक हिन्दी की विकास प्रक्रिया को समझने में अत्यंत सहायता प्राप्त होती है।

प्रयोगावृत्तियों के आधार पर हम देखते है कि "गोरखबानी" में प्राचीन मानक हिन्दी (देहलवी) के रूप अधिक मिलते हैं साथ ही इसमें पूर्वी पंजाबी, पुरानी राजस्थानी, पूर्वी ब्रज, संस्कृत के भ्रष्ट रूप भी मिश्रित है। यह मिश्रण उस युग में और भी संभव था। अतः हम गोरखबानी की भाषा का क्षेत्र दिल्ली, मेरठ, हरियाणा, पूर्वी पंजाब आदि निश्चित कर सकते हैं, और उनकी भाषा को "उत्तरी हिन्दवी" की संज्ञा दे सकते है ; जिसे अमीर खुसरो ने देहलवी की संज्ञा दी।

बाबा फरीद की बानियों की भाषा वह अन्तर्प्रान्तीय भाषा है जो

पश्चिमी तथा पूर्वी पंजाब और तत्कालीन दिल्ली और अजमेर सूबे में प्रचलित थी । इनकी भाषा में मुल्तानी और पंजाबी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है । अतः फरीद की भाषा को पंजाबी मिश्रित प्राचीन देहलवी या प्राचीन खड़ीबोली या प्राचीन मानक हिन्दी कहा जा सकता है । नामदेव कृत दोहों में तत्कालीन देहलवी का वही रूप मिलता है जो महाराष्ट्र में प्रचलित था । "बीसलदेवरास" की भाषा प्राचीन खड़ी बोली और अपभ्रंश मिश्रित, प्राचीन राजस्थानी है ।

पृथ्वीराज रासो न इतिहास है न इतिहास काव्य । वह पृथ्वीराज के चरित्र को लेकर लिखा गया वीर काव्य है जिसमें पात्र ऐतिहासिक है किन्तु मुख्य घटनाएं काल्पनिक हैं । ऐतिहासिक मूल्य न होने पर भी साहित्यिक दृष्टि से यह अत्यन्त मूल्यवान है । इसमे वैदिक संस्कृत, पालि , पैशाची, मागधी, शौरसैनी, महाराष्ट्री, अपभ्रंश, प्राचीन राजस्थानी, प्राचीन गुजराती, ब्रज आदि की अनोखी खिचड़ी मिलती है। रासो के श्लोक छंद संस्कृत में है तथा गाहा छन्द, अपभ्रंश मिश्रित हिन्दी में है । शेष छंदो में भाषा संबंधी कोई रोक-टोक नहीं है । शब्दों को इच्छानुसार तोड़ा-मरोड़ा गया है जिससे कहीं- कहीं अर्थ समझने में कठिनाई होती है । व्याकरण के नियम हिन्दी के ही है प्रधानता पिंगल की है ।

आदिकालीन काव्य में आधुनिक भारतीय आर्य भाषा की प्रायः सभी ध्वनियों के कुछ नए रूप विकसित हो गये थे । अर्थात न्, म्, ल् के महाप्राण रूप क्रमशः न्ह, म्ह, ल्ह नए ध्वनिग्रामों के रूप में विकसित हो गये थे । जहां तक न्ह, म्ह के संस्वन का प्रश्न है यह आरंभिक माध्यमिक तथा अंतिम तीनों ही स्थितियों में प्रयुक्त हुए हैं । लेकिन इसके विपरीत ल्ह की ध्वनिग्रामिक स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है ।

काव्य में लगभग समस्त वही व्यंजन प्राप्त होते है जो कबीर से पूर्व संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश मे वर्तमान थे। काव्यों में स्पर्श व्यंजन ष तथा स्पर्श सघर्षी झ के पश्चात आने वाले क्रमशः ङ तथा ञ ध्वनियों की ध्वनिग्रामिक स्थिति स्पष्ट नहीं है। अधिकांश रूप में वर्णग्रमों के स्थान पर अनुस्वार ही प्रयुक्त हुए हैं फिर भी आलोच्य युग मे ये ध्वनियाँ संस्वन के रूप में अपना स्थान बनाई हुई हैं। ये दोनों संस्वन ध्वनियाँ केवल माध्यमिक स्थिति में ही प्रयुक्त हुई हैं आरंभिक तथा अंतिम स्थिति में इनका कोई स्थान नहीं है।

ह्रस्व स्वरों का आभास उच्चारण मात्र से होता है इसके लिये अलग से कोई लिपि चिन्ह नहीं मिलता है।

रूप रचना की दृष्टि से आदिकालीन काव्यों की भाषा अपभ्रंशोत्तर और उदयकालीन नव्य भारतीय आर्य भाषा की विशेषताओं से युक्त दिखाई देती है। पद प्रायः स्वरान्त ही मिलते हैं। प्रधानता आकारान्त और उकारान्त पदों की है। आदिकाल से वर्तमान युग तक संयोगात्मक और वियोगात्मक कारक पद्वति मिलती है। ज्यों - ज्यों हम प्राचीन काल से मध्यकाल और आधुनिक काल की ओर आते है त्यों- त्यों संयोगात्मक पद्वति का ह्रास और वियोगात्मक पद्वति का प्रयोग बढ़ता जाता है। अतः आदिकालीन काव्य में कारक रचना की संयोगी तथा वियोगी दोनों पद्वतियाँ मिलती हैं।

आदिकालीन काव्य में प्रत्यय प्रक्रिया के दृष्टिकोण से भाषा में व्युत्पादक एवं विभक्ति मूलक सभी प्रकार के प्रत्ययों का प्रयोग हुआ है मुख्य रूप से तत्सम, तद्भव उपसर्गों का प्रयोग हुआ है। कुछ विदेशी उपसर्ग भी प्राप्त होते हैं।

व्युत्पादक पर प्रत्यय के अन्तर्गत संज्ञा बोधक, विशेषण बोधक, सर्वनाम मूलक पर प्रत्यय प्राप्त होते हैं। आधुनिक मानक हिन्दी की भांति ही लघुता वाचक प्रत्यय भी मिलते हैं। इसमें इया, रा, टी प्रत्यय है।

सर्वनाम शब्दों के विकास वचन तथा कारक के अर्थ में आधुनिक मानक हिन्दी के समान ही हुआ है। केवल रूपात्मक आधार पर सर्वनामों का वचन निश्चित करना कठिन है। पुरूष वाचक उ0 पु0 सर्वनाम के लिए मै तथा हम के रूप बहुतायत से पाये जाते हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि "मै" तथा " हम " पदग्राम हैं। इनके अतिरिक्त हौं, हूँ, हउँ, हउं, तथा मइ, अमे रूप भी मिलते हैं। हौ का रूप बाबा फरीद में अधिक मिलता है। वर्तमान मानक हिन्दी का विकृत रूप " मुझ " हिन्दी की आदिम अवस्था से ही मिलने लगता है। इनके अतिरिक्त मो, मोहि, मुहु आदि रूप भी मिलते हैं। मोहि और मो ब्रज, राजस्थानी तथा पूर्वी दोनो के विशिष्ट पद है। मुजे, मुझे का की सहपद है, जिसमें महाप्राणत्व का लोप हो गया है। इस प्रकार कबीर से पूर्व मानक हिन्दी का "मुझ" पर्याप्त रूप में अन्र्तप्रादेशिक प्रयोग के रूप में आ गया था। उत्तम पुरूष मूल रूप बहुवचन में हम पदग्राम है सहपद के रूप मे हउं अम्हें और अमे रूप मिलते हैं जिसमे से अम्हें और अमे अपभ्रंश के अवशेष हैं, हम के प्रयोग अनेक बार एक वचन के लिए आदरार्थ प्रयुक्त हुए है। आदिकाल में सम्बन्धकारकीय रूपों में अत्यधिक विभिन्नता है सम्बन्ध सूचक "मेरा के अन्य रूप मेरे और स्त्रीलिंग में मेरी के अतिरिक्त मेर, मोरा, मोर, मेरो, माहरा, महारै, मुहु आदि रूप मिलते हैं। मध्यम पुरूष मूल रूप एकवचन तू, तु, तुम सामान्य रूप से मिलते हैं। तिधु पंजाबी का प्रभाव है जो केवल बाबा फरीद में मिलता है। तै, तइ, तुम्ह रूप भी मिलते हैं। मूल रूप बहुवचन के लिए तुम पदग्राम के रूप

में मिलता है । इसके अतिरिक्त तुम्ह, तुम्हें आदि अपभ्रंश काल के प्राचीन रूप जो आलोच्य युग में सह पदग्राम के रूप में प्रचलित हैं । विकृत रूप एकवचन के लिए तुझ पद ग्राम के रूप में मिलता है । इसके अतिरिक्त तुज, तोहि, तुहि, आदि मिलते हैं । विकृत रूप बहुवचन के जो रूप मिलते हैं वे एकवचन के लिए आदरार्थ प्रयुक्त हुए है । सम्बन्धकारकी रूप तेरा, तेरे, तेरो, तेरी, थारा, तुम्हरि, तुम्हारे, थारी आदि रूप मिलते हैं जिसमें थारा, थारी राजस्थानी रूप हैं ।

आदिकाल में निश्चयवाचक (निकटवर्ती) रूपों में यह का प्रचार कम और एह का प्रचार अधिक था । यहु का प्रयोग सर्वाधिक प्रयोग था लेकिन जो रूप हिन्दी प्रदेश में फैला वह मानक हिन्दी का "यह " ही है । गोरखबानी, नामदेव, फरीद, सभी में निश्चयवाचक (निकटवर्ती) मूल रूप बहुवचन के लिए केवल "ये" पदग्राम का प्रयोग मिलता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि एकवचन के रूप की अपेक्षा ब0 व0 के रूप का मानकीकरण पहले हो गया है । वि0 रू0 ए0 व0 के लिए इस, या, एण, इहु, इहि आदि रूप मिलते हैं । वि0 रू0 ब0 व0 के लिए इन, इन्नी, इम, इणि,एनम रूप मिलते हैं जिनमें इन का प्रयोग अधिक मिलता है । निश्चयवाचक (दूरवर्ती) मूल रूप ए0 व0 के लिए वोह, सोई, ता रूप मिलते हैं । मूल रूप ब0 व0 के लिए "ते" पदग्राम के रूप में और वे, वै ; वय सहपद के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । विकृत रूप ए0 व0 के लिए तिस, उस, तसि, सा, ता उहि आदि विभिन्न रूप मिलते हैं । उस का प्रयोग केवल फरीद में मिलता है । उसका प्रयोग केवल फरीद में मिलता है। "तिस" को पदग्राम कह सकते हैं । विकारी रूप के लिए तिन, तिन्हा, तिना, तिनि, उनि, तांहि आदि रूप मिलते हैं ।

सम्बन्धवाचक मू0 रू0 ए0 व0 के लिए " जो" का प्रयोग काव्य में

निर्विवाद रूप से मिलता है । इस पद ग्राम के अतिरिक्त जे, जै सहपद भी हैं । मू0 रू0 ब0 व0 के लिए " जो " पदग्राम और जे, जु, जे सहपद हैं । विकारी रूप ए0 व0 के लिए जिस, जिण, जिहि, जिम, जिउं आदि रूप मिलते हैं । वि0 रू0 ब0 व0 जिन का प्रयोग अधिक हुआ है इसी के सहपद के रूप में जिनि, जिननो, जिना, जेषै, जिहि, जिन्हा आदि का प्रयोग हुआ है । सह संबंधवाचक मू0 रू0 ए0 व0 के लिए प्राचीन मानक हिन्दी के प्राय: सभी कवियों ने नित्यसंबंधी के रूप में सो का प्रयोग किया है । वि0 रू0 ए0 व0 के लिए तिस का प्रयोग सर्वत्र मिलता है । विकारी रूप ब0 व0 के लिए नित्यसबंधी के रूप में तिन, तिनि, तिन्हा आदि रूप मिलते हैं ।

प्रश्नवाचक सर्वनाम मू0 रू0 ए0 व0 के लिए कौन पदग्राम के रूप में मिलता है सहपद के रूप में इसी के अपभ्रंश उच्चारण कवण, कवन, कउण, कवने, को, कह आदि सहपद मिलते हैं । विकृत रूप ए0 व0 के लिए "किस" का प्रयोग प्रचलित था " किस्सु" अपभ्रंश उच्चारण की ओर संकेत करता है । किन और काहु रूप भी मिलते हैं । वि0 रू0 के लिए किनु पदग्राम है । अनिश्चयवाचक मू0 रू0 के लिए कोई और कुछ पदग्राम मिलते हैं । निजवाचक सर्वनाम में " आप " के विभिन्न रूप मिलते हैं । स्त्रीलिंग बनाने के लिए "ई" प्रत्यय का प्रयोग किया गया है । सार्वनामिक विशेषण के मूल तथा यौगिक दोनों ही रूप मिलते हैं । गुण या प्रणाली बोधक यौगिक सार्वनामिक विशेषणों के अन्तर्गत ऐसा, कैसा, जैसा तथा तैसा के विभिन्न रूप मिलते हैं । परिमाण बोधक यौगिक सार्वनामिक विशेषणों में इतना, उतना तथा जितना के विभिन्न रूपान्तरित रूप प्राप्त होते हैं । इन रूपों के रूपान्तर में बोलियों का महत्वपूर्ण योगदान हैं । राजस्थानी अवधी तथा ब्रज के परम्परागत रूपों के कारण ही रूप परिवर्तन हुआ है ।

विशेषण पदों के रूप निर्माण की प्रकृति प्राय: विकसित हिन्दी की भाँति ही है। विशेषण के ब० व० होने पर भी विशेष्य प्राय: एक वचन में ही रहता है। आकारान्त विशेषण का रूप परिवर्तन संज्ञा की भाँति ही होता है अर्थात आकारान्त मूल रूप पुल्लिंग संज्ञा के साथ विशेषण का भी मूल रूप, बहुवचन संज्ञा के साथ विशेषण का बहुवचन, विकारी संज्ञा के साथ विशेषण का विकारी रूप तथा स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ विशेषण भी स्त्रीलिंग हो जाता है। शेष विशेषणों में लिंग, वचन, कारक सम्बन्धी कोई परिवर्तन नहीं होता। बोली विभिन्नता की दृष्टि से इनमें खड़ी, ब्रज, अवधी तथा पंजाबी आदि विशेषण मिलते हैं। प्रयोग की दृष्टि से विशेषणों के विशेष्य कभी पहले कभी बाद और कहीं-कहीं कुछ दूर पर प्रयुक्त हुए हैं। कुछ स्थलों पर विशेषण संज्ञा की भाँति प्रयुक्त हुआ है।

आदिकालीन काव्य में प्राय: सभी पूर्णांक बोधक संख्यावाचक विशेषण संस्कृत के समकक्ष उन्हीं विशेषण रूपों के रूपान्तर प्रतीत होते हैं। अपभ्रंश की कतिपय ध्वनि सम्बन्धी प्रवृत्तियों के कारण हिन्दी के पूर्णांक संख्याओं के रूप बहुत पहले ही बन चुके थे, अन्तर केवल इतना ही ज्ञात होता है कि अपभ्रंश के संख्यावाचक रूपों में जहां द्वित्त व्यंजनों की प्रधानता है वहां हिन्दी ने क्षतिपूरक दीर्घीकरण, समीकरण, स्वर-संधि आदि नियमों के अनुसार उन्हें अपने अनुकूल बना लिया है। अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि अपभ्रंश परंपरा से लेकर आधुनिक हिन्दी तक चले आ रहे है। अपूर्ण संख्यावाची विशेषण का प्रयोग बहुत कम हुआ है। गुना बोधक संख्या वाचक विशेषण काव्य में यदा कदा ही प्राप्त होते हैं। गुणवाची विशेषणों का बाहुल्य है।

क्रिया वाक्य की मुख्य संचालिका होने के कारण भाषा की रूप निर्धारि होती है। समस्त साहित्य की भाषा का निर्धारण भी क्रियागत विशेषताओं के

आधार पर किया जाता है । अत: निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि आधुनिक मानक हिन्दी (खड़ीबोली) के प्रारंभिक बीज अपभ्रंश काल से ही मिलने लगे थे, पूर्वी राजस्थानी, गुजराती, अवधी तथा ब्रज आदि का संयोग आदिकालीन साहित्य में क्रिया संरचना में भी है । क्रिया संरचना में सहायक क्रिया, कृदन्तीय तथा तिङ्गंत प्रत्ययों का प्रमुख स्थान है । आधुनिक मानक हिन्दी में होना, रहना, सकना आदि सहायक क्रियाएं है । रहना, भया सहायक धातुओं के रूप गोरखबानी, बाबा फरीद और नामदेव में बहुतायत से पाये जाते है । एक अन्य सहायक क्रिया " आछै " का प्रयोग भी मिलता है जो संस्कृत साहित्य की विशेषता है । 'अछ' वाले रूपों का प्रयोग बीसलदेव रास तथा पृथ्वीराज रासो में भी प्रयुक्त हुआ है । कुछ रूप सकना धातु के भी हैं । बीसलदेव रास में वर्तमानकाल अन्य पुरूष के लिए "छइ" का प्रयोग अधिक मिलता है जो डिंगल की विशेषता है । भूतकाल के लिये था, थे, थी का भी प्रयोग हुआ है । भविष्यत् काल में होइ का प्रयोग अधिक हुआ है ।

वर्तमान निश्चयार्थ उ0पु0 ए0 ब0 मे अऊं, अउं, उं, ऊं प्रत्यय प्रमुख हैं इनके अतिरिक्त औं, ओ, अहि भी मिलते हैं । उ0 पु0 ब0 व0 के रूप बहुत ही कम मिलते है । म0 पु0 ए0 व0 के लिए ऐ का प्रयोग अधिक हुआ है इनके अतिरिक्त औ, अइ, अउ, अहु, एहि, अहि, इ, ई आदि प्रत्यय भी प्राप्त होते हैं । ब0 व0 के रूप नहीं प्राप्त होते हैं । ब0 व0 के रूप नहीं प्राप्त होते हैं । अन्य पुरूष ए0 व0 के लिए ऐ प्रत्यय का प्रयोग गोरखबानी, नामदेव, फरीद में अधिक हुआ है पृथ्वीराज रासो तथा बीसलदेव रास में अइ प्रत्यय अधिक मिलते हैं । इनके अलावा ए, अई, आई, इ, अहि, आहि, य, आसि, इया आदि प्रत्यय भी प्राप्त होते है। उ0 पु0 ब0 व0 ऐं, एं, अइ, आई, अहि, इही, इया,

इ, दा आदि प्रत्यय मिलते हैं। वर्तमान आज्ञार्थक क्रियाएं अधिकांशतः मध्यम पुरूष में ही होती है। इसके लिये प्रधान प्रयुक्त प्रत्यय इ और हु है इनके अतिरिक्त अहु, अउ, औ, इलै, ए, शून्य, तथा आधुनिक मानक हिन्दी के ओ प्रत्यय भी मिलते हैं। वर्तमान संभावनार्थ रूप प्राचीन तिङ्गन्त रूपों के तद्भव रूप है अतः इसमें लिंग संबंधी परिवर्तन नहीं होता है। अर्थ तथा प्रयोग में भिन्नता होने पर भी रूप रचना की दृष्टि से वर्त0 नि0 तथा वर्तमान संभावनार्थ में कोई विशेष अंतर नहीं है। प्रयोगावृत्तियों की दृष्टि से वर्तमान संभावनार्थ रूपों की संख्या बहुत कम है।

समान्यतया मानक हिन्दी खड़ीबोली का एक वचन भूत निश्चयार्थ आकारान्त, ब्रज, राजस्थानी, बुन्देली, कन्नौजी आदि का ओकारान्त, अवधी का वा या वाकारान्त तथा भोजपुरी का इल या लकारान्त होता है। आदिकालीन काव्य का भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण करने पर हम देखते हैं कि रूप तो सभी प्राप्त होते हैं लेकिन गोरखबानी, तथा फरीद में आकारान्त रूपों की बहुलता है। इलै प्रत्यय नामदेव के पदों में अधिक पाया जाता है - भराइले, लाइले, अनीले। उ0 पु0 ए0 व0 के लिए इआ, अउ, इउ, अयउ, या यौ, इयौ, औ, ला अइयो आदि प्रत्यय प्राप्त होते हैं स्त्री लिंग के लिए ई प्रत्यय प्राप्त होता है जो अपभ्रंश कालीन साहित्य से ही प्रचलित था। अ0 पु0 ए0 व0 के लिए - आ, इया, ओइ, अउ, यौ, औ, इया, इयउ, इय, न्हा, आदि प्रत्यय प्रयुक्त हुए हैं। स्त्री लिंग के लिए ई, ये, इली, आई, न्ही आदि प्रत्ययों के प्रयोग मिलते हैं। अ0 पु0 ब0 व0 के लिए इया, ए, आ, ई, इया आदि प्रत्यय मिलते हैं। अपभ्रंश की उकार बहुलता का प्रभाव पृथ्वीराज रासो की भूतकालिक क्रियाओं में दिखता है। इग प्रत्यय युक्त भूतकालिक क्रिया पद - करिग, चलिग पृ0 रा0 की अपनी विशेषता है। भूत संभावनार्थ के रूप रूपात्मक दृष्टि से वर्तमानकालिक कृदन्त के ही रूप है। वाक्यात्मक स्तर पर यही रूप भूत संभावनार्थ का अर्थ प्रकट करते हैं।

भविष्य निश्चयार्थ बोधक रूपों की रचना दो प्रकार से हुई है - §1§ प्राचीन संस्कृत तिड्.गंत रूप ह-स विभक्त्यंत रूप §2§ मूल धातु या प्रातिपदिक में ग को जोड़कर कृदन्तीय रूपों में अथवा धातु या प्रातिपदिक में + ब् § तव्य § का अवशेषांश ब जोड़कर अन्य रूपों से। उ0 पु0 ए0 व0 के लिए गोरखबानी, नामदेव फरीद में गा वाले रूप की प्रधानता है पृथ्वीराज रासो में स तथा हा वाले रूपों का प्रयोग हुआ है। बीसलदेव रास में स्यू तथा स्यां का प्रयोग अधिक मिलता है। बा वाले रूप भी मिलते हैं। म0 पु0 ए0 व0 के लिए गा, गौ, गे, स्यौ, हिइ, सी आदि प्रत्यय प्रयुक्त हुए है। अ0 पु0 ए0 व0 के लिए गा,गो, सी, स्यइ, अहि, इहि, इवि, इसह, इला, इ प्रत्यय मिलते है। अ0 पु0 ब0 व0 - एं सी, इहिं, इहइं, इहै, गे आदि प्रत्यय प्रयुक्त हुए है। अपभ्रंश में स तथा ह वाले दोनों प्रत्यय मिलते हैं। आधुनिक खड़ी बोली का गा प्रत्यय इस युग की विशेषता है।

कृदन्त योजना आधुनिक मानक हिन्दी § खड़ीबोली § के सदृश्य ही है। वर्तमानकालिक कृदन्त में ता और अंत प्रत्यय का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। वर्तमान क्रियाद्योतक के लिए त वाले रूपों मे शून्य प्रत्यय तथा ए प्रत्यय प्रयुक्त करके कृदन्त रूप बनाये गए हैं। भूतकालिक कृदन्त का सर्वाधिक प्रयुक्त प्रत्यय आ और इय है। भूत क्रियाद्योतक प्रत्यय ए है इनका बहुत कम प्रयोग मिलता है। क्रियार्थक संज्ञा न, अन, अण से युक्त है कर्तृवाचक कृदन्त में ता, हार, हारी, प्रत्यय मिलते है। पूर्वकालिक कृदन्तीय रूपों की विविधता है तथा सभी रूप मिलते हैं। नामधातुओं के प्रयोग कम मिलते हैं। संयुक्त क्रियाओं का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है।

क्रिया विशेषण, संबंध सूचक, समुच्चय बोधक, तथा विस्मयादि बोधक चारों प्रकार के अव्यय अपने भेद उपभेदों सहित आलोच्य ग्रन्थ में मिलते हैं ।

कविता मे प्रायः सभी प्रकार के समासों के रूप देखने को मिलते हैं लेकिन प्रधानता तत्पुरूष, कर्मधारय और द्वन्द्व समासों की है । काव्यमेंशब्दों की पुनरुक्ति भी मिलती है । पृथ्वीराज रासो में इसके प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हैं । तत्सम, तद्भव शब्दों के अतिरिक्त विदेशी शब्दों के भी प्रयोग मिलते हैं ।

अंत में हम कह सकते है कि आदिकाल की काव्य रचनाओं में आधुनिक मानक हिन्दी के समस्त रूप सुरक्षित है लेकिन साथ ही अन्य प्रान्तीय बोलियों का प्रभाव बहुतायत से है ।

ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ

	रचना	रचयिता या सम्पादक
1-	गोरख-बानी	डाक्टर पीताम्बर बड़थ्वाल हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
2-	बीसलदेव रास	मूल लेखक - नरपति नाल्ह सम्पादक - डॉ माता प्रसाद गुप्त तथा श्री अगरचंद नाहटा हिन्दी परिषद् प्रकाशन इलाहाबाद, विश्वविद्यालय इलाहाबाद ।
3-	पृथ्वीराज रसउ	मूल लेखक - चंद वरदाई सम्पादक - डॉ माता प्रसाद गुप्त साहित्य मुद्रण, चिरगांव ﴾ झांसी ﴿ मे मुद्रित और साहित्य सदन, चिरगांव ﴾ झांसी ﴿ से प्रकाशित
4-	नामदेव की हिन्दी पदावली	डॉ० भगीरथ मिश्र एवं राजनारायण मौर्य
5-	बाबा फरीद की बानियां	

सहायक ग्रन्थ

1- आदिकाल की प्रामाणिक रचनाएं — डॉ गणपति चन्द्र गुप्त, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

2- मानक हिन्दी का ऐतिहासिक व्याकरण — डॉ माताबदल जायसवाल, महामति प्रकाशन, इलाहाबाद।

3- कबीर की भाषा — कैलाश प्रकाशन, संस्करण 1965

4- साहित्येतिहास — डॉ0 सुमनराजे

5- हिन्दी व्याकरण — पं0 कामता प्रसाद गुरु, नागरी प्रचारणी सभा, काशी

6- राउलवेल और उसकी भाषा — डॉ0 माता प्रसाद गुप्त

7- खालिकबारी — डॉ श्रीराम शर्मा

8- उक्ति-व्यक्ति प्रकरण — मुनि जिन विजय

9- हिन्दी साहित्य का आदिकाल — डॉ हजारी प्रसाद द्विवेदी

10- भाषा विज्ञान — डॉ0 भोला नाथ तिवारी

11- हिन्दी रासो काव्य परम्परा — डॉ0 सुमन राजे

12- अपभ्रंश भाषा का अध्ययन — वीरेन्द्र श्रीवास्तव

13- हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास — डॉ0 उदय नारायण तिवारी

14-	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ0 रामचन्द्र शुक्ल
15-	हिन्दी कारको का विकास	डॉ0 शिवनाथ
16-	रासो साहित्य विमर्श	डॉ0 माता प्रसाद गुप्त
17-	पृथ्वीराज रासो की भाषा	डॉ0 नामवर सिंह
18-	हिन्दी भाषा	डॉ0 भोला नाथ तिवारी
19-	हिन्दी के विकास मे अपभ्रंश का योग	डॉ0 नामवर सिंह
20-	गोरखनाथ की भाषा का अध्ययन	डॉ0 कमल सिंह
21-	गोरखनाथ और उनका युग	रागेय राघव
22-	बीसलदेव रास	तारक नाथ
23-	हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय